''पूर्वांचल के ग्राम-समाज के संदर्भ में शिवप्रसाद सिंह एवं रामदरश मिश्र के प्रमुख उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन''

(पी-एच०डी० उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध)

शोध-निर्देशक :
डॉ० वीरभारत तलवार

शोधकर्त्ता :
राम विनय शर्मा

भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली - 110067
1996

जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
NEW DELHI - 110067

दिनांक : 3.4.96

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री राम विनय शर्मा द्वारा प्रस्तुत "पूर्वांचल के ग्राम-समाज के संदर्भ में शिवप्रसाद सिंह एवं रामदरश मिश्र के प्रमुख उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन" शीर्षक शोध-प्रबन्ध में प्रयुक्त शोध-सामग्री का इस विश्वविद्यालय अथवा किसी अन्य विश्वविद्यालय में इसके पूर्व किसी भी प्रदेय उपाधि के लिए उपयोग नहीं किया गया है ।

यह शोध-प्रबन्ध श्री राम विनय शर्मा की मौलिक कृति है ।

[प्रो० मैनेजर पाण्डेय]
अध्यक्ष
भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली-110067.

[डॉ० वीर भारत तलवार]
शोध निर्देशक
भारतीय भाषा केन्द्र
भाषा संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली-110067.

प्राक्कथन

हिन्दी में ग्राम-केन्द्रित उपन्यासों की समृद्ध परम्परा तो प्रेमचंद से चली आ रही है । इन उपन्यासों में ग्राम-जीवन के विविध पक्षों को चित्रित किया गया है । इनमें ग्रामीणों की आशा-आकांक्षाओं को स्वर प्रदान किया गया है । इन उपन्यासों में गाँव के रीति-रिवाज, रहन-सहन खान-पान, पर्व-त्यौहार, शिक्षा एवं सामाजिक-राजनीतिक चेतना को अभिव्यक्ति मिली है । आज़ादी के बाद ग्रामीण जीवन में बहुत सारे परिवर्तन हुए । जमींदारी उन्मूलन इनमें प्रमुख था । इसके अलावा पंचायती-राज, भूमि-सुधार और कृषि-क्षेत्र के विकास से सम्बन्धित अनेक कार्यक्रमों की शुरुआत हुई । "अलग-अलग वैतरणी- शिवप्रसाद सिंह" और "जल टूटता हुआ- रामदरश मिश्र" में इन परिवर्तनों की झलक मिलती है ।

प्रस्तुत शोध-कार्य के अंतर्गत पूर्वांचल (भोजपुरी भाषी क्षेत्र) के ग्रामीण-समाज में आज़ादी के बाद होने वाले बदलावों का "अलग-अलग वैतरणी" और "जल टूटता हुआ" के संदर्भ में तुलनात्मक अध्ययन किया गया है । दोनों उपन्यासों का कथानक आजादी के कुछ वर्ष पहले और तकरीबन एक दशक पश्चात् के समयान्तराल को समेटे हुए है । इन उपन्यासों के अध्ययन से न सिर्फ़ आज़ादी के बाद गाँवों में आए परिवर्तनों का पता चलता है, वरन् यह भी ज्ञात होता है कि बदलाव की उम्मीदें और आकांक्षाएँ कैसी थीं और उनके मुकाबले में जो सचमुच का बदलाव आया वह उन उम्मीदों और आकांक्षाओं के कितने अनुकूल या प्रतिकूल रहा । ये उपन्यास आज़ादी के ठीक पहले की आशा-आकांक्षाओं और संघर्षों की झलक देने के अलावा आज़ादी के बाद ग्रामीण-समाज में हुए महत्वपूर्ण सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों तथा इनके परिणामों को भी उजागर करते हैं । इन समस्त परिवर्तनों ने पूर्वांचल के ग्रामीण परिवेश में जो नया परिदृश्य और परिस्थितियाँ उत्पन्न कीं, उसने एक प्रकार की नई संस्कृति, नए मानवीय सम्बन्धों एवं नए चरित्रों

को जन्म दिया ।

ग्रामांचल पर लिखे गए उपन्यासों को लेकर कई शोध-कार्य एवं स्वतंत्र अध्ययन प्रस्तुत किए गए हैं, जिनमें मुख्य हैं -- राधेश्याम कौशिक का "हिन्दी के आंचलिक उपन्यास - 1962", प्रकाश बाजपेयी का "हिन्दी के आंचलिक उपन्यास - 1964", आदर्श सक्सेना का "हिन्दी के आंचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पविधि - 1971", ह. के. कड़वे का "हिन्दी उपन्यासों में आंचलिकता की प्रवृत्ति", और ज्ञानचंद गुप्त का "आंचलिक उपन्यास - संवेदना और शिल्प" ।

उपर्युक्त अध्ययनों में आंचलिक उपन्यासकारों तथा उनकी कृतियों का सामान्य परिचय, आंचलिकता के स्वरूप का विवेचन, आंचलिकता का विकास आदि पक्षों का विवेचन - विश्लेषण किया गया है । पर इनमें तुलनात्मक पद्धति का अभाव है ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में कुल चार अध्याय हैं । पहला अध्याय - चरित्रों का तुलनात्मक अध्ययन है जिसमें ज़मींदार, कारिन्दे, धनी किसान, मध्यवर्गीय किसान, गरीब किसान, खेतिहर मज़दूर, दलित, स्त्रियाँ, युवा, बूढ़े एवं गाँव के शहर गए लोगों के चरित्र का अध्ययन किया गया है । इसमें इन वर्गों के आपसी सम्बन्धों में आए परिवर्तनों को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है । दूसरा अध्याय "राजनीतिक-आर्थिक बदलाव की प्रवृत्तियों और चेतना" का अध्ययन करताता है । इसके अंतर्गत सामंतवाद-विरोधी चेतना और संघर्ष, ग्राम-पंचायतों का स्वरूप और चुनाव, नई आर्थिक योजनाओं का क्रियान्वयन और प्रभाव, राजनीतिक विचारधाराओं, नए वर्गों और प्रवृत्तियों, ग्रामीण राजनीति एवं आर्थिक विकास की संभावनाओं की तलाश की गई है । तीसरे अध्याय "सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन और चेतना" में जाति प्रथा,

गुटबंदी, साम्प्रदायिकता, पारंपरिक मूल्य, विश्वास, प्रथाएँ, संस्कार, परम्परा और आधुनिकता की टकराहट, बदलती हुई चेतना और मानवीय सम्बन्ध तथा सामाजिक विकास एवं विकृतियों की चर्चा हुई है । चौथा अध्याय "पूर्वांचल की सामान्य दशा" पर केन्द्रित है । इसमें पूर्वी उत्तरप्रदेश के भोजपुरी-भाषी क्षेत्रोंकीसामान्य राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक दशा के बारे में उपन्यासकारों और समाजशास्त्रियों-अर्थशास्त्रियों के दृष्टिकोण का अध्ययन किया गया है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध आदरणीय गुरुवर डॉ. वीर भारत तलवार के निर्देशन में सम्पन्न हुआ । उनके स्नेह को भुलाना तो घोर कृतघ्नता होगी । शोध कार्य की रूप-रेखा बनाने से लेकर शोध-सम्बन्धी जटिल अवधारणाओं को स्पष्ट करने में उन्होंने जो सहायता प्रदान की, उसके लिए मैं हृदय से आभारी हूँ । प्रिय सखी राजकुमारी की प्रेरणा और उत्साहवर्द्धन को नहीं भुला सकता । शोध-प्रबन्ध को मूर्तरूप में देखने की उनकी प्रबल इच्छा रही है ।

शोध कार्य की लम्बी अवधि के दौरान परिवाजनों के स्नेह का मैं आजन्म ऋणी रहूँगा । पत्नी रजनी के त्याग और संयम तथा अनुज विश्राम के प्रेम और उत्साहवर्द्धन को याद करके मैं सचमुच रोमांचित हो उठता हूँ । विश्वविद्यालय के वरिष्ठ आचार्य एवं प्रसिद्ध समाजशास्त्री प्रो. योगेन्द्र सिंह के सुझावों का हृदय से सम्मान करता हूँ । शोध कार्य में अब्दुल क़लाम और रियाज़ुद्दीन अक़ील से जो सहयोग मिला, उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ ।

रामविनय शर्मा

-राम विनय शर्मा

अनुक्रम

पृष्ठ संख्या

प्राक्कथन

अध्याय एक — चरित्रों का तुलनात्मक अध्ययन 1 - 65

1. ज़मींदार
2. धनी किसान
3. मध्यवर्गीय किसान
4. ग़रीब किसान
5. खेतिहर मज़दूर एवं दलित
6. गाँव से शहर गए लोग
7. युवा-पीढ़ी
8. स्त्रियाँ
9. बूढ़े-बूढ़ियाँ

अध्याय दो — राजनीतिक-आर्थिक बदलाव की प्रवृत्तियाँ एवं चेतना 66 - 100

1. सामंत-विरोधी चेतना और संघर्ष
2. ग्राम-पंचायत और चुनाव
3. सामाजिक-आर्थिक योजनाओं का क्रियान्वयन और उनका प्रभाव
4. नए वर्ग और वर्गीय प्रवृत्तियाँ
5. ग्राम-राजनीति एवं आर्थिक विकास की संभावनाएँ

अध्याय तीन -- सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन
और चेतना 101 - 135

1. जाति-प्रथा एवं गुटबंदी
2. साम्प्रदायिकता
3. पारम्परिक मूल्य, विश्वास, प्रथाएँ और संस्कार
4. परम्परा और आधुनिकता की टकराहट : बदलती हुई चेतना और मानवीय सम्बन्ध
5. विकृतियाँ और विकास

अध्याय चार -- पूर्वांचल की सामान्य दशा 136 - 155

मूल्यांकन 156 - 161

संदर्भ-ग्रंथ सूची 162 - 164

प्रथम अध्याय

चरित्रों का तुलनात्मक अध्ययन

1. ज़मींदार
2. धनी किसान
3. मध्यवर्गीय किसान
4. गरीब किसान
5. खेतिहर मजदूर एवं दलित
6. गाँव से शहर गए लोग
7. युवा पीढ़ी
8. स्त्रियाँ
9. बूढ़े-बूढ़ियाँ

स्वतंत्रता के बाद ग्राम-जीवन में नवीन राजनीतिक-सामाजिक प्रवृत्तियों के साथ-साथ नए चरित्रों का प्रादुर्भाव हुआ । ग्रामीण-जीवन एवं कृषि व्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए । ज़मींदारी उन्मूलन, औद्योगीकरण, मध्यवर्ग के उदय एवं शहरीकरण की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण सामाजिक सम्बन्धों में बदलाव आया । हरिजनों एवं अन्य दलित समुदायों में आत्म-सम्मान की भावना जागृत हुई । स्त्रियों का शिक्षा-जगत में ज्यादा प्रवेश होने लगा । वे घर की दहलीज लाँघकर बाहरी दुनिया के निकट सम्पर्क में आईं । इस दौरान पारम्परिक सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों में ह्रास एवं नए मूल्यों एवं सम्बन्धों की तलाश शुरू हो जाती है । युवा जगत में भविष्य को लेकर एक प्रकार की अनिश्चितता एवं बेचैनी दिखाई देने लगती है । समाज में उथल-पुथल, ध्वंस और नवनिर्माण के स्वर सुनाई पड़ने लगते हैं । ऐसे में भला साहित्य कैसे मूकदर्शक बनकर रह सकता है, वह भी खासतौर से उपन्यास, जिसका मूल आधार ही सामाजिक सत्य का निरूपण करना है । ग्रामीण जीवन की विभिन्न समस्याओं एवं चुनौतियों को उपन्यासकारों ने लेखन का माध्यम बनाया है ।

1. ज़मींदार

आज़ादी के पहले गांवों में ज़मींदारों की महत्वपूर्ण भूमिका हुआ करती थी । वे ब्रिटिश सरकार के लिए जनता से लगान की वसूली करते थे । बदले में सरकार की तरफ से इन्हें अनेक सुविधाएँ प्राप्त होती थीं । अपने सुख के लिए ये जनता का शोषण करते थे । आज़ादी के बाद ज़मींदारी प्रथा समाप्त कर दी गई । इस तरह ज़मींदारों का प्रत्यक्ष प्रभुत्व समाप्त हो गया । पर ज़मींदारों ने अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा एवं आर्थिक प्रभुता प्राप्त करने के लिए सरकार द्वारा चलाई जा रही पंच-वर्षीय योजनाओं एवं ग्राम पंचायतों का भरपूर उपयोग किया । बहुत से ज़मींदार कांग्रेस पार्टी में घुसकर अपनी स्थिति मजबूत करने लगे ।

आज़ादी के बाद ज़मींदारों की स्थिति में काफी बदलाव आया । इस सिलसिले में अलग-अलग वैतरणी" में जैपाल सिंह और आसामियों के सम्बन्धों में आए बदलाव को रेखांकित किया जा सकता है । "ज़मींदारी की पुश्तैनी पुख्ता दीवारें एक हल्के धक्के से ही ज़मीन पर आ गईं । आसामियों ने खानदानी लाज-शरम छोड़कर ज़मींदार की छावनी से अपना रिश्ता तोड़ लिया । अब कभी दशहरे के मौके पर आसामियों की भीड़ जुहार करने नहीं आती न ही कभी छावनी के मुख्य द्वार पर रखा बड़ा-सा परात नज़राने के रुपयों से खनकता ही । अहीरों ने दही, दूध, कोइरियों ने साग-सब्जी, मल्लाहों ने मछलियाँ, जुलाहों ने मुरगी और गड़ेरियों ने सलामी में खस्सी देना एकदम बंद कर दिया ।"[1] इस तरह

---

1. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 22

जनता को शोषक ज़मींदार से मुक्ति मिली, दूसरी तरफ ज़मींदार का प्रभामंडल ध्वस्त हो गया ।

ज़मींदारी उन्मूलन के बाद ज़मींदारों के सामने अस्तित्व का संकट आकर खड़ा हो गया । करैता के ज़मींदार जैपाल सिंह ने इस बदलाव को भाँप लिया । वे नवीन सन्दर्भों में स्वयं को बदलने की कोशिश करते हैं । हालांकि "युग-युग का मांसाहारी बाघ शाकाहारी कैसे हो जाएगा ।"[2] यह एक समस्या थी, फिर भी जैपाल सिंह परिस्थितियों से समझौता कर लेते हैं । ग्राम-पंचायत चुनाव के मद्देनजर जैपाल सिंह गाँव के दलित समुदाय के नेता सुखदेव राम से समझौता कर अपने प्रबल प्रतिद्वन्द्वी सूरज सिंह को धराशायी करने की योजना बनाते हैं । सुखदेव राम उनके दरवाजे पर जब पहुँचते हैं तो जैपाल सिंह प्रेम छलकाते हुए कहते हैं, "बाहर क्यों खड़े हैं ? आइए-आइए सुखदेव-राम जी । अरे, आप वहाँ भीत में काहे खड़े हैं ? यहाँ आइए ।"[3] जमाने का मारा 'सुखदेवा' अब ज़मींदार के लिए "सुखदेव राम जी" हो गए थे । जैपाल सिंह तो अपना स्वार्थ साधने की गरज से सुखदेव राम का सहारा लेना चाहते हैं, उधर सुखदेव राम उनके दिए सम्मान के भार से दबे जा रहे थे । पहली बार जैपाल सिंह ने सुखदेव राम से आत्मीयता जताई, चारपाई पर बैठाया और कहा कि, "आइए भीतर दालान में कुछ निछद्दम बातें करनी हैं । वहीं ठीक रहेगा ।"[4] यानी एक तीर से दो निशाने लगाने हैं । सुखदेव राम ज़मींदार की चतुराई को क्या समझ पाते ।

---

2. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 69
3. -वही- 47
4. -वही- 47

गाँव के युवक विद्यालय के जीर्णोद्धार के लिए चंदा माँगने जैपाल सिंह के पास जाते हैं । वे युवाओं से नए ज़माने की तरफ इशारा करते हैं । अपने दुश्मन तुरजू सिंह की चाल समझ जाते हैं । तुरजू सिंह का ख्याल था कि लिस्ट में सबसे ऊपर नाम लिखवाने की खुशी में जैपाल सिंह से ज्यादा से ज्यादा पैसा वसूल किया जा सकता है, किंतु जैपाल सिंह ने लिस्ट में सबसे ऊपर अपना नाम लिखवाने के बाद एक सौ एक रूपया देते हुए कहा, "एक सौ एक रूपए, तुरजू सिंह से एक रूपया अधिक ।ताकि मेरा नाम सूची में सबसे ऊपर रहे और हरी बेटे की इच्छा पूरी हो ।"[5] ज़मींदार किस तरह दूसरों को मात देता था, इसकी स्पष्ट झलक यहाँ देखने को मिल जाती है । इसी हुनर से यह वर्ग न जाने कितनों को नाकाम कर दिया करता था । किंतु आज वह दलाल बन गया है । फूला (गाँव के ही एक व्यक्ति देवा द्वारा भगाकर लाई गई औरत, जिसे देवा मार डालता है, देवा एक अपराधी किस्म का आदमी है ।) की हत्या के सिलसिले में जैपाल सिंह सुखदेव राम से मिलकर दलाली करना चाहते हैं । सुखदेव राम को अपनी योजना का ब्यौरा देते हुए जैपाल सिंह कहते हैं, "मामला संगीन है तो आमदनी भी संगीन होगी । एक हजार से कम पर राजी मत होना । दो-तीन हजार से कम के गहने देवा के हाथ नहीं आए हैं, फिर खून का मामला है । एक हजार आसानी से दे देगा वह । उसमें से पाँच सौ से कम पर थानेदार राजी न होगा । आने तो दो कल । देखना चुटकी बजाते सब ठीक कर दूँगा ।"[6] यह जैपाल सिंह का लालची रूप है । आर्थिक स्थिति में लगातार होने वाली गिरावट की भरपाई के लिए वे यह रूप भी धारण कर लेते हैं । यानी मध्यस्थ बनकर देवा पर एहसान का बोझ लाद दें और रूपए भी कमा लें । ज़मींदार की कैसी दोहरी चाल है कि उसी देवा से पैसा

---

5. आलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 58
6. - वही - 59

लेकर उसी पर एहसान भी कर देना चाहते हैं । जैपाल सुखदेव राम को लेकर देवा के घर अपना जाल फैलाने जाते हैं । जाते ही उस पर बरस पड़ते हैं, "चुप करो । हम तुमको आज से नहीं जानते । रसरी की नकली फँसरी असली भेद छुपा न सकेगी । पुलिस के आते ही सारा भंडाफोड़ हो जाएगा, गाँव की बदनामी होगी वह अलग से । तुम्हारी तो इस बार खैर नहीं ही है ।"[7] जैपाल सिंह की इस धमकी के बाद देवा रास्ते पर आ ही गया । उसने जैपाल सिंह का प्रस्ताव मान लिया । अब समस्या थानेदार के मानने न मानने की रह जाती है, जिसके बारे में उन्हें पूरा विश्वास है कि थानेदार को आसानी से मना लेंगे । आखिर क्यों नहीं? ज़मींदारी के जमाने में तो थानेदार उनकी मुट्ठी में ही होता था । पर इस बार जब वे देवा की ओर से थानेदार के आगे निवेदन करते हैं कि, "अब आप ही देखें साहब, नेकी करते हाथ जलता है । कहाँ बेचारे ने रेल से कटने से उसकी जान बचाई । कहाँ वह उसी के घर में फाँसी डालकर मर गई । बेचारा गरीब आदमी अलानाहक आफत में फँस गया ।"[8] झूठी समवेदना जताने वाले ये वही जैपाल सिंह हैं जो देवा को छुड़ाने के लिए सौदेबाजी करते हैं । थानेदार के सामने उसकी गरीबी पर तरस खाते हैं । लेकिन थानेदार जैपाल सिंह के कहे पर ध्यान नहीं देता । जैपाल सिंह क्षोभ, अपमान और घृणा से भरकर कहते हैं, "नीच जात का यही हाल है । ऊँचे ओहदे पर पहुँच जाने से कहीं शराफत आ जाती है ? शराफत तो खानदानी चीज होती है । कहने लगा मरडर का केस है । अरे मरडर का केस न होता तो क्या चोरी-डकैती के केस के लिए हम तुम्हारी सिफारिश करते । नीच जात कहीं का ? खाएगा साला गच्चा । बड़े-बड़े कैरियर बनाने वाले आए और खिला गए ।"[9] यहाँ जैपाल का सामंती अभिमान

---

7. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 61
8. - वही - 61
9. - वही - 62

फुंफकारने लगता है । वे बेबस और लाचार दिखाई देते हैं । उन्हें दुहरा नुकसान उठाना पड़ता है । एक तो दलाली के पैसे नहीं मिल सके, दूसरे उनकी सामंती मनोवृत्ति को ठेस लगी । यही थानेदार कभी उनकी "हाँ में हाँ" मिलाया करते थे, ज़मींदारी टूटने के बाद उनकी बात सुनने को तैयार नहीं होते । यह और कुछ नहीं, परिस्थितियों में बदलाव का एक लक्षण है ।

जैपाल सिंह अपने दुश्मन से कभी सीधे नहीं टकराते । पंचायत-चुनाव के मौके पर बुद्धारथ सिंह (जैपाल का बड़ा बेटा) हरिया की बातों पर चिढ़ जाते हैं और मार-पीट के लिए तत्पर हो जाते हैं । ऐसे मौके पर जैपाल सिंह समझ-बूझ से काम लेते हैं । उनका कहना है कि, "लोग बोली उसी पर बोलते हैं जिससे खुलेआम टकराने की हिम्मत नहीं होती । दूसरी ओर ऐसे लोग बेवकूफी के कारण अपने मन की नाराजगी भी खोल देते हैं । ऐसों को ठीक से जान लेना चाहिए और इनसे खूब सोच-विचार कर बाद में निपटना चाहिए ।"[10] और वे हरेक समस्या को इसी चालाकी से सुलझा लेते हैं । जब जैपाल सिंह का सितारा बुलंदी पर था और चमारों ने उनका काम करने से मना कर दिया था तब भी जैपाल अपने शातिर दिमाग से बहुत बारीकी से काम लेते हैं । अपने लठैतों को ललकार कर चमारों को पिटवा देते हैं और लठैत चमार औरतों से बदसलूकी करते हैं, उन्हें मारते-पीटते भी हैं । जब चमार बचऊराम चौधुरी के नेतृत्व में अपनी फरियाद लेकर जैपाल सिंह के दरबार में हाजिर होते हैं तो उन्हें बीड़ी, सुर्ती, तम्बाकू खिला-पिलाकर उलझा देते हैं । वे दयाल से हँसते हुए कहते हैं -- "अरे दयाल महराज, कुछ धुआँ-धक्कड़ का इंतज़ाम भी किया है ? इतने लोग आए, कुछ खातिर-तवज्जह भी तो होनी चाहिए ।"[11] कहाँ तो चमार अपने अपमान का बदला लेने आए थे, परन्तु जाते-जाते चौधुरी

---

10. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 64
11. - वही - 422

बचऊराम ने उल्टे जैपाल के ही पाँव पकड़ लिए । ज़मींदार का एक यह चरित्र है जो ऊपर से शांत, संयत और गंभीर है जबकि उसके अंदर वही सामंती अहंकार, लालच और क्रूरताभरी हुई है । उधर "जल टूटता हुआ" का ज़मींदार महीप सिंह बिल्कुल अक्खड़ किस्म का आदमी है । सरे आम गालियाँ बकता है । छोटी-सी गलती पर नौकरों को पीट देता है । जगतपतिया ठीक वक्त पर काम करने नहीं आ पाता है तो महीप सिंह गालियाँ देने लगते हैं — "कहाँ था रे साला, आज घर का काम कौन करेगा तेरा बाप ।" रमपतिया साले को नौकरी पर भेज दिया और तू साला बहाना बनाए घर बैठा है ।"[12] जगतपतिया महीप सिंह का नौकर है । वह उनकी गालियों का विरोध करता है । उसका कहना है कि यदि रमपतिया कहीं नौकरी नहीं करेगा तो हम भूखे ही रह जाएँगे । क्योंकि महीप सिंह के यहाँ उन्हें भरपेट खाना भी तो नहीं मिल पाता । महीप सिंह जगपतिया की सच्ची किंतु कड़वी बातों से चिढ़ जाते हैं, "क्यों रे साले, मेरी नौकरी नहीं है ? बक-बक करेगा तो मार जूतों के हाड़ तोड़ दूँगा । चार बीघे खेत दिए हैं तो क्या मुफ्त दिए हैं ? खेत मेरा जोतेगा और नौकरी करने जाएगा अपने बाप की ।"[13] लेकिन सच्चाई यह है कि जगपतिया और रमपतिया दोनों दिन-रात महीप सिंह के यहाँ खटते हैं । उन्हें इतना मौका कहाँ मिल पाता है कि वे महीप सिंह के दिए हुए खेत में मेहनत से फसल उगाएँ । यदि कुछ होता भी है तो सारी फसल बाढ़ को भेंट हो जाती है । क्या महीप सिंह इस यथार्थ से अवगत नहीं हैं ? उन्हें सब कुछ मालूम है परन्तु वे अपने निहित स्वार्थों की बलि नहीं दे सकते । आखिर उनके सामंती संस्कारों का क्या होगा, जिनका आधार ही शोषण और अत्याचार है । उनका अभिजात संस्कार जगपतिया के प्रत्युत्तर को कैसे सहन कर लेता ? इसलिए वे जगपतिया को मारने लगते

---

12. जल टूटता हुआ — रामदरश मिश्र, पृ. 30
13. — वही —

हैं -- "बाबू साहब अपना गुस्सा नहीं रोक सके, जूता फेंक कर जगपतिया के सिर पर दे मारा और फिर लपक कर उसकी गरदन पकड़ ली और ताबड़-तोड़ लात-मुक्कों से उसे मारने लगे ।"[14] इस समय उनका चेहरा कितना वीभत्स हो जाता है । संवेदनशीलता नहीं रह जाती है और वे जानवरों की तरह व्यवहार करने लगते हैं । जगपतिया को पीटकर ढकेल देते हैं और गरजते हैं, "जा साला ठीक से चौके का काम कर नहीं तो उजाड़ दूँगा और काटकर फेंकवा दूँगा ।"[15] वस्तुतः यह ज़मींदार आर्थिक-रूप से टूट रहा होता है । उसकी राजनीतिक हैसियत पहले जैसी नहीं रही, किंतु उसकी जड़ता अभी खत्म नहीं हुई है । उसके अहंकार को चोट लगती है तो वह फुँफकारने लगता है । महीप सिंह अपने छावनीदार बंसी को भी छोटी-सी गलती के लिए मारने लगते हैं, "अरे धनपलवा का साला बंसिया, तू मेरे इतने धन का अपमान करता है । बाबू महीप सिंह के यहाँ खाने को न रहे ? और तू साला दस हाथ की निकम्मी देह लिए छावनीदार बना फिरता है और एक मेहमान के खाने का इंतज़ाम नहीं कर सकता है । नाक कटा दी साले तूने ।"[16] पर सच्चाई तो यही है कि छावनी में खाने के लिए कुछ उपलब्ध ही नहीं था, जिससे बंसी मेहमान की खातिर-तवज्जो करता । यहाँ महीप सिंह की विवशता और अभावग्रस्तता साफ ज़ाहिर होने लगती है । अपनी आर्थिक स्थिति से अवगत होते हुए भी महीप सिंह तने ही रहते हैं । मानसिक रूप से अभी अतीत में ही जी रहे होते हैं ।

आज़ादी के बाद ज़मींदारों के समस्त अधिकार छीन लिए गए । वे भी आम आदमी की श्रेणी में आ गए । ग्राम-पंचायतें बनीं । गाँव की

---

14. जल टूटता हुआ -- रामदरश मिश्र, पृ. 31
15. - वही - 31
16. - वही - 253

गाँव की छोटी-मोटी समस्याओं को हल करने के लिए न्याय-पंचायतों का गठन हुआ । "जल टूटता हुआ" में ज़मींदार महीप सिंह का पुराना नौकर जगपतिया ने पंचायत-अदालत में खेत कटवाने और उसके साथियों को मारने-पीटने का आरोप लगाकर महीप सिंह पर मुकदमा दायर कर दिया । सरपंच की हैसियत से सतीश ने महीप सिंह के नाम सम्मन जारी किया तो हँसते हुए उन्होंने कहा, "अरे अब महीप सिंह के झगड़ों का फैसला ये अरकस-बथुआ करेंगे । दरिद्रों और मूर्खों की पंचायत में महीप सिंह नहीं जाएँगे । देखता हूँ इन देहाती जजों को ।"[17] महीप सिंह न तो पंचायती-अदालत को स्वीकार करते हैं और न ही सरपंच के रूप में सतीश को, जो उनका कारिंदा रह चुका है. उनकी समझ में तो सरपंच की कुर्सी पर उन्हें होना चाहिए था । ज़मींदारी व्यवस्था में ऐसा ही होता था और महीप सिंह विगत के मोहपाश से मुक्त नहीं हो पाते हैं । समकालीन यथार्थ को स्वीकार नहीं कर पाते हैं । जब अदालत का फैसला उनके खिलाफ सुनाया जाता है तब वे बौखला कर कहते हैं, "इस सूअर के बच्चे से मैं माफी माँगूँगा । ऐ छैलबिहारी, लाकर फेंक दे पचास रूपए अदालत के मुँह पर ।"[18] बड़प्पन के अंहकार में डूबे महीप सिंह माफी नहीं मांग सकते और न ही उनके पास पैसे हैं कि जुर्माना अदा कर सकें । बची है तो सिर्फ अकड़, अभिमान और शोषण-उत्पीड़न की प्रवृत्ति, साथ में टूटी हुई ज़मींदारी और चिथड़ों में लिपटा हुआ सम्मान ।

उपन्यासकारों ने जैपाल सिंह एवं महीप सिंह -- दोनों ज़मींदारों के चरित्र का रेखांकन आजादी के बाद होने वाले राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तनों के संदर्भ में किया है । इनके तुलनात्मक अध्ययन से पता

---

17. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 253
18. - वही - 343

चलता है कि ज़मींदारी उन्मूलन से उखड़े हुए ज़मींदारों ने आज़ादी के बाद दो तरह की प्रवृत्तियाँ ज़ाहिर कीं । एक प्रवृत्ति मौके के मुताबिक ढल जाने की थी । दूसरी प्रवृत्ति पुरानी अकड़ व धौंस जारी रखने की थी । एक प्रवृत्ति देश में कायम हुए नए राजनीतिक जनतंत्र को बाहरी तौर पर कबूल करते हुए अंदर से घातें चलने और अपने स्वार्थों को किसी न किसी तरह बनाए रखने के लिए चालाकियाँ बुनने की थी । दूसरी प्रवृत्ति नए परिवर्तनों के आगे सिर न झुकाने के दम्भपूर्ण हठ की थी । पहली प्रवृत्ति के प्रतिनिधि जैपाल सिंह थे तो दूसरी के महीप सिंह । जैपाल समझौतावादी प्रवृत्ति के कारण अपनी इज्जत बचाने में सफल हो जाते हैं । जनता के सामने उन्हें शर्मिन्दा नहीं होना पड़ता । जबकि महीप सिंह के अड़ियल स्वभाव के कारण उनके नौकर, कारिन्दा, साहूकार सभी खिन्न हो जाते हैं और उनका विरोध करते हैं, उन्हें अदालत तक खींच ले जाते हैं और उनके मुकाबले तन कर खड़े हो जाते हैं ।

2. धनी किसान

"देखते ही देखते वंशी काका की बखरी चौखुंटा पक्की हो गई । दरवाजे पर खंभियों वाला दालान और कोठा । जेलों की पक्की चरनी तथा दालान के सामने की सारी फर्श ईंटों से जड़कर उनके वैभव का ऐलान करने लगी ।"[19] ये करैता के एक धनी किसान वंशी सिंह की आर्थिक दशा का चित्र । वंशी सिंह की धन-दौलत का राज है कठिन परिश्रम तथा मितव्ययिता । "वंशी काका के परिवार पर कंजूसी का नीरस पहरा कभी ढीला नहीं पड़ा । उनके वैभव ने ईर्ष्यालु लोगों के मुँह से क्या-क्या नहीं कहवाया । यह सही है कि वंशी काका के परिवार के किसी व्यक्ति ने कभी बनियान या कुर्ता नहीं पहना । धोती खुँटियाये, सिर पर गमछा लपेटे, हाथ में खाँची या कुदाली लिए उनकी ज़िन्दगी बीत गई ।"[20] उनके लड़के कल्पू की शादी में दसियों हजार रूपए दहेज के रूप में मिले । तब कल्पू की माँ को अपने बड़प्पन की धौंस जमाने का अच्छा मौका मिल गया । "बात-बात सब हो गई बहिन जी । दस हजार अँगने में देवँगे अउर का ।"[21] इससे समाज में फैली दहेज जैसी कुप्रथा का भी संकेत मिलता है । यह भी प्रतीत होता है कि ज्यादा पैसे वालों में अधिक से अधिक दहेज पाने की प्रवृत्ति होती है ।

---

19. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 141
20. - वही - 141
21. - वही - 145

धनी किसानों की स्थिति ज़मींदारों जैसी तो नहीं थी लेकिन आज़ादी के बाद इनकी मजबूत आर्थिक स्थिति को देखकर कहा जा सकता है कि इन्होंने एक तरह से ज़मींदारों की जगह ले ली । ये लोग भी खेती के लिए मज़दूरों का सहारा लेते थे । कम से कम मज़दूरी पर ज्यादा से ज्यादा काम लेना चाहते थे । काम में किसी तरह की ढिलाई बर्दाश्त नहीं करते थे । इसीलिए तो वंशी सिंह का भतीजा जगजीत अपने हलवाहा झिनकू को धमकाता है कि, "खेती-बारी के दिन में तबीयत-वबीयत खराब का हीला-हवाला छोड़ दो झिनकू । नाहीं, हमारी खेती बिगड़ेगी, तो हम तुमको बिना खराब किए छोड़ेंगे नहीं ।"[22] वंशी सिंह की मजदूरी की एवज में झिनकू को जो दो बीघा खेत मिला है उससे परिवार का गुजारा नहीं हो पाता । यही झिनकू के असंतोष एवं अन्यमनस्कता का कारण है । वह सोचता है कि जब इतनी मजदूरी भी न मिले कि उसका परिवार भरपेट भोजन कर सके तो ऐसा काम करने से क्या फायदा । उधर जगजीत कम मजदूरी पर काम कराने का आदी हो चुका है । अब ज्यादा मजदूरी देना उसे खलता है । वह वंशी सिंह से कहता है कि "ई ऐसे न मानी चच्चा । बड़ बतियार, चमार लतियार । चार हाथ लगे अभी न, बस इसकी सारी हेकड़ी भूल जाएगी ।"[23] दरअसल धनी किसानों का यह वर्ग भी कम से कम मजदूरी देकर ज्यादा से ज्यादा काम लेने में विश्वास रखता है । इसका एक कारण इनकी कंजूस प्रवृत्ति भी है, दूसरे धन और जातिगत उच्चता का अहंकार । इस तरह यह वर्ग मजदूरों का शोषण तो करता है, लेकिन ज़मींदारों की तरह भोग-विलास के लिए नहीं, वरन् अपनी भौतिक समृद्धि एवं प्रतिष्ठा के लिए । धनी किसान उन मजदूरों के साथ मिलकर खेत में काम भी करता है । ज़मींदार सिर्फ दूसरों

---

22. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 173
23. - वही - 174

के श्रम पर भोग-विलास करना चाहता है । करैता के धनी किसान वंशी सिंह का पुश्तैनी मजदूर झिनकू बन्नी (दैनिक मजदूरी) पर काम करने के लिए प्रस्ताव रखता है जिसे वंशी यह कहते हुए इन्कार कर देते हैं कि, "नहीं करेगा मत करे । हमारा पचास रूपए का करज है इसके उप्पर । दे दे और किनारे लगे । हमसे कोई मतलब नहीं । बन्नी पर काम करने वाले एक नहीं हजार मिलेंगे ।"[24] इसके मूल में जो समस्या है वह है आर्थिक । एक तरफ आर्थिक रूप से समृद्धतर होने की महत्वाकांक्षा है तो दूसरी ओर आर्थिक पराधीनता ।

करैता के दूसरे धनी किसान सुरजू के इस सहज एवं मासूम कथन से उनकी दानवीरता के बारे में कोई धारणा बना लेना भ्रम के सिवाय और कुछ नहीं होगा कि, "मैं कोई बहुत बड़ा आदमी नहीं हूँ । आप लोग जानते हैं । न जमींदार था, न हूँ । मैं छोटी हैसियत का आदमी हूँ । फिर भी मैं विद्यालय के लिए सौ रूपया दूँगा ।"[25] इस सौ रूपया देने के पीछे उनका मूल मकसद जैपाल सिंह से और ज्यादा पैसा निकालने का है । सुरजू जैपाल के पुराने दुश्मन हैं और हरेक मौके पर जैपाल को नीचा दिखाने की कोशिश करते हैं । इसी बात को मद्देनजर रखते हुए वे पंचायत में विद्यालय-भवन की मरम्मत के लिए रईसों से ही चंदा देने की पेशकश करते हैं । "हर आदमी पर आठ आना या एक रूपया चंदा लगाने से स्कूल की इमारत नहीं बनेगी । गाँव के कुछ रईस लोग जरा-सा खयाल कर दें तो सब काम आसान हो जाए ।"[26] सुरजू सिंह का इशारा जैपाल सिंह

---

24. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 175
25. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 56
26. - वही - 56

की तरफ है । वे यह भी जानते हैं कि ज़मींदारी टूटने के बाद की आर्थिक स्थिति कुछ ठीक नहीं है और वे ज्याद दे पाने में कठिनाई का अनुभव करेंगे । "अलग-अलग वैतरणी" में सुरजू सिंह के चरित्र से पता चलता है कि आजादी के बाद गांवों में भूतपूर्व ज़मींदारों के प्रतिद्वन्द्वी धनी किसान वर्गों से ही उभर कर आए । अब ज़मींदार की जगह धनी किसान ने ले ली । इसी उपन्यास में एक अन्य धनी किसान वंशी सिंह का जैपाल सिंह से कोई टकराव नहीं होता और "जल टूटता हुआ" में धनी किसान दीनदयाल तिवारी ज़मींदार महीप सिंह के सहयोगी के रूप में ही उभरते हैं । इससे यह प्रतीत होता है कि सभी धनी किसान पूर्व ज़मींदारों के मुकाबले खड़ा नहीं हुए । "जल टूटता हुआ" के धनी किसान दीनदयाल तिवारी निहायत लालची और फरेबी हैं । पाँच सौ रूपए कर्ज देकर पन्द्रह सौ की कुर्की कराने कुर्कअमीन के साथ गाँव के एक मध्यवर्गीय किसान उमलेश जी के दरवाजे पर दस्तक देते हैं । कहते हैं, "अरे जो आदमी अपने हाथ से बैलों को सानी-पानी नहीं कर सकता, वह किसी का कर्जा कैसे चुकाएगा ?"[27] उनकी लालची नजर कुंजू और बिरजू की जायदाद पर हमेशा से लगी रही है । वह उन्हें परेशान करने की नई-नई तरकीबें ढूँढते हैं । बिरजू पर चोरी का आरोप लगाकर लाठियों से पीटते हैं और रह-रह कर धमकाते हैं कि, "कल का छोकरा मुझे आँख दिखाता है, मुझे बदमाशों की लाल आँखों को फोड़ना भी आता है । बहुत बर्दाश्त किया, अब कभी मेरी जायदाद की ओर हाथ बढ़ाया तो तोड़कर रख दूँगा और जेल की हवा खिलाऊँगा ।"[28] दरअसल वे कुंजू-बिरजू को बरबाद कर उनकी ज़र-ज़मीन हड़प लेना चाहते हैं । वे बाहर से बहुत ही शांत और मृदुल दिखाई देते हैं पर भीतर कपट और वासना का बवंडर उन्हें अशांत किए रहता है । "जब कोई आदमी घायल होता था तो वह अंदाज लगाता था कि दीनदयाल की शांति के भीतर से कोई विस्फोट हुआ है । घायल तिलमिला रहा है,

---

27. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 65
28. - वही - 104

बक-झक कर रहा है और दीनदयाल मुस्करा रहे हैं जैसे कहीं कुछ हुआ ही नहीं ।"[29] पर सच तो यह है कि दीनदयाल की मुस्कराहट में खुशी नहीं, जहर भरा होता था । वे पैसे के बल पर स्कूल की प्रबन्ध-समिति का अध्यक्ष बन जाते हैं । गाँव में हर तरह की साजिश की व्यूहरचना के प्रमुख शिल्पी के रूप में उनका नाम लिया जाता है । उनका सम्पूर्ण चरित्र छल-कपट, विश्वासघात, गोलबंदी, बेईमानी, व्यभिचार और दलाली के इर्द-गिर्द घूमता रहता है । वे "अलग-अलग वैतरणी" के सुरजू सिंह के चरित्र के ज्यादा निकट महसूस होते हैं । इन दोनों के चरित्र से पता चलता है कि आजादी के बाद, ज़मींदार की हैसियत खत्म हो जाने के बाद - गाँव में चलने वाली राजनीति का केन्द्र धनी किसान बन गया । यह केन्द्र पहले ज़मींदार होता था ।

---

29. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 121

3. मध्यवर्गीय किसान

"यही है अपने गाँव की इज्जत । अपने मेले में साले हमीं खुद चमारपंथी करते हैं । रैभानपुर के बाबू लोगों की बहू थी । पकड़ ली साले हरिया ने उसकी कलाई ।"[30] ये शब्द हैं करैता के एक खाते-पीते मध्यवर्गीय किसान जग्गन मिसिर के, जिनकी मुख्य चिंता नैतिक मूल्यों के पतन की है । वे मूल्य जो समाज को मर्यादित आचरण की ओर प्रेरित करते हैं, आधुनिक समाज में अपना मूल्य खोते जा रहे हैं । जग्गन गरीबों के प्रति सहानुभूति रखते हैं । उनके सुख-दुख में शामिल होते हैं । धरमू सिंह की कुर्की के मौके पर उपस्थित होकर कुर्कअमीन को करारा जवाब देते हैं । "सरकारी फैसले की ऐसी की तैसी । ये हैं आपके चार सौ रूपए । सरकार को किसी के जीने-मरने से मतलब न होगा, लेकिन हम गाँव वालों को तो होगा ।"[31] इस तरह वे बुझारथ की चाल को नाकाम कर देते हैं । वे सुरजू और बुझारथ को एक ही सिक्के के दो पहलू मानते हैं । "सुरजू और बुझारथ एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं जैसे नागनाथ वैसे साँपनाथ । तुम लोगों को लगता होगा दोनों में फ़रक । देखने में ऊपर-ऊपर से दोनों एक दूसरे के दुश्मन लगते हैं । मगर इनका यदि कोई सबसे अधिक नजदीकी है तो जान लो ये ही हैं खुद के सबसे नजदीकी ।"[32] जग्गन मिसिर प्रत्येक घटना को बड़ी बारीकी से देखते हैं । गाँव की बहू-बेटियों की इज्जत-आबरू का बहुत खयाल करते हैं । इसके खिलाफ कुछ सुनना नहीं चाहते ।

---

30. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 15
31. - वही - 92
32. - वही - 86

इसलिए हरिया जब पुष्पी के लिए अपनी गरदन कटाने का अभिनय करता है, तो जग्गन गुस्से में आकर छुरी खींचकर मार देते हैं जो हरिया के पैर में धँस जाती है । जग्गन उसे चेतावनी भरे शब्दों में कहते हैं कि, "फिर कहो कोई गंदी बात गाँव की किसी बहू-बेटी को और देखो ? इस बार फावड़े से मारकर टाँग तोड़ दूँगा साले लुच्चा । उसदिन मेले में छोड़ दिया तो जानते हो तुमसे डर गए ।"[33] जग्गन नैतिकता के पक्षधर हैं । वे ज़मींदारी उन्मूलन को जनता के हित में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन मानते हैं । उनका कहना है कि, "ज़मींदारी टूट गई तो एक तरह से अच्छा ही न हुआ ? कुछ के पास अपनी ज़मीन हो गई । मोहमाया से उसे जोतेंगे-गोड़ेंगे । लेकिन ज़मींदारी टूटने से ही तो सब दुख नहीं बिलाएगा ।"[34] उनकी नजर में अशिक्षा और गरीबी जैसी समस्याओं से छुटकारा पाए बिना आज़ादी का कोई खास मतलब नहीं रह जाएगा । "पढ़े-लिखे आदमी होंगे तभी न हम लोगों की भाग पलटेगी । अभी तो सनिच्चर गोड़ तोड़े बैठा है । किसी को घर है तो बैल नहीं, किसी के तन पर पूरा बस्तर नहीं । किसी को भर पेट खाने को अन्न नहीं ।"[35] वे स्वयं इन समस्याओं से जूझ रहे होते हैं । अकाल और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदा से त्रस्त हैं और महसूस करते हैं कि यहाँ के हरेक गरीब आदमी का जीवन कितना संघर्षपूर्ण हो सकता है । जग्गन स्वाभिमानी और साहसी हैं । अन्याय के प्रति उनके मन में क्षोभ है । ठाकुरों और चमारों के दरम्यान हो रही गोलबंदी को देखकर चिंतित हो जाते हैं, क्योंकि उसमें हिंसा एवं रक्तपात की भारी संभावना उन्हें दिखाई देती है । वे दोनों समुदायों के बीच होने वाले संघर्ष को टालने की कोशिश करते हैं ।

---

33. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 87
34. - वही - 113
35. - वही - 113

इसमें बीच-बचाव के लिए विपिन के पास जाते हैं, "अरे आप यहाँ खड़े हैं । करैता की नाक कट जाएगी विपिन बाबू न जाने कितनी लाशें गिर जाएँगी आज । यह बड़ा भयानक तैलाब है भइया, इसे रोको ।"[36]

करैता की नाक कटने से अभिप्राय कहीं ठाकुरों की शिकस्त की संभावना से तो नहीं है ? कहीं चमार अपने उद्देश्य में सफल हो गए तो ? लगता है जग्गन को यही चिंता ज्यादा सताती है । इसीलिए शायद वे गोल-मोल भाषा में कहते हैं कि, "चमारों का फैसला ठीक था .. उसको मनवाने का ढंग गलत था ।"[37] तो क्या ठाकुर चमारों के फैसले को चुपचाप स्वीकार कर लेते और सुरजू सिंह एक चमार की लड़की को अपने घर में सम्मान देते ? यह संभव नहीं था और शायद इसीलिए दोनों जातियों के बीच टकराव होता है । जिसका सीधा-सा अर्थ है कि ठाकुर चमारों के फैसले को स्वीकार करने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं थे । इसे वे अपनी जाति का अपमान समझते थे । फिर जग्गन उस टकराव में सत्य भगत की हत्या पर सफाई क्यों देने लगते हैं कि, "मैं खुद गरीब आदमी हूँ इसीलिए यह कहना कि मैं गरीबों के खिलाफ हूँ, बेमतलब बात है । मैं अपने को, अपनी आत्मा को नहीं छोड़ सकता । फिर गरीबों को कैसे छोड़ सकता हूँ ।"[38] दरअसल जग्गन का ब्राह्मणवादी संस्कार स्वयं चमारों के फैसले को अन्दर से स्वीकार करने नहीं देता । और यह भी कि उनका मध्यवर्गीय चरित्र किसी बड़े परिवर्तन को स्वीकार नहीं करता जो परम्परा के विरूद्ध हो । यह वर्ग परम्परा और नैतिकता जैसे मूल्यों से बंधा होता है । इसलिए गरीब मजदूरों के प्रति इनकी सहानुभूति एक धोखा है ।

---

36. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 435
37. - वही - 445
38. - वही - 446

गाँव से शहर की ओर भागने की प्रवृत्ति की शुरूआत तो अंग्रेजी शासन के दौरान ही हो गई थी । आज़ादी के बाद इसमें और तेजी आई । जग्गन मिसिर का मध्यवर्गीय कृषक संस्कार इस प्रवृत्ति से बहुत दुखी होता है । उन्हें दुख है कि हमारे गांवों में "जो भी अच्छा है, काम का है, वह वहाँ से चला जाता है ।"[39] गाँव का एक शिक्षित युवक विपिन गाँव छोड़कर जब शहर नौकरी के लिए जा रहा होता है तो मिसिर कहते हैं, "जाते वक्त हमें बेगाना बनाकर मत जाओ । गाली देकर न जाओ । तोहमत लगाकर मेहरारू छोड़ते हैं, महतारी नहीं ।"[40] यह जग्गन मिसिर का गाँव के प्रति विशेष मोह बोल रहा है । गाँव छोड़ने की इस घटना को वे "अनत गौन" कहते हैं । "अब तो एक तरह का अनत-गौन हो रहा है । यहाँ रहते वे हैं जो यहाँ रहना नहीं चाहते, पर कहीं जा नहीं पाते । यहाँ से जाते अब वे हैं, जो यहाँ रहना चाहते हैं, पर रह नहीं पाते ।"[41] विपिन जैसे युवक पढ़ाई खत्म करके गाँव में ही रहने के लिए लौट आते हैं किंतु कहाँ रह पाते हैं । जग्गन मिसिर के कथन में गाँव के गंदे वातावरण की ओर संकेत अन्तर्निहित है, जिसके कारण पढ़ा-लिखा, समझदार एवं संवेदनशील आदमी गाँव में नहीं रह पाता ।

औद्योगिक विकास के साथ-साथ शहर शिक्षा एवं संस्कृति-कर्म के केन्द्र बनते चले गए । इससे यहाँ दोनों तरह के शिक्षित एवं अशिक्षित, के लोग आने लगे । उच्च शिक्षा के लिए युवकों एवं कारखानों में काम पाने के

---

39. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 485
40. - वही - 485
41. - वही - 485

लिए अशिक्षितों-अर्द्धशिक्षितों का शहरों की ओर आना शुरू हो गया । इससे गाँवों में शिक्षित युवकों एवं मजदूरों - दोनों की कमी महसूस होने लगी । जग्गन मिसिर इसी खालीपन से चिंतित नजर आते हैं । पूरे उपन्यास में जग्गन ही ऐसे आदमी हैं जो गाँव, समाज, शिक्षा, संस्कृति और परम्परा के बारे में इतना कुछ सोचते हैं । अपने स्वार्थ के लिए किसी तरह की चेष्टा उनमें नहीं दिखाई देती । यह उनके चरित्र की विशेषता है ।

"अलग-अलग वैतरणी" में एक अन्य मध्यवर्गीय किसान हैं खलील मियाँ । एक हारा हुआ इन्सान, पर जिसके चेहरे पर अभी विश्वास की रेखाएँ विद्यमान हैं । "जमाना बदल गया मगर खलील चाचा की मस्ती वैसी ही बरकरार है । वही हँसी, वे ही बारीक बातें, पुरजोर मस्ती का आलम ऐसा कि बात की बनात में शेरो-शायरी के रेशमी बेल-बूटे लगातार टँकते चले जाएँ ।"[42] इनको देखकर भला कौन कह सकता है कि एक बेटा बंटवारे के बाद पाकिस्तान चला गया और जायदाद का अधिकांश देवी चौधुरी द्वारा हड़प लिया गया । इतने पर भी खलील मियाँ एक जिंदादिल इन्सान हैं । सन् 1947 में भारत-विभाजन के बाद खलील मियाँ का बड़ा बेटा पाकिस्तान चला गया लेकिन खलील मियाँ करैता की माटी से अपना रिश्ता नहीं तोड़ सके । बदरूल के पाकिस्तान जाने का उन्हें गम है । कहते हैं, "एक दिन सुना कि जमनिए के कई मुसलमानों के साथ साला पाकिस्तान चला गया । उसका ससुर ले गया होगा जो हो मैं तो उसी का कसूर कहूँगा कि उस साले का खून खून नहीं रहा पानी हो गया ।"[43] पाकिस्तान जाने के बाद बदरूल खलील मियाँ को चिट्ठी भेजकर अपने पास बुलाता है जिसे खलील मियाँ अस्वीकार कर देते हैं । बातचीत के दौरान विपिन से कहते हैं कि, "मैंने लिख दिया बेटे कि तुम्हारे पाकिस्तान पर मैं लानत भेजता हूँ साले तू दोगला है । काफ़िरों के बीच अपना दर्जनों

---

42. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 189
43. - वही - 192

पुश्त गल गया । आज तक ऊपर खुदा गवाह बेटे, मैंने कभी हिन्दू और मुसलमान में फ़र्क नहीं किया । मैंने दसमी नहीं मनाई कि दीवाली के दिए नहीं जलाए ।"[44] इससे खलील के दिल का दर्द साफ नजर आता है । वे मिली-जुली संस्कृति के प्रतीक हैं । हिन्दुओं के साथ मिल-जुलकर दुख-दर्द बाँटते हैं । वे साहसी, धीर एवं गंभीर हैं । इसीलिए देवी चौधुरी द्वारा उनके खेत हड़प लिए जाने के बाद भी विचलित नहीं होते और हिन्दुओं के प्रति मन में कोई दुर्भावना नहीं पालते । वे करैता की माटी से बेइंतहा मुहब्बत करते हैं इसलिए उनमें पाकिस्तान के प्रति कोई ललक नहीं है । जिस गाँव में उन्हें लोगों का प्यार मिलता है उसे ठुकरा कर, दुत्कार कर कैसे जाएँ ? कहते हैं, "झूठी तोहमत लगाकर वतन को छोड़ना सबसे बड़ा कुफ्र है । मैंने बिल्कुल पक्का कर लिया कि कुछ भी हो जाए, मैं करैता छोड़कर नहीं जाऊँगा ।"[45] खलील मियाँ की आत्मा की जड़ें करैता की माटी में इतने गहरे धँसी हैं कि उन्हें कोई भी आँधी हिला नहीं पाती । वे जग्गन मिसिर की तरह जन्मभूमि पर किसी तरह का आरोप बर्दाश्त नहीं करते । खलील और जग्गन, दोनों ही अपनी ईमानदारी, नेकनीयती और साहस के कारण अमिट छाप छोड़ते हैं । दोनों ही सामाजिक बुराइयों से लड़ते हैं, हार जाते हैं और हार कर भी जीतते हैं ।

"जल टूटता हुआ" के सुग्गन तिवारी बेटी की शादी के लिए परेशान हैं । पास में पैसे हैं नहीं, "अच्छी शादी तो किसी भी तरह एक हजार से कम पर तै नहीं हो रही है और यहाँ घर में कानी कौड़ी नहीं है ।"[46] वे प्राइमरी स्कूल के मास्टर हैं । तनख्वाह के रुके हुए पैसे, अनाज और कर्ज के सिवाय और कोई चारा नहीं है उनके सामने । पर

---

44. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 192
45. - वही - 193
46. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 239

Library

TH- 5898

इतने पर भी शादी का बन्दोबस्त हो जाएगा, इसकी कोई संभावना नहीं है । उधर सतीश अपनी गरीबी से परेशान है । पत्नी के गहने बेचकर उसकी दवा का इंतजाम किया गया है । पत्नी की ओर देखते हुए व्यथित मन से कहता है, "कितना अभागा हूँ मैं । मैं घर के लिए कुछ कर तो नहीं ही सका, उल्टे घर की सारी पूँजी बिकवा दे रहा हूँ । देखो न तुम्हारे तन का छल्ला-छल्ला बिक गया ।"[47] इस गरीबी की यातना से छुटकारा पाने के लिए वह महीप सिंह के यहाँ नौकरी करने के लिए तैयार हो जाता है । "मैं जाऊँगा पिताजी मुझे नौकरी चाहिए । कोई भी नौकरी, स्वर्ग में, नरक में .. मैं करूँगा ।"[48] इससे सतीश की खराब आर्थिक स्थिति का सहज ही अन्दाजा लग जाता है । सतीश अपनी जिम्मेदारियों के प्रति कुछ ज्यादा ही सचेत हैं । वह महीप सिंह के यहाँ नौकरी करता है इसलिए ग्राम-सभापति पद के लिए फेंकू तिवारी को तैयार करता है ताकि सूदखोर, दलाल और शोषक दीन-दयाल को पराजित किया जा सके । उसका कहना है कि, "मैं नहीं खड़ा होना चाहता सभापति पद के लिए । आप जानते हैं मैं बाबू महीप सिंह का नौकर हूँ । यहाँ रहने की छुट्टी दें या न दें, सभापति को तो हमेशा गाँव में ही होना चाहिए । कब गाँव वालों को सुख-दुख पड़े ।"[49] यानी वह सभापति के पद पर एक ऐसे आदमी को देखना चाहता है जो ईमानदारी और मेहनत से अपना कर्तव्य निभाए, गाँव वालों के सुख-दुख में उनकी मदद करे । सतीश दीनदयाल द्वारा कुंजू को गिरफ्तार करवाने की साजिश का विरोध करता है और दरोगा से पूछता है कि, "क्या प्रमाण है दरोगा जी कि इसने व्यभिचार किया है ?"[50] वह दीनदयाल

---

47. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 71
48. - वही - 72
49. - वही - 147
50. - वही - 185

और उसके पिछलग्गुओं के झूठ और फरेब का कदम-कदम पर विरोध करता है । वह आदर्शवादी है । नारी जाति के प्रति उसमें आदर की भावना है । इसीलिए दीनदयाल को अपमानित करने के लिए शारदा (दीनदयाल की लड़की) को मोहरा बनाने की रामकुमार की चाल का वह विरोध करता है । "दीनदयाल को व्यक्तिगत रूप से चाहे जितना बदनाम करो किंतु गाँव की लड़की सबकी लड़की होती है, उसकी बदनामी सबकी बदनामी होती है और वह बहुत ही शरीफ, नेकदिल लड़की है, कीचड़ में कमल है ।"[51] इन औरतों की इज्जत के बारे में सतीश और जग्गन मिसिर के विचार काफी मिलते-जुलते दिखाई देते हैं । वर्ण-व्यवस्था के प्रति सतीश और जग्गन के मन में एक तरह का मोह व्याप्त है । अपनी कुल इन्सानियत के बावजूद ये उस संस्कार को तोड़ नहीं पाते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" में ठाकुरों और चमारों के झगड़े को जग्गन भी ठीक नहीं मानते, यानी चमारों में संघर्ष-चेतना के आविर्भाव को उनकी सवर्ण मानसिकता स्वीकार नहीं कर पाती. उसी तरह "जल टूटता हुआ" में एक हरिजन युवती लवंगी के आरोपों को सुनकर सतीश क्षुब्ध हो उठता है । हालांकि लवंगी के यौवन पर ब्राह्मणों की कामुक दृष्टि औरचेष्टाओं के बारे में वह भी जानता है लेकिन जब लवंगी भीड़ के बीचों-बीच इसी सत्य का उद्घाटन करती है तो सतीश अंदर ही अंदर बौखलाने लगता है । वह लवंगी से हँसिया को काबू में रखने की सलाह तो देता है लेकिन पार्वती के चरित्र पर कोई प्रतिक्रिया नहीं करता । बदमी के साथ होने वाले अत्याचार को सह लेता है लेकिन कुंजू के प्रश्न पर मुखर हो उठता है । इससे स्पष्ट होता है कि न्याय का पक्ष लेते हुए भी कहीं न कहीं सतीश सवर्ण मानसिकता के व्यूह में घिरा हुआ है । "अलग-अलग वैतरणी" में जग्गन मिसिर भी

---

51. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 195

चमारों के फैसले से दुखी हो जाते हैं । कहते हैं कि, "चमारों ने बटोर करके फैसला दाग दिया । उस छोकड़ी को लेकर चल पड़े तुरजू के घर बैठाने । हो न गया फैसला । एक गरीब निर्दोष की जान गई या तो बटोर, पंचायत ही करो या झगड़ा ही करो ।"[52] जग्गन मिसिर को लगता है कि चमारों के फैसले ने ही सत्य भगत की जान ले ली । उन्हें सत्य की हत्या से सहानुभूति हो जाती है लेकिन हत्यारों के खिलाफ वे कुछ नहीं कह पाते ।

"जल टूटता हुआ" में खेतिहर मजदूरों की हड़ताल से ऊँची जातियों में खलबली मच जाती है । इनके सामने धर्म संकट खड़ा हो जाता है कि ऊँची जाति में पैदा होने के बाद हल की मुठिया कैसे थामें । इसमें सतीश आगे बढ़कर पहलकदमी करता है और ब्राह्मणों को धिक्कारते हुए कहताहैकि, "दो पैसे का जनेव पहनकर सारा धर्म ओढ़ने का दंभ कर रखा है इन लोगों ने । मैं तो कब से चिल्ला रहा हूँ कि धर्म के मिथ्या आडम्बर को छोड़ो, अपना काम करना सबसे बड़ा धर्म है लेकिन कोई सुनता ही नहीं । सारा पाप करेंगे, लेकिन अपना खेत नहीं जोतेंगे ।"[53] यहाँ सतीश का मेहनती किसान रूप उभरता है । वह रूढ़ियों को तोड़ना चाहता है, जिसके बिना विकास असंभव है । वह सत्य और न्याय का पक्षधर है, पर सवर्णों के प्रति कुछ उदार भी है । यह उदारता जग्गन मिसिर में भी दिखाई देती है । सतीश परम्परा में विश्वास रखता है । निहित स्वार्थों के पीछे नहीं दौड़ता । खलील मियाँ अपनी सीमित उपस्थिति के बावजूद अमिट छाप छोड़ जाते हैं । सादगी, ईमानदारी और उदारता के कारण उनका चरित्र अत्यंत

---

52. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 448

53. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 277

मानवीय हो उठा है । गाँव की राजनीति से दूर, दूसरों के दुख-दर्द में शामिल होने वाले खलील मियाँ अपने विश्वस्त व्यक्ति द्वारा छले जाते हैं, किन्तु किसी जाति या धर्म को दोष नहीं देते । जग्गन और सतीश दोनों ही सामंती अत्याचारों के खिलाफ हैं । दोनों आदर्शवादी और वर्ण-व्यवस्था के पोषक हैं फिर भी अन्याय के विरूद्ध संघर्ष करते हैं । गाँव को लेकर दोनों के मन में एक तरह का मोह व्याप्त है । खलील भी ज्यादा से ज्यादा करैता छोड़कर जमनियाँ - अपने ससुराल तक की यात्रा ही करते हैं । इस तरह वे देश के प्रति अपनी निष्ठा को कायम रखते हैं ।

कुल मिलाकर मध्यवर्गीय किसान, आर्थिक कठिनाइयों के बावजूद गाँव छोड़कर नहीं जाना चाहता । वह भावुक है और अपने संस्कारों एवं परम्पराओं के प्रति आस्था रखता है । वह भूस्वामियों की तरह क्रूर और धनी किसानों की तरह स्वार्थी नहीं है, वरन् करुणा, दया, सहानुभूति जैसे गुणों के कारण ज्यादा मानवीय लगता है ।

4. गरीब किसान

"क्या करूँ भाई, बामन हूँ । हलवाही-चरवाही कर नहीं सकता । मिहनत-मजूरी कोई कराएगा नहीं । ऊपर-झापर के कुछ काम कर देता हूँ । इसी से दो प्रानी का गुजर चलता है ।"[54] "अलग-अलग वैतरणी" के दयाल इस तरह अपना जीवन-यापन करते हैं । न पत्नी, न बाल-बच्चे, सिर्फ बूढ़ी माँ के साथ गरीबी के आलम में ज़िन्दगी गुजारते हैं । अपनी जमीन नहीं जिस पर खेती करें और अपमान तथा उपहास के डर से किसी के यहाँ मजदूरी भी नहीं कर सकते क्योंकि वे ब्राह्मण हैं । फिर भी, "वे सुबह से शाम तक इस घर, उस घर की औरतों की फरमाइशें पूरी करने में जुटे रहते । बाजार से छींट, गोटे, चोटी, बिन्दी लानी है, तो किसी की बहू को टीसन के चिट्ठी वाले डब्बे में लिफाफा छुड़वाना है, किसी का आल्ता चुक गया है, किसी का तेल खत्म हो गया है । किसी को बच्चू के "सुइटर" के लिए ऊन चुक गया है, किसी के बालों का "किलिप" खो गया है दयाल महाराज से अधिक विश्वासपात्र दूसरा कोई न मिलेगा ।"[55] इसलिए गाँव की लड़कियाँ, नई-नवेली बहुएँ तक दयाल से अपनी बात कहती हैं और उन्हीं से अपनी जरूरत की चीजें मँगाती हैं । दयाल का यही काम, उनकी विश्वसनीयता ही उनके जीने का आधार है । औरतें उन्हें अपने करीब इसलिए भी मानती हैं कि वे सबके रहस्य को अपने मन में छिपाए रहते हैं ।

"अलग-अलग वैतरणी" में दलितों के मुकाबले गरीब किसानों की आवाज कुछ दबी-दबी सी सुनाई पड़ती है । एक अत्यंत गरीब किसान धरमू सिंह का चेहरा कहीं दिखाई नहीं देता । उनकी गरीबी को पुष्पी

---

54. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 3

55. - वही - 72

के माध्यम से रेखांकित करने का प्रयास किया गया है अथवा कहीं-कहीं स्वयं उपन्यासकार ही कुछ कुछ चित्र खींचता चलता है । मसलन् धरमू सिंह के घर का अंदरूनी माहौल दिखाने के लिए उपन्यासकार लिखता है, "भीतर धरमू सिंह के घर में बेहद सन्नाटा था । कोने वाले कमरे में वे निढाल पड़े थे । तेज खाँसी से उनका कमज़ोर बदन पूरी तरह निचुड़ जाता । साँस सहज ढंग से आती जाती रहती है + तो कोई ध्यान भी नहीं देता, पर वही साँस हर बार आते भी जाते भी धरमू सिंह के सारे हक को इस तरह कुरेद खरोंच रही थी कि वे छटपटाते-छटपटाते गठरी की तरह बटुर जाते थे ।"[56] यह एक गरीब किसान का चित्र है, जिसमें बीमारी, बदहाली और कर्ज का बोझ, सब कुछ दिखाई देता है । गरीबी के मारे धरमू सिंह की बीमारी का इलाज नहींहोपाता और पुष्पा की शादी के रूपयों का बंदोबश्त करना मुश्किल हो जाता है। कनिया से धरमू सिंह की पत्नी की याचना में उनकी सारी विवशता और दीनता झलकती है । "हम लोग तो सब दिन तुम्हारा ही नमक खाकर जीए । मारो तो तुम्हारा ही पाँव पकड़ेंगे, दुलारो तो तुम्हारा ही पाँव पकड़ेंगे । बस एक दया करो, बेटी तुम तो जानती ही होगी कि कुर्की के रूपए भरने के लिए भी तुम्हारे ही पाँव पड़ी चारों तरफ तो आग लगी है । पर पैदावार की बात तुमसे छिपी थोड़े ही है । जैसे भी होगा, पेट काटकर भी, हम तुम्हारा रूपया भर देंगे ।"[57]

सच तो यही है कि गरीब किसान के पास "पेट काटकर" कर्ज चुकाने के अलावा कोई दूसरा चारा भी नहीं होता । जमीन की कमी और बाहरी आमदनी के अभाव में "अलग-अलग वैतरणी" के धरमू सिंह हों या "गोदान" का होरी, सभी ज़मींदार या महाजन के शोषण-उत्पीड़न

---

56. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 90

57. - वही -

का शिकार बने । इन गरीब किसानों के लिए बेटियों की शादी का मामला सबसे बड़ी समस्या के रूप में खड़ा होता है । "अलग-अलग वैतरणी" में धरमू सिंह की पत्नी की चिंता, "बस एक जवान लड़की सर पर है । इसी को गौसैंया किसी तरह पार-घाट लगा दें ।"[58] को देखकर गरीब किसान की मजबूरी का अन्दाजा लगाया जा सकता है । "जल टूटता हुआ" में गरीब बंशी को बेटी की शादी एक अधेड़ आदमी के साथ करनी पड़ती है, जिसके कारण गाँव में उसकी बदनामी होती है, वह अलग से । औरतों के लिए यह अनमेल-विवाह एक खास चर्चा का मुद्दा बन जाता है । लोग कहते हैं, "सुना है कि वर अधेड़ है और सुना है कि उसने खरीदा है.हे राम यह क्या किया बंशी ने ? बेटी बेचना कितना पाप है ? यह कुकरम उसने क्यों किया ?"[59] बंशी को यह तथाकथित "कुकर्म" गरीबी के कारण करना पड़ता है । अच्छे घर-वर के लिए ज्यादा दहेज भी तो देना पड़ता और बंशी इतने रुपए कहाँ से लाता । गोदान में होरी भी तो अपनी बेटी की शादी एक अधेड़ आदमी से करने के लिए विवश हो जाता है । इससे तो यही लगता है कि आजादी के पहले और बाद में भी गरीब किसानों की आर्थिक दशा में कोई बुनियादी या गुणात्मक सुधार नहीं हुआ । आज भी यह वर्ग कर्ज में डूबा है, लड़कियाँ इनके लिए अब भी बोझ बनी हुई हैं ।

"अलग-अलग वैतरणी" में पुष्पी सुगनी के साथ सीपिया नाले की तरफ साग लेने जाती है, जहाँ बुझारथ ने खुदाबक्श और सुगनी के साथ मिलकर पुष्पी को बेइज्जत करने की योजना पहले से बना रखी थी । पर पुष्पी इस योजना की शिकार होने से बाल-बाल बच जाती है । जब इस

---

58. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 124

59. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 238

घटना के बारे में उसकी माँ को मालूम होता है तो वह बिलखती हुई कहने लगती है, "मुझे क्या मालूम था बेटी कि सुगनी हमारी इज्जत पर हाथ डालेगी, भगवान गरीबी न देता तो मैं काहे को उतनी अबेर को तुझे साग के लिए भेजती ।"[60] तो क्या यह गरीबी एक पीड़ाजनक व्यापार नहीं है जिसमें व्यक्ति को अपनी इच्छा,आकांक्षाओं, जरूरतों, यहाँ तक कि इज्जत-आबरू की भी बलि देनी पड़ती है । दबंग आदमी गरीबों की मजबूरियों का फायदा उठाने के लिए हमेशा मौके की तलाश में ही रहता है । जैसा कि इस उपन्यास में बुझारथ ने कर दिखाया । "जल टूटता हुआ" में उपन्यासकार ने गरीब किसान की दरिद्रता का वर्णन करते हुए लिखा है, "सलोना ने चूल्हा जलाया, मौत की तरह भीगा हुआ अंधकार एक जगह से फट गया । सलोना के उदास चेहरे पर आँच दमकी -- लड़की चुक्की-मुक्की मारे चूल्हे के पास गुंथते हुए पिसान को देख रही थी । सलोना के जीवन में इस प्रकार की रातों की पर्तें अनगिनत बार घिरी और फटी हैं ।"[61] सलोना बंशी की पत्नी का नाम है । लगता है बंशी के घर आने के बाद से ही उसे गरीबी का सामना करना पड़ता है । उसके बच्चों को भूखा ही सो जाना पड़ता है । प्रौढ़ तो मन मार कर किसी तरह भूख सह भी लेते हैं । सलोना की अंतिम धरोहर हँसुली भी घर के खर्च के लिए बेच दी जाती है पर वे रूपए कब तक चलेंगे । सो, बंशी नौकरी के लिए सतीश के पास जाकर गिड़गिड़ाने लगता है, "अरे चाचा, महीप बाबू के यहाँ कोई नौकरी लगा दीजिए न. बड़ा पुण्य मिलेगा आपको, बच्चे भूखों मर रहे हैं ।"[62] बंशी को महीप सिंह के यहाँ नौकरी दीनदयाल की सिफारिश पर मिल जाती है । बाद में महीप सिंह मारपीट कर उसे भगा देते हैं । वह कलकत्ता भागकर जाता है । फिर भी उसकी गरीबी का अंत

---

60. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 296

61. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 155

62. - वही - 169

नहीं होता । उधर कुंजू दीनदयाल के अत्याचार से परेशान है । दीन-दयाल ने उसकी सहन की अधिकांश जमीन पर जबर्दस्ती कब्जा कर रखा है । कुंजू गाँव की एक कहार-लड़की बदमी से प्रेम करता है । बदमी को पाकर वह गरीबी की पीड़ा को भूलने का प्रयत्न करता है । पर कुंजू और बदमी के प्यार को ब्राह्मण लोग फूटी आँखों नहीं देखना चाहते । वे इन पर तरह-तरह के फिकरे कसते हैं । इससे चिढ़कर वह कहता है, "मैं कहार बन जाऊँ या चमार बन जाऊँ या धरिकार बन जाऊँ या डोम बन जाऊँ, इससे आप लोगों का क्या बनता बिगड़ता है ? ये कहार, चमार बहुत अच्छे हैं । मैं इनमें मिलकर रह सकता हूँ, लेकिन तुम्हारे बामनों के गाँव में नहीं ।"[63] कहने का आशय यह है कि प्यार जातिगत रूढ़ियों को भी तोड़ देता है शायद इसीलिए कुंजू अपने समुदाय को त्यागकर उन लोगों के साथ रहना श्रेयस्कर समझता है जो उसे प्यार करते हैं, गरीब हैं पर दिल के नहीं । गरीब किसान का एक यह भी पहलू है जो गरीबी की मार और लोगों का तिरस्कार सहते हुए भी अपने प्यार को सीने से लगा लेता है ।

इन गरीब किसानों की स्थिति को देखकर लगता है कि ये न तो किसान रह पाते हैं और न ही मजदूर बन पाते हैं । दोनों के बीच की दारुण स्थिति में पिसते रहते हैं । मुक्ति का कोई रास्ता भी नहीं दिखाई देता । कभी-कभी संस्कार भी आड़े आते हैं । दयाल पढ़े-लिखे नहीं हैं फिर भी मजदूरी नहीं कर सकते, क्योंकि वे ब्राह्मण हैं । धरमू,

---

63. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 355

बंशी, कुंजू सभी परेशान हैं । ये किसी न किसी तरह ज़मींदारों या धनी किसानों द्वारा शोषित-उत्पीड़ित किए जाते हैं । "जल टूटता हुआ" में तो धनी किसान दीनदयाल कुंजू की खड़ी फसल ही कटवा लेते हैं । इस पर कुंजू सतीश से कहता है, "लगता है गरीबों का कोई नहीं है कल भी नहीं था, आज भी नहीं है, ये गंदे जानवर कल भी राज करते थे, आज भी राज करने के लिए हाथ-पाँव मार रहे हैं, इनके मुँह खून लगा है न आदमी का ।"[64] दरअसल ये आदमखोर हैं । इनमें इन्सानियत की समझ बिल्कुल नहीं होती । इनमें अपने स्वार्थों को पूरा करने की सजगता दिखाई देती है । ये किसी भी कीमत पर अपना फायदा चाहते हैं ।

इस तरह देखा जाए तो "अलग-अलग वैतरणी" और "जल टूटता हुआ" के गरीब किसानों की हालत "गोदान" के होरी से कोई अच्छी नहीं है । यानी, आजादी के बाद भी इस वर्ग की आर्थिक स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता ।

---

64. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 202

5. खेतिहर मजदूर एवं दलित

ऐसे लोग, जिनके जीने का एकमात्र आधार मजदूरी है, इस श्रेणी में आते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" में देवीचक गाँव के चमार खेतिहर मजदूर ही हैं । कटाई (फसलों की) के समय वे झुंड बनाकर मजदूरी के लिए निकल पड़ते हैं । इनका मुखिया सरूप भगत है जो परिश्रम और स्वतंत्र जीवन जीने में विश्वास रखता है । उसका कहना है कि, "जब से चमार गाँव बसा कर रहने लगे ... सारी कौम बुजदिल हो गई । अरे खेत सीवान के पंछियों को घोसला से का काम भाई ? घोसला बनाओ तो गीध-कौवों की नजर लगेगी ही ।"[65] "गीध-कौओं" से सरूप का आशय भूस्वामियों या धनी लोगों से है जो गरीब मजदूरों-औरतों का यौन-शोषण करते हैं चाहे जबर्दस्ती अथवा लालच देकर । इसीलिए सरूप भगत को गाँव आबाद कर रहने में आपत्ति है । जब मजदूरी करके ही पेट भरना है तो कहीं भी मेहनत करके जिया जा सकता है । सरूप मजदूर है तो क्या, इज्जत की जिन्दगी जीना चाहता है । इसीलिए सिरिया जब दुलरिया से छेड़छाड़ की कोशिश करता है तो सरूप को यह अच्छा नहीं लगता । वह सिरिया से कहता है, "इज्जत तो सबकी एक ही है बाबू ? चाहे चमार की हो चाहे ठाकुर की । हम आपका काम करते हैं, मजूरी लेते हैं । हमें गरज है कि करते हैं । आपको गरज है कि कराते हो । इसका मतलब ई थोड़े हो गया कि हम आपके गुलाम हो गए ।"[66] अर्थात सरूप भगत कठिन परिश्रम, स्वतंत्रता एवं सम्मानपूर्वक जीवन जीने का

---

65. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 177
66. - वही - 181

पक्षधर है । झिनकू कहता है कि "मलिकार लोगों के लेखे चमार आदमी थोड़े होते हैं, खींच कर लाठी मार दिया, जैसे काठ वैसे टाँग ।"[67]

यहाँ झिनकू का इशारा भूस्वामियों की क्रूरता एवं संवेदनहीनता की ओर है । इसके अलावा यहाँ दलितों में पाई जाने वाली हीन-भावना को भी दर्शाया गया है, जो गरीबी और निम्न जाति में पैदा होने के कारण उत्पन्न होती है । यही कारण है कि बुझारथ द्वारा मार खाने के बावजूद दुक्खन चमार जैपाल सिंह के सामने अपनी दीनता का रोना रोता है, "अब हम का कहें ? जो मालिक का हुकुम हो। हमारा तो चार पुश्त आप लोगों के चरणों में गल गया सरकार । इस बखरी के अलादा हम कहीं हाथ फैलाने नाहीं गए ।"[68] और जब जैपाल से उसे दस रूपए दवा-दारू के लिए मिल जाते हैं तो वह कृतज्ञता से भर उठता है । बंशी सिंह का हलवाहा झिनकू जी-तोड़ मेहनत करने के बाद भी परिवार का पेट नहीं भर पाता । अपनी संतान को भूख से बिल-बिलाते देखकर तड़प उठता है । इस पर भी मालिक की धमकी सुनकर दर्द से बोल उठता है, "अब क्या खराब करोगे मालिक । खराब तो हो गए । चार-चार दिन से हमारे लड़कों के मुँह में एक दाना नहीं पड़ा । हमसे मुँह बाँधकर काम नहीं होगा सरकार ।"[69] दुक्खन और झिनकू में सभी समानताएँ होते हुए एक फर्क दिखाई देता है और वह यह कि दुक्खन मार खाकर भी जैपाल के सामने डरते-सहमते शिकायत करता है मानो सारी गलती उसी की हो, पर झिनकू दृढ़ता से बिना

---

67. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 162
68. - वही - 163
69. - वही - 173

बन्नी काम करने से इनकार कर देता है । वह जिस बेबाकी से मालिक के सामने अपनी बात रखता है कि, "जिन्दगी भर मर-मर कर खून-पसीना बहाकर काम किया अब सूखा-बाढ़ की विपत आ जाए तो आप लोग गरीब आदमी का पेट काटकर काम कराएँगे । उस पर अपनी अरज-गरज कहें तो मारने पीटने की बात कहेंगे ।"[70] इससे दलितों में परिवर्तनकामी चेतना का संकेत मिलता है । सरूप भगत इन्हीं अत्याचारों से बचने के लिए मुक्त जीवन जीने का पक्ष रखता है, "गाँव में रहने का नतीजा क्या हुआ ? लाख बेइज्जती हो, भरपेट मजूरी मिले, चाहे न मिले, लरिकाप्रानी उपास करें, चाहे भूखे मरें, हम गाँव नहीं छोड़ सकते ई घासफूस की मंड़ई भैया गोड़ छाँदकर बैठ जाती है । बड़े लोगों की देखा-देखी गुन-अवगुन सीखते चले जाते हैं । अब चमारिनें भी चौड़ी किनारी का लुग्गा पहनने लगी हैं कि नहीं । फिर ई सब आवे कहाँ से । न जमीन है न पैदावार । पेट चलाने को तो मजूरी मिलती नहीं । अब ई फिस्सन बदे कहाँ से आवे तो दुनियाभर के पाप । कोई गीलट का बुंदा दिखाय के, कोई चार पैसे की मिठाई, चाहे दो पैसे की बीड़ी थमा के लड़की-पतोहों को फुसलाय रहा है ।"[71] यानी गरीबों के शोषण का प्रमुख कारण उनकी विपन्नता है । सरूप भगत यही सच्चाई सामने रखता है । अभिलाषाओं की पूर्ति के लिए स्वयं को शोषित बनने के खिलाफ आवाज उठाता है और जितनी लम्बी चादर उतनी ही टाँग पसारने की हिमायत करता है । इन दलितों में अपनी इज्जत-आबरू के प्रति विशेष चिंता का भाव दिखाई पड़ता है । अब वे भूस्वामियों की मार और अपनी स्त्रियों की बेइज्जती नहीं सहना चाहते । "अलग-अलग वैतरणी" के सरूप भगत में कुछ यही भाव परिलक्षित

---

70. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 174
71. - वही - 177

होता है, जब वह सिरिया को समझाते हुए कहता है कि, "इज्जत तो सबकी एक ही है बाबू ! चाहे चमार की हो चाहे ठाकुर की । हम आपका काम करते हैं, मजूरी लेते हैं । हमें गरज है कि करते हैं । आपको गरज है कि कराते हो । इसका मतलब ई थोड़े हो गया कि हम आपके गुलाम हो गए ।"[72] कहने का तात्पर्य यह है कि आजादी के बाद दलितों में जैसे-जैसे चेतना का प्रसार होता गया, उन्होंने सामंती मूल्यों को नकारना शुरू कर दिया । इस दबाव और अस्वीकार के बीच कई बार विवाद, वैमनस्य एवं संघर्ष की स्थितियाँ भी पैदा हुई जैसा कि "अलग-अलग वैतरणी" एवं "जल टूटता हुआ" में दिखाया गया है । "अलग-अलग वैतरणी में अवैध/यौन सम्बन्धों की एक झलक दिखाई गई है । सुरजू सिंह एवं सुगनी चमारिन के बीच नाजायज सम्बन्ध का पर्दाफाश गाँव के लोगों के सामने हो जाता है । पर कोई भी इसके खिलाफ बोलने की हिम्मत नहीं जुटा पाता । सरूप भगत को अफसोस होता है कि, "साँच को देखने का हौसला सबमें है । उसके/वास्ते कितनी बोलबद मची थी । अब साँच उघड़ गया तो सब चुप्पी साध गए ।"[73] वह सिर्फ सरूप भगत ही है जो इस मौके पर अपनी बात कहता है । उसका कहना है कि, "बड़े से बड़े जुल्म का निस्तार मिल सकता है, मगर उस जुल्म से कोई निस्तार नहीं जिसे भोगने वाला उसे जुल्म माने ही नहीं ।"[74] यही सरूप जाति-पंचायत के बीच आत्मान्वेषण की आवश्यकता पर बल देते हुए कहता है कि, "यदि इस कौम को उठाना चाहते हो तो गाँठ बाँध लो कि अब लड़ाई भीतर है, बाहर नहीं । सहते-सहते यह कौम अब वहाँ पहुँच गई है, जहाँ उसे जहालत में आराम मिलने लगा है ।"[75]

---

72. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 181
73. - वही - 412
74. - वही - 429
75. - वही - 430

यहाँ सत्य का संकेत सुगनी जैसों से है जो जानबूझकर गलत कामों में लिप्त होते हैं । सुगनी अपनी मर्जी से सुरजू के साथ सम्बन्ध बनाती है, सुरजू की धौंस से डरकर नहीं । यदि वह अपनी इच्छाओं पर नियंत्रण कर पाती तो उसे सुरजू सिंह के पास जाने की जरूरत ही नहीं पड़ती । किंतु सुगनी सुरजू सिंह के प्रलोभन से खिंचकर उनकी ओर बढ़ती है और यह प्रलोभन भी सामंतवाद का एक हथियार है ।

"अलग-अलग वैतरणी" में दलित-मजदूरों के कई स्तर दिखाई देते हैं - एक दुक्खन है जो चुपचाप गाली-गलौज और मारपीट सहकर भी ठाकुर की सेवा में अपने जीवन की सार्थकता समझता है । दूसरा झिनकू है जो जुल्म के खिलाफ आवाज उठाता है, पर वह डरा और सहमा हुआ-सा लगता है । लेकिन सत्य निर्भय होकर आत्मसम्मान के लिए, हर तरह के अत्याचार का विरोध करता है । जैपाल सिंह के लठैतों ने चमारों को बुरी तरह पीटा और औरतों के साथ दुर्व्यवहार किया । इस घटना से दुखी चमार बचऊराम चौधुरी की अगुवाई में जैपाल सिंह से न्याय मांगने जाते हैं । "बात है सरकार कि हम आपकी परजा की ओर से गुहार करने आए हैं ।"[76] दलितों के दब्बूपन का इससे बड़ा सबूत और क्या हो सकता है कि पीड़ित स्वयं गलती स्वीकार कर लेता है । बचऊराम कहते हैं कि, "मालिक तो वह है सरकार कि साँसत भी करे और फिर दया भी । चोट करे तो मरहम भी लगाए । परजा ने गलती की । अब सरकार से अर्दास है, उसे माफ किया जाए ।"[77] ठाकुर जैपाल सिंह के सामने दलितों में सच कहने का साहस नहीं होता । दूसरी तरफ दलित-चौधरी अपने ही समुदाय का शोषण करने पर आमादा

---

76. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 423

77. - वही - 423

हैं । लच्छीराम चौधुरी पंचायत में शिरकत करने के लिए फीस माँगते हैं । उनका कहना है कि, "मामला परेशानी का है । पचास रूपए से कम पर मैं नहीं जाता ऐसे बटोरो में कुछ कुघट घट गया तो अखबारों में नाम तो मेरा छपेगा । बदनामी मेरी होगी । औरों को कौन जानता है ऊपर ऐसी हालत में इधर-उधर लोगों को पान-पत्ता के लिए कुछ चाहिए कि नहीं ।"[78] इस तरह दलित ऊँची जातियों के अत्याचारों का शिकार तो होते ही हैं अपनी बिरादरी के नेताओं द्वारा भी ठगे जाते हैं । वे दोनों तरफ से मारे जाते हैं । पर इसी उपन्यास (अलग-अलग वैतरणी) में सुरजू-सुगनी प्रसंग को लेकर जब चमारों की पंचायत बटोरी जाती है, तो उसमें कुछ नए विचार भी सामने आते हैं । कॉलेज का छात्र एवं नई चेतना का प्रतिनिधि सूरजभान इन नेताओं की खिल्ली उड़ाता है और कहता है कि, "मेरी राय पंचों को पसंद नहीं आएगी । यहाँ सभी समझौतावादी हैं । बटोर करेंगे । खाएँगे-पीएँगे । बहेरी लगाकर पंचों की खातिर-तवज्जह होगी । रातभर झाँव-झाँव करके फैसला करेंगे कि भाइयो, जो हुआ सो हुआ । बात बढ़ाने से क्या लाभ । चलो मिल-जुलकर ऐसा कुछ करें कि न साँप मरे और न लाठी टूटे । मैं उस तरह के खयालों का मुरीद नहीं हूँ ।"[79] सूरजभान इस अपमान का बदला लेना चाहता है और मानता है कि यह लड़ाई ठाकुरों और चमारों के बीच की लड़ाई है, जबकि सत्य भगत इसे अपनी जाति के भीतर की लड़ाई मानता है । सुगनी का बाप डोमन भी पंचायत के पक्ष में नहीं है । क्योंकि वह न तो पंचायत का खर्च दे सकता है और न ही ठाकुरों से दुश्मनी ही मोल ले सकता है । वह गरीब है और इसलिए चुप रहकर सब कुछ सह लेना चाहता है । सच ही है कि ये पंचायतें गरीबों

---

78. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 427
79. - वही - 428

को कोई लाभ तो नहीं पहुँचातीं, बल्कि बदले में उन्हें और दरिद्र और पंगु बना देती हैं । इस तरह दलित समाज में, उनके विचारों में परिवर्तन आता है और वे समझौतावाद से संघर्ष की ओर बढ़ते हैं । यह संघर्ष "जल टूटता हुआ" में भी परिलक्षित होता है । मालिक और नौकर के बीच तनाव की रेखाएँ यहाँ भी उभरती हैं । जगपतिया और रमपतिया दोनों भाई ज़मींदार महीप सिंह के यहाँ नौकरी करते हैं । पर गरीबी से परेशान होकर रमपतिया शहर चला जाता है । महीप सिंह को यह बात अच्छी नहीं लगती । जगपतिया भी काम करने नहीं आता है तो महीप सिंह बुलाकर उसे मारने-पीटने की धमकी दे डालते हैं । लेकिन जगपतिया इससे डरता नहीं कहता है, "खेत तो आपने हमारे बाप-दादों की नौकरी में दिया था, कोई एहसान तो नहीं है । खेत में कुछ होता ही नहीं है । हम दोनों भाई आपके यहाँ खटते हैं, तो खेतों में अपने आप अन्न पैदा हो जाएगा ?"[80] एक तरफ भूस्वामियों का दबाव, दूसरी ओर प्राकृतिक आपदा-- बेचारे मजदूर दोनों ओरसेतबाह हो जाते हैं । लेकिन अन्याय के खिलाफ वे आवाज उठाते हैं । शिक्षा की ओर भी दलित-मजदूरों का ध्यान आकृष्ट हुआ । हरिजन नेता जग्गू विद्यालय के निर्माण में विशेष रूचि दिखाता है । उसका कहना है कि, "स्कूल सबका है, हम हरिजन लोग अगर रूपया-पैसा नहीं दे सकते हैं तो मिहनत तो दे सकते हैं न ।"[81] इस जागरूकता के बावजूद इस वर्ग में कोई खास बदलाव नहीं दिखाई देता । इसका प्रमुख कारण इनका सामाजिक-आर्थिक पिछड़ापन है । हरिजन नेता जग्गू की बहू मजदूरी करती है । उनकी पत्नी देहात में घूम-घूम कर बच्चे पैदा कराती है । इस तरह, वे गोबरहे की रोटी खाने के लिए मजबूर हैं । "बहू मैं कस्बे जा रहा हूँ,

---

80. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 30
81. - वही - 118

देर से लौटूँगा, तुम यहाँ से जाकर दीनदयाल बाबू के खलिहान से गोबरहा बटोर लेना और मैं देर से आऊँगा । हाँ, कल खाने को नहीं है आज की मजूरी लेकर ही घर आना ।"[82] दलित-मजदूरों की विपन्नता का यह एक यथार्थ चित्र है । मजदूरी पर इनकी निर्भरता इतनी अधिक है कि बाढ़ की आशंका से जग्गू चिंतित हो जाते हैं, "हम लोगों के पास खेत नहीं है । लेकिन हमारी खुशहाली तो गाँव की खुशहाली के साथ जुड़ी हुई है । मालिकों के खेत बह जाएँगे तो हरिजन भाइयों को भी खाने-पीने को कहाँ से मिलेगा ?"[83] मजदूरों का परावलम्बन उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति को मजबूत नहीं होने देता । "अलग-अलग वैतरणी" का सरूप भगत इस तथ्य से परिचित है । वह भी मजदूर है पर कहीं बँध कर नहीं रहता । उसमें स्वतंत्र चेतना का भाव है । वह कहीं स्थायी रूप से बसना नहीं चाहता क्योंकि उसे परम्परागत नौकरों-मजदूरों की व्यथा की अनुभूति है । जीवन की जटिलताओं से गुजर चुका है । अपनी बेबाकबयानी व दूर-दर्शिता से प्रभावित करता है । जबकि सूरजभान अधकचरे अनुभव वाला एक शिक्षित युवक है । वह समझौतापरस्ती के खिलाफ है । पर उसमें संयम के बजाय उत्तेजना बहुत है, धैर्य और गंभीरता नहीं है । बचऊराम जैसे पुरानी मानसिकता वाले चौधुरी मौके पर हथेलियाँ मलते ही रह जाते हैं । भू-स्वामियों के सामने उनकी बोलती बंद हो जाती है । ऐसे लोग जाति का कैसे कल्याण करेंगे ? जो दूसरों (भूस्वामियों) की गलतियों को अपने ऊपर ओढ़ कर माफी माँग लेते हैं । लच्छीराम जैसे कांग्रेसी हरिजन नेता अपनी ही जाति का शोषण करते हैं । पंचायत में शिरकत करने के लिए घूस लेते हैं । पर स्वयं को हरिजनों का उद्धारक एवं हितैषी मानते हैं । जग्गू भी

---

82. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 22।
83. - वही - 38।

कांग्रेसी है । पर वे और उनका पूरा परिवार मजदूरी करके पेट भरते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" में सत्य भगत जाति-पंचायत के निर्णय के विरूद्ध था । सूरजभान की उत्तेजना समस्याकेसमाधान की कोई उचित दिशा नहीं तय कर पाती । फलतः हिंसक झड़प में सत्य भगत मार दिया जाता है । सूरजभान की जिद से हरिजनों ने एक समझदार, साहसी एवं दूरदर्शी व्यक्ति खो दिया और बदले में उन्हें कुछ भी नहीं मिला । जबकि "जल टूटता हुआ" में महीप सिंह के खिलाफ जगपतिया का विद्रोह अभीष्ट को प्राप्त कर लेता है । वह महीप सिंह को शिकस्त देता है । अपने आक्रोश को मूर्तरूप देने के लिए वह ज़मीन तैयार करताहैऔर तब महीप सिंह से अंतिम लड़ाई लड़ता है ।

"अलग-अलग वैतरणी" में दलित-मजदूरों के व्यक्तित्व के अनेक आयाम दिखाई देते हैं । किसी में दब्बूपन है ,कोई सहमते हुए विरोध करता है, तो कोई खुलकर विरोध करने की हिम्मत रखता है । कोई वस्तुस्थिति को पहचान कर आत्मान्वेषण की सलाह देता है तो दूसरा अपनी जाति-प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए दो-चार होने को आतुर है । इनमें विरोध के विभिन्न तेवर दिखाई देते हैं । "जल टूटता हुआ" में दलित-मजदूरों को इतने व्यापक और विविध रूपों में नहीं दिखाया गया है इसलिए इनमें दलितों की पूरी तस्वीर नहीं उभर सकी है ।

कुल मिलाकर आजादी के बाद दलितों और मजदूरों में अपनी स्थिति को लेकर छटपटाहट दिखाई देती है । वे परम्परागत बंधनों एवं सीमाओं को तोड़ते हैं और अपने लिए नई ज़मीन की तलाश करते हैं ।

6. गाँव से शहर गए लोग

"जल टूटता हुआ" में रामकुमार पढ़ाई करने शहर जाता है । धीरे-धीरे उसे राजनीति का चस्का लगता है और वह कांग्रेसी बन जाता है। कहता है कि, "गाँधी जी की पुकार है कि देश को आजाद करने के लिए विद्यार्थी सामने आएँ । देश को आजाद करना पहला धर्म है । पढ़ाई-लिखाई बाद में ।"[84] वह अपनी सहपाठिनी मिस सेन से एकतरफा प्यार करने लगता है और एक दिन मिस सेन का हाथ पकड़ कर जब अपने प्रेम का इज़हार कर रहा होता है तभी मिस सेन का तमाचा उसके गालों को झन-झना देता है । इस घटना के बाद कांग्रेस उसे बुर्ज्वा पार्टी दिखाई देने लगती है । तब मार्क्सवाद से प्रभावित होकर सोशलिस्ट पार्टी में चला जाता है । रामकुमार जिस उद्देश्य को लेकर गाँव से आया था उसे गौण समझने लगता है और राजनीति एवं प्रेम को मुख्य कर्तव्य पर मिस सेन से उसका दुराव उसके घटिया परीक्षा परिणाम को देख कर होता है जबकि पहले वह एक मेहनती छात्र के रूप में अपनी पहचान बना चुका था ।

वंशी गरीबी से तंग आकर कलकत्ता भागता है । बरसों बाद लौटता है तो दिमाग में महानगर की रंगीनी छाई होती है । वह बात-बात में बंगालिनों के रूप-लावण्य एवं आकर्षण का बखान करता है । पत्नी सलोना चिढ़ती है तो कहता है, "क्यों डाह होता है । ठीक ही तो कहता हूँ । तुम लोग तो उनके पैर की धोवन भी नहीं हो ।"[85] घर भदेस लगता है

---

84. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 45
85. - वही - 160

और सलोना फूहड़ । "हई देखो रे इस फुहरिया का, सटर-सटर ज़बान चलाती है मेरे साथ ।"[86] पराई स्त्रियों के कल्पित मोह-लोक से उसका भ्रम अभी टूटा नहीं है । सुख की मृगतृष्णा में परदेस और पर-नारियों का आकर्षण उसे सलोना से दूर करना चाहता है, जबकि वास्तविक उसके पास है, सलोना के रूप में जो उसके प्रत्येक दुख-दर्द में शामिल होती है ।

चन्द्रकांत को भाई के मार्ग-दर्शन की जरूरत महसूस होती है । वह आई. ए. एस. बन जाता है फिर भी बड़े भाई सतीश के प्रति उसकी श्रद्धा और सम्मान में कोई कमी नहीं आती । वह सतीश की छाया को जरूरी समझता है, "भइया, ऐसी अशुभ बातें क्यों मुँह से निकालते हैं । आपके बिना मुझे रास्ता कौन दिखाएगा ।"[87] शहर में रहने एवं उच्चअधिकारी बन जाने के बावजूद दोनों भाइयों में प्रेम-भावना पूर्ववत् है । संयुक्त परिवारों के निरंतर टूटने की स्थिति में अब ऐसा कम ही दिखाई देता है ।

सतीश तो शहर में रह ही नहीं पाता । उसमें गाँव इस तरह समाहित है कि शहर काटने दौड़ता है, "उसे उन गंदी गलियों, बहते हुए नाबदानों, उनके पास बनी हुई गंदी चालियों और उनमें कसे हुए लोगों की याद से उबकाई आने लगी । कितना गीला-गीला मौसम, कितनी गीली-गीली जमीन, कितनी सड़ी-सड़ी हवा और गंदगी के बीच कीड़ों की तरह बिलबिलाती ज़िन्दगी ।"[88] सतीश इस वातावरण से उबकर गाँव लौट आता है, जहाँ उसे खुले वातावरण में स्वस्थ हवा-पानी तो मयस्सर होता है । सतीश में गाँव के प्रति विशेष लगाव है, आसक्ति की हद तक । शायद

---

86. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 161
87. - वही - 382
88. - वही - 69

इसीलिए शहर में पैसा कमाने की बजाय गाँव में खेती करना उसे ज्यादा अच्छा लगता है ।

चन्द्रकांत गाँव और शहर के बीच फर्क महसूस करते हुए कहता है कि, "गाँव शहरों से बदतर हो गए हैं । शहर तो कई माने में इनसे बहुत अच्छे हैं ।"[89] लोगों के कहने पर भी उसे गाँव जाने की इच्छा नहीं होती क्योंकि, "नीचतापूर्ण झगड़े-टंटे, लूट-पाट, मार-पीट, फूँका-तापी, चुगली-निंदा, यही तो गाँव में रह गया है ।"[90] विपिन का अहसास तो और अधिक तीक्ष्ण है, "मारो साले गाँव को गोली । साल भर तक मैंने इस गाँव में रहकर जान लिया कि यहाँ किसी भले आदमी का रहना मुश्किल है । यह एक जीता-जागता नरक है, जिसमें वही आता है, जिसके पुण्य समाप्त हो जाते हैं ।"[91] अंत में गाँव के वातावरण से ऊबकर विपिन शहर चला जाता है । देवनाथ डॉक्टर है । वह भी कस्बे में अपना दवाखाना खोल लेता है । गाँव में होने वाली निंदा-शिकायतों एवं पिता झब्बूलाल द्वारा उसके प्रत्येक कार्य में अड़चन पैदा किए जाने की प्रवृत्ति से मुक्ति पा लेता है । कहता है, "खूब मजे से हूँ यहाँ न हाय-हाय, न झाँव-झाँव । सुबह कुछ भीड़ जरूर रहती है । मरीजों में घिरा रहता हूँ । बड़ी बात यह है कि यहाँ कोई बिना समझे-बूझे मेरे मामलों में टाँग नहीं अड़ाता ।"[92] ये युवक अपने कार्यों में अनावश्यक दखलंदाजी को बर्दाश्त

---

89. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 314
90. - वही - 314
91. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 469
92. - वही - 465

नहीं करना चाहते, जबकि गाँव में इनके काम में बाधा डालने वाले बहुत मिलते हैं । इन शिक्षित युवकों की मानसिकता को लोग समझ नहीं पाते और खिल्ली उड़ाते हैं । इन्हीं समस्याओं से परेशान होकर युवक शहर में रहना ज्यादा पसंद करते हैं, जहाँ अपने विचारों को कार्यरूप देने के लिए उन्हें उन्मुक्त वातावरण मिलता है । चन्द्रकांत, देवनाथ और विपिन उच्च शिक्षा प्राप्त युवक हैं । गाँव के बिगड़ते स्वरूप से उन्हें चिंता है । पर गाँव में कोई सुधार नहीं ला पाते क्योंकि परिस्थितियाँ व वातावरण उनके खिलाफ हैं । इसलिए असफल होकर वे शहर चले जाते हैं । विपिन इस हक़ीक़त को तल्खी से महसूस करता है, "आप जो भी कहिए मिसिर जी, करैता जैसा बदनाम, दरिद्र, गिरा हुआ, बीमार गाँव शायद ही इस देश में कहीं हो । यहाँ कोई भला आदमी रह ही नहीं सकता ।"[93] करैता क्या, "जल टूटता हुआ" का तिवारी पुर गाँव तो और भी पिछड़ा है । वहाँ का सर्वाधिक पढ़ा-लिखा युवक चन्द्रकांत तो गांव जाने के नाम पर मानो काँपने लगता है ।

कुल मिलाकर इन उपन्यासों में गाँव का शिक्षित युवा-वर्ग गाँव में फैल रही विकृतियों से चिंतित है और स्वयं शहर में ही रहना पसंद करता है, जबकि अशिक्षित और कम पढ़े-लिखे लोग शहर में नौकरी के लिए जाते हैं परन्तु ज्यादा मेहनत, कम मजदूरी तथा गंदी बस्तियों में रहने के कारण बीमार होकर गाँव लौट आते हैं ।

---

93. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 484

7. युवा पीढ़ी

"जहाँ-जहाँ ऊँची जाति वालों के गाँव हैं खास करके ब्राह्मणों-क्षत्रियों के, वहाँ-वहाँ यही हाल दीख रहा है - सभी भीतर से टूट रहे हैं, बाहर से गरज रहे हैं, सारे मूल्य बाहर से छूटते जा रहे हैं - कहीं सूझता नहीं इन्हें, वे केवल अपने-अपने स्वार्थ को देख रहे हैं ।"[94]

चन्द्रकांत, एक शिक्षित युवा, मूल्यों में आ रही लगातार गिरावट से चिंतित है । उसे युवकों की दिशाहीनता से चिंता है. जहाँ निहित स्वार्थ की पूर्ति के लिए बुरा से बुरा काम करने के लिए लोग तैयार हैं, ऐसे वातावरण में युवा पीढ़ी किंकर्तव्यविमूढ़ है, गलत रास्ते पर जा रही है । उन्नति के सारे रास्ते बंद-से हो गए लगते हैं । चिंतातुर चन्द्रकांत गाँव में पधारे नेताओं के सामने प्रश्न करता है, "जिस जनता ने इन्हें अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजा है, उसकी आवाज इन्होंने कभी विधान सभा या संसद में उठाई ही नहीं । यहाँ के एम. एल. ए. पं. कालीचरन पाण्डे और एम. पी. बाबू सागर सिंह दोनों आए हुए हैं । दोनों सज्जनों से सवाल किया जा सकता है कि ये कितनी बार विधान सभा या संसद में बोले हैं ?"[95] अपनी बात को जारी रखते हुए वह आगे कहता है कि, "इनसे यह भी सवाल किया जा सकता है, ये जनता के बीच उसका दुख-दर्द समझने के लिए कितनी बार आए हैं ? आजकल के नेता लोग जनता में पिकनिक करने आते हैं -- दो घड़ी के लिए मन-बहलाव करने को ।"[96] आज़ादी के बाद युवा पीढ़ी को सबसे ज्यादा उम्मीद इन नेताओं से थी ।

---

94. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 314
95. - वही - 295
96. - वही - 295

लेकिन नेताओं के, सत्ता की लड़ाई में जुट जाने, भ्रष्टाचार में लिप्त हो जाने और जनकल्याण से मुँह मोड़ लेने के कारण युवाओं का इनसे मोहभंग हो गया । युवा पीढ़ी को सही रास्ता दिखाने का अपना कर्तव्य भी ये भूल गए । चन्द्रकांत की प्रतिक्रिया में जनमानस की उपेक्षा और युवाओं की कुंठा की यथार्थ अभिव्यक्ति दिखाई पड़ती है । शिक्षित युवक गाँव के वातावरण में कुंठित-से दिखाई देते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" में विपिन एवं देवनाथ विश्वविद्यालय की शिक्षा समाप्त कर गाँव में रहने की गरज से आते हैं । देवनाथ के बारे में विपिन की राय है कि, "देवनाथ का तो बड़ा ही सम्मानित पेशा है जनता की सेवा । कुछ ऐसा क्यों न करें कि अपना भी लाभ हो और जितनी बन सके, उतनी जनता की सेवा भी हो ।"[97] देवनाथ के विचार में, "नए आदमी के लिए रुपए से अधिक आवश्यकता यश की है । अगर मिल जाए तो पहले के जमे-जमाए दस डॉक्टरों के बीच में भी कोई दिक्कत नहीं होती । लेकिन अचानक उनके बीच में जाने से तो ईर्ष्या होगी । वे लोग भरसक कोशिश करके मुझे जमने नहीं देंगे । इसलिए यहीं खुले डिस्पेंसरी ।"[98] शशिकांत अध्यापक है । उसका तबादला करैता जैसी बदनाम जगह पर कर दिया जाता है तो भी वह मुस्कराते हुए कहता है कि, "करैता के बारे में आप सब लोग इतना जानते हैं कि उस अँधेरे में एक चिनगारी भी जला सका तो आप लोगों का स्नेह मिल जाएगा ।"[99] इन युवकों में एक उत्साह है - गाँव को बदलने का, चेतना का नवीन संचार करने का, नई रोशनी दिखाने का । शशिकांत छात्रों में व्याप्त घनी उदासी एवं एकरसता को तोड़ना चाहता है । अपने सहयोगियों से कहता है कि, "यहाँ का स्कूली जीवन बड़ा नीरस और डल

---

97. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 117
98. - वही - 118
99. - वही - 129

है । इससे बच्चों का पूरा विकास कभी नहीं हो सकता । मैं यह सोचता हूँ लड़कों में आवश्यक उत्साह पैदा करने के लिए पढ़ाई-लिखाई के अलावा भी कुछ कार्यक्रम होने चाहिए ।"[100] शशिकांत पढ़ाई के साथ-साथ खेलकूद का कार्यक्रम तो रखना चाहता है लेकिन गाँव के स्कूलों में न खेल का सामान होता है और न ही खेल का मैदान । फिर भी उसका उत्साह कम नहीं होता । विपिन गाँव के बदलते परिवेश को शिद्दत से महसूस करता है । उसे गाँव में फैल रही विकृतियों से चिंता होती है । "यह गाँव तो अब वह रहा ही नहीं । जिधर देखता हूँ एक अजीब कुहराम है । सभी परेशान हैं, सभी दुखी पता नहीं इस गाँव पर किस ग्रह की छाया पड़ गई है ।"[101] वह पुलिस की ज्यादती के खिलाफ बोलता है । "मेरे दरवाजे पर तो आप इनको गिरफ्तार नहीं ही कर सकते थानेदार साहब और उधर गली-वली में किया भी तो मैं आपको बिना अदालत देखाए छोड़ूँगा नहीं ।"[102] इस तरह विपिन एक जागरूक युवक का परिचय देता है । वह अपने सामाजिक सरोकार से वाकिफ है इसीलिए तो कहता है कि, "एक आदमी पर अत्याचार होगा और मैं देखता रहूँगा ?"[103] अर्थात् नहीं. विपिन की सजगता एवं दृढ़ता के कारण जग्गन मिसिर पर कोई आँच नहीं आने पाती । विपिन व्यवस्था की अनधिकार चेष्टा का विरोध करता है पर घरेलू मामलों में कुल-मर्यादा और परम्परा की सीमा नहीं

---

100. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 133
101. - वही - 191
102. - वही - 261
103. - वही - 261

लाँघ पाता, जिसके कारण वह कलंकित भी होता है और अपना प्यार भी खो बैठता है । बड़े भाई की इज्ज़त बचाने के लिए अपने माथे पर कलंक लगा लेता है, "मुझसे झगड़ा हो गया था भइया का, बातचीत में हाथापाई होने लगी । वे पीछे हटे बस नाले में गिर पड़े ।"[104] शशिकांत को अपने सहयोगियों से उपेक्षा मिलती है, उसके उत्साह को ठंडा करने का प्रयत्न किया जाता है । इसीलिए तो वह कहता है कि, "अब हमारे गाँव उस स्थिति में पहुँच गए हैं, जहाँ दर्द की इंतहा ही दवा बन जाती है । दर्द का हद से गुजरना है दवा हो जाना. हमारी मानसिक स्थिति धीरे-धीरे इस ढंग की हो जाती है कि लगने लगता है कि जो है वही ठीक है ।"[105] वह गाँव की राजनीति में नहीं पड़ना चाहता । सूरजू सिंह से कहता है, "मैं यहाँ नौकरी करने आया हूँ कि कचहरी करने ? गरीब शिक्षक हूँ, मेरा इन सब मामलों में पड़ना कहाँ तक ठीक होगा ?"[106] लेकिन वह गाँव की तुच्छी राजनीति का शिकार हो ही जाता है । देवनाथ से कहता है, "क्या बताएँ डॉक्टर साहब, मैं तो किसी तरफ का नहीं रहा । सुबह गया था मिडिल स्कूल पर तनखा लाने । बस से उतर कर आ रहा था कि कुछ लोगों ने मिलकर बुरी तरह पीटा । आँख में बालू डाल दी और सारे रूपए छीन ले गए ।"[107] यह गतिशीलता के विरुद्ध जड़ता का हमला था । शशिकांत के उत्साह, गतिशीलता और उसकी कर्तव्य परायणता पर आघात होता है, "सूरज की रोशनी में शशिकांत करैता आया था । आज वह रात की अन्धेरे में अपने सारे हौसले लुटाकर लौट रहा है ।"[108] ये पंक्तियाँ निश्चय ही विषाद की एक गहरी रेखा छोड़ जाती हैं ।

---

104. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 271
105. - वही - 313
106. - वही - 366
107. - वही - 372
108. - वही - 375

"अलग-अलग वैतरणी" में पटनहिया और देवनाथ के प्रेम-सम्बन्ध को लेकर चर्चा का बाजार गर्म होता है । उसके माता-पिता इस खबर से चिंतित होकर वंशी सिंह के घर जाने से उसे रोकते हैं । देवनाथ भी इन झमेलों से परेशान होकर कस्बे में दवाखाना खोल लेता है । "कल्पू की दवाई के प्रसंग पर आखिर तू-तू मैं-मैं हो ही गई । इसी बीच जगजीत सिंह बोने जाने क्या-क्या कहा अम्मा से कि जिसे सुनकर उनका चेहरा एकदम विकृत और काला पड़ गया । मैंने यह चीज भाँप ली और बात बढ़े नहीं, इसी डर से कल्पू के यहाँ जाना ही छोड़ दिया ।"[109] इस तरह देवनाथ रूढ़िवादी बाप के आगे आत्मसमर्पण कर देता है । लेकिन मन में विद्रोह का भाव तो रहता ही है, असहमति की पूरी गुंजाइश भी । इसीलिए तो कहता है कि, "ये लोग हमें इसलिए नहीं पढ़ाते कि लड़का पढ़-लिखकर अपने पैरों पर खड़ा हो जाएगा । अपनी जिन्दगी आप जीने की उसमें शक्ति आ जाएगी. नहीं, वे पढ़ाते इसलिए हैं कि पढ़े लड़कों को भजाने से ज्यादा पैसा मिलता है ।"[110] इससे दहेज प्रथा की विकराल समस्या का संकेत मिलता है । साथ ही नई और पुरानी पीढ़ी के बीच मतभेद भी उजागर होते हैं । उपन्यास में प्रेम-सम्बन्धों को भी चित्रित किया गया है । विपिन और देवनाथ का पटनहिया भाभी की ओर झुकाव एक त्रिकोण बनाता है । विपिन देवनाथ से पूछता है, "तो पटनहिया भाभी से तुम्हारा कोई लगाव नहीं था ?"[111] देवनाथ झेंपता है फिर विपिन को चित्त करने के लिए दाव चलता है, "उसने तो मुझसे कहा कि पिछली मकर संक्रांति को गंगा नहाने के लिए वह कनिया से पूछने गई थी छावनी में । कनिया थी नहीं । आप थे सिर्फ । वह कहती थी कि आपने बुरे विचार से उसका हाथ पकड़

---

109. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 467
110. - वही - 468
111. - वही - 468

लिया था ।"[112] विपिन आहत हो जाता है । दोनों एक दूसरे पर वार कर कुछ देर सन्नाटा बुनने लगते हैं । फिर विपिन शर्म एवं कुंठाभरे मन से झल्लाकर कहता है, "भारो साले गाँव को गोली । साल भर तक मैंने इस गाँव में रहकर यह जान लिया है कि यहाँ किसी भले आदमी का रहना मुश्किल है ।"[113] गाँव में जो हो रहा है उसे कोई भी संवेदनशील मनुष्य पसंद नहीं करेगा और गाँव में रहकर कुंठित होगा । विपिन इन्हीं बातों की ओर संकेत करता है, "घरों में बंद आपाद-मस्तक डूबी औरतें, जो एक-दूसरे को खुलेआम चौराहे पर नंगियाने में ही सारा सुख एवं खुशी पाती हैं, फुँफुआते मन के अपाहिज जैसे नवयुवक, जो अँधेरी बंद गलियों में बदफेली करने का मौका ढूँढते फिरते हैं, हारे थके प्रौढ़ जो न गृहस्थी के जुए को उतार पाते हैं, न उसमें उत्साह से जुत पाते हैं । मौत का इंतज़ार करते बुड्ढे अपने ही बेटे-बेटियों से उपेक्षित बिलबिलाते रहते हैं ।"[114] गाँव में जड़ता आ गई है । उत्साह की जगह एक सूनापन बिखरा हुआ है । लोगों में निहित स्वार्थपरता, वैमनस्य एवं हिंसा की प्रवृत्ति बढ़ी है । युवा परम्परा के जड़-बन्धनों को तोड़कर आगे बढ़ रहा है । लेकिन गाँव में हो रही निरंतर पतनशीलता से चिंतित भी है । शशिकांत, देवनाथ, विपिन और चन्द्रकांत सभी इस दुश्चिंता से ग्रस्त है । "अलग-अलग वैतरणी" में विपिन की उम्मीदों पर पानी फिर जाता है तो कहता है, "यहाँ रहकर कूड़ा बनने से तो अच्छा है कहीं चला ही जाऊँ । मैं तो बड़ी उम्मीदें लेकर आया था । जन्मभूमि के प्रति अपने मन में कम मोह नहीं है । पर ऐसा गंदा और वाहियात हो गया है यह

---

112. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 468
113. - वही - 469
114. - वही - 469

गाँव, यह मैं नहीं जानता था ।"[115] वह इस गिरावट के लिए गाँव के लोगों को ज्यादा जिम्मेदार मानता है । विपिन को गाँव लौटकर क्या मिला ? बदनामी और कुंठा के सिवाय । विपिन बड़े भाई के आचरण और पटनहिया से अपने प्रणयसम्बन्ध की चर्चा सुनकर कुंठित एवं अपमानित महसूस करता है । उसकी बालसखी पुष्पा का विछोह उसे और अधिक परेशान कर देता है । "फिर गाँव का क्या होगा ।" यह अनुत्तरित प्रश्न लिए विपिन करैता की धरती से विदा लेता है ।

करैता में विपिन की जिन्दगी में दो घटनाएँ होती हैं । पहली, पुष्पा के प्रति उसकी तटस्थता जिसका एक कारण, बुझारथ की पुष्पा पर कामुक-दृष्टि और दूसरा, कुल-मर्यादा का सवाल । "मान-मर्यादा, झूठी शान, अपने को खतरे के सामने ढँके रहने की प्रवृत्ति सभी ने मिलकर उसके गले को रूँध दिया ।"[116] यानी उसके और पुष्पा के रास्ते में मालिक और नौकर की भावना आ खड़ी होती है । दूसरी प्रमुख घटना, जिसने विपिन के मन में बवंडर ला दिया, वह है पटनहिया की ओर विपिन का झुकाव, जो यक़ीनन विपिन के जीवन में एक नया मोड़ ला देता है । घर के सूनेपन में एक दिन विपिन जब पटनहिया का हाथ पकड़ लेता है और कहता है, "क्यों, सारा काम दिदिया से ही रहता है, या कहीं मेरे पास खड़ा होने में डर तो नहीं लग रहा है ?"[117] तो उसकी जवानी शोला बनकर धधकना चाहती है, पर यहाँ भी कुल मर्यादा की सीमा उसे आगे बढ़ने से रोक देती है । उधर पटनहिया भी हाथ छुड़ाकर चली जाती है । यहाँ भी विपिन को असफलता ही हाथ लगती है । पुष्पा एक गरीब किसान की बेटी है । बुझारथ उसे जबर्दस्ती पाना चाहता है । वह लम्पट और कामुक है ।

---

115. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 484
116. - वही - 332
117. - वही - 336

पुष्पा को पाने के लिए साजिश रचता है, किंतु पुष्पा संयोगवश उसके जाल में आने से बच जाती है । अपने बालसखा विपिन को यह विश्वास दिलाना चाहती है कि वह निर्दोष है । विपिन रूआँसा हो जाता है । "वह अचानक ममता से भर उठा. उसने पुष्पा के हाथ को बड़े प्यार से खींचा । वह उसकी गोद में गिर गई । विपिन ने उसका मुँह चुम्बनों से भर दिया।"[118] इस तरह विपिन पुष्पा और पटनहिया के बीच हिचकोले खाता हुआ अंतत: निष्क्रिय एवं निर्लिप्त-सा हो जाता है । वह पुष्पा और पटनहिया दोनों को नहीं प्राप्त कर पाता । देवनाथ अपने कार्यों में पिता के बार-बार हस्तक्षेप से परेशान हो जाता है । स्थिति जब असह्य हो जाती है तो गाँव छोड़कर कस्बे में दवाखाना खोल लेता है । चन्द्रकांत का गाँव में आना-जाना बहुत कम हो पाता है । उसे गाँव की नीरस एवं बोझिल ज़िन्दगी पसन्द नहीं । शशिकांत जड़ता में गतिशीलता और अंधेरे में रोशनी जलाने का उत्साह लेकर आता है लेकिन बदनामी और अपमान का बोझ लिए उसे लौटना पड़ता है ।

कुल मिलाकर शिक्षित युवा-वर्ग आदर्शों के प्रभाव में गाँव में रहने के लिए आता है ताकि इसे बदला जा सके, इसका विकास करके इसे सँवारा जा सके । लेकिन गाँव की जड़ता, कुसंस्कारों, रूढ़िवादिता और ओछी राजनीति का शिकार बनकर आखिरकार गाँव से घृणा करता हुआ गाँव छोड़कर फिर शहर चला जाता है ।

---

118. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 304

8. स्त्रियाँ

"मैं जिस आदमी को ब्याही गई, उसने मुझे औरत की तरह कभी नहीं देखा । सच तो यह है दिदिया कि मैंने यह जाना ही नहीं कि आदमी के माने क्या होता है ।"[119] यह तथ्य ही पटनहिया की दारूण स्थिति की पराकाष्ठा है । शादी के बाद कल्पू के साथ बिताए गए कुछ क्षणों में ही पटनहिया को दुश्चिंताएँ घेर लेती हैं । धीरे-धीरे कल्पू की निश्चल एवं निर्विकार भावना का रहस्य मालूम हो जाता है और उनका मन ग्लानि से भर उठता है । सुहागरात का करूण प्रसंग पटनहिया के त्रासद जीवन का संकेत दे देता है । पति के प्यार एवं दैहिक सुख के अभाव में पटनहिया बच्चों को नंगा कर अपनी कुंठा शांत करने का प्रयत्न करती है । "सासुओं की मीठी झिड़कियों के कारण वे कपड़े लौटा देती, पर चीरहरण लीला से बाज नहीं आती । कपड़े लौटाती हुई पटनहिया भाभी नंगे लड़के की ओर कनखी से देखती रहतीं और जाने क्यों उनकी आँखें डबडबा जातीं ।"[120] सच्चाई जान लेने के बाद पटनहिया मन को सांत्वना देती हैं कि, "मैंने अपने हिरदा को समझाय लिया दिदिया कि चलो अपने करम में यह था ही नहीं । सब है, एक नहीं ही है तो क्या हुआ । सब चीज खाया, एक चीज नहीं ही खाया तो उससे क्या । पर यह जिन्दगानी भार लगने लगी ।"[121] क्योंकि उनकी जिन्दगी में कोई आकर्षण नहीं रह गया था । स्त्री-पुरूष के जीवन को सुखमय बनाने वाला प्रमुख तत्त्व ही नहीं था ।

---

119. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 461
120. - वही - 151
121. - वही - 461

पटनहिया के साथ जिन तीन पुरूषों के प्रणय सम्बन्ध की चर्चा हुई है उसके बारे में उनका कहना है कि, "करैता में तीन ही आदमी थे जो मेरी मदद कर सकते थे, विपिन देवर, देवनाथ और स्कूल के मास्टर शशिकांत । मास्टर बाहरी थे बाकी दो घर के ही थे । उनमें भी सबसे नजदीकी विपिन ही थे हमारे । पर दिदिया तुझसे झूठ नहीं बोलूँगी । विपिन देवर ने पहले ही दिन ऐसी बात कही कि मेरा एड़ी से लेकर चोटी तक बदन आग में झुलस गया ।"[122] शशिकांत के बारे में कहती है कि, "शशिकांत मास्टर हीरा आदमी था दिदिया । मैंने जब सुना कि किसी ने उसे मारकर रूपए छीना है तो मैं खूब रोई थी । मुझे जाने क्यों लगता था कि मेरी जैसी अभागिन के पास आने से ही उसका नुकसान हुआ ।"[123] देवनाथ के साथ अपनी नजदीकी को स्पष्ट करते हुए कहती हैं कि, "मैं सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि तू मुझे वैसा ही मत मान लेना जैसा गाँव वाले कहते हैं । देवनाथ ने जरूर दवाई करने के एहसान में कुछ आगे बढ़ने की कोशिश की । पर मैं दिदिया दुखी थी, बेचारी नहीं, मैं किसी की किरपा नहीं चाहती थी । वहाँ सब किरपा करने ही वाले थे ।"[124] एक शिक्षित, सुन्दर, जवान और समझदार स्त्री का पुरूष-समाज के खिलाफ विद्रोही तेवर उभर कर सामने आया है । पटनहिया दुखी तो है लेकिन वह किसी पुरूष को इसका फायदा नहीं उठाने देती । जबकि पुरूष इस स्थिति का फायदा उठाने की कोशिश करते हैं । पटनहिया के विक्षोभ का एक महत्वपूर्ण पहलू समाज में पुरूष के आधिपत्य को लेकर भी है जिसके तहत स्त्री नपुंसक के साथ ब्याह दी जाती है । मानो उसके जीवन का कोई मोल नहीं है । पटनहिया के जीवन की त्रासदी उसके पति की नपुंसकता है, तो पुष्पा

---

122. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 461
123 - वही - 462
124. - वही - 462

गरीबी के नाते विपिन को खो देती है । "अपनी-अपनी किस्मत -- हम गरीब हैं बिना साग-पात के जी नहीं सकते । मुझे जाना पड़ा । मुझे क्या मालूम था कि गले पर छुरी चलाने की तैयारी हो रही है ।"[125] पुष्पा विपिन की नजरों में गिरकर नहीं जीना चाहती । इसलिए कहती है, "यदि तुमने भी मुझे बुरी मान लिया हो तो मैं मुँह काला करके किसी पोखर कुइयाँ में डूब मरूँगी ।"[126] पूरे गाँवमेंविपिन ही सिर्फ उसका अपना है, उसी पर अडिग विश्वास है । पिता पर आए कुर्की के संकट से उबरने के लिए वह विपिन के पास जाती है । "तुझे से, जब से सुना है कि तुम आए हो, कई बार तुमसे मिलने की इच्छा हुई, पर मैं संकोच में पड़ी रही । पर ऐसे समय में तुम्हारे सिवा मुझे कोई दूसरा दिखाई भी तो नहीं पड़ता ।"[127] इस तरह वह घर पर आए संकट को दूर करती है, यानी एक तरह से जिम्मेदारी का भी निर्वाह करती है । उसकी गरीबी से कनिया को भी सहानुभूति है । वे कहती भी हैं कि, "मुझे नहीं मालूम हरी कि विपिन ने उसे रुपए दिए कि नहीं । यदि दिए तो ठीक ही किया । आज अइयया जीती होतीं तो शायद कुर्की आती ही नहीं ।"[128] कनिया अपने बुजुर्गों को दिए वचन के प्रति निष्ठा व्यक्त करती है । यही कारण है कि पैसे की सख्त जरूरत पड़ने के बावजूद वह अपने वचन पर कायम रहती है, "मैं टुकड़े-टुकड़े बिक जाऊँगी पर वह कंगन नहीं दूँगी । मरते समय अइयया ने उसे मेरे हाथ में देकर कहा था कि यह कंगन विपिन की बहू को दे देना । मैं पुरखों से दगा नहीं कर सकती ।"[129] वह गाँव की राजनीति को भी अच्छी तरह जानती है । इसलिए वह अपने पति बुझारथ को ठाकुरों और चमारों के झगड़े में जाने से रोकती है, "लोग तो चाहते हैं कि बबुआनों की बोटी-बोटी

---

125. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 303
126. - वही - 303
127. - वही - 74
128. - वही - 109
129. - वही - 350

बाजार में बिक जाए । उनकी मंशा पूरी करने के लिए आप जैसा आदमी भी मिल गया है भाग्य से.लेकिन सुन लीजिए, यदि मेरा कहना टाल कर आप गए, तो इस छावनी में मेरी लाश ही मिलेगी आपको ।"[130] यह कनिया नहीं, एक जिम्मेदार औरत कहती है । परिवार का सारा खर्च, इज्जत-आबरू और सुख-दुख सब तो इसे ही देखना पड़ता है और बुझारथ एक कामुक,लम्पट एवं निकम्मे पति के रूप में उसकी जिन्दगी पर छाया हुआ है । कनिया का विपिन पर विशेष प्रेम झलकता है, जब वह मार-पीट में उसे जाने से एकदम मना कर देती है । विपिन जब घर छोड़कर नौकरी करने शहर के लिए जाने लगता है तो कनिया अंदर से हिल उठती है । "तुम्हारी खुशी में ही मेरी खुशी है । इतना जरूर चाहती हूँ कि जाते समय मुझे बेगाना बनाकर मत जाओ ।"[131] कनिया के ये शब्द इतने मार्मिक हैं कि पाठक के हृदय में भी टीस छोड़ जाते हैं । शहर के लिए प्रस्थान करता विपिन, करूणा से अभिभूत कनिया, आँखों से छलकते आँसू और अवरूद्ध कंठ से कनिया की आर्त्त वाणी -- "जा रहे हो विप्पी, जाओ । पर एकदम से बिसार न देना । यहाँ की हालत जानते ही हो । साल भर रहकर छाँह किए रहे । अब कौन देखेगा । कभी-कभी खोज-खबर लेते रहना"[132] -- जीवन के मर्मस्पर्शी चित्र उपस्थित करते हैं । कनिया की चिंता का एक प्रमुख कारण बुझारथ की गैर जिम्मेदारी है । जैपाल सिंह की मृत्यु के बाद कनिया की निगाहें विपिन पर टिकी हैं । बुझारथ के निकम्मेपन से उबकर कनिया विपिन को सँवारती है, एक माँ की ममता

---

130. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 435
131. - वही - 475
132. - वही - 483

देती है । बुझारथ के व्यवहार से आजीवन दुखी कनिया अपने व्यक्तित्व को विलीन कर परिवार को सँभाल लेती है । यह उसके व्यक्तित्व का बहुत महत्त्वपूर्ण पक्ष है ।

"जल टूटता हुआ" में बदमी एक सशक्त नारी चरित्र के रूप में चित्रित की गई है । नारी-जीवन की सम्पूर्ण व्यथा मानों उसमें आकार ग्रहण करती है । पुरुष-नियंत्रित समाज में स्त्री की दारुण दशा को बदमी के माध्यम से मुखर अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया गया है । बदमी अपनी पीड़ा को प्रेमी के सामने बयान करती है, "कहाँ-कहाँ की ठोकर खाकर आई हूँ, मैंने तुम्हारे मर्दों की दुनिया में लात-मुक्का, बदनामी, भूख, घृणा के अलावा क्या पाया ?"[133] कुंजू उसकी मनोव्यथा को गहराई से महसूस करता है क्योंकि वह स्वयं समाज की उपेक्षा, यंत्रणा और घृणा का शिकार है । शायद इसीलिए बदमी पुरुष की कामुक-वृत्ति की ओर लक्ष्य करते हुए कहती है, "औरत का मन भी कोई चीज है, इसे नहीं जानते, बस इसके तन को भोगेंगे और भोगने के बाद लात मारकर ठेल देंगे । भोगने के समय तो ऐसा लगेगा कि यह अमरित है । पाँव पकड़ेंगे, हाथ जोड़ेंगे, जीभ चाटेंगे, पूरी देह को अपने पवित्तर सिर पर ओढ़ लेंगे और जहाँ जोश ठंडा पड़ा, ताड़ी के चुक्कड़ की तरह उठाकर फेंक देंगे । हम ताड़ी हैं मरदों के लिए, बस एक नशा की चीज ।"[134] स्त्री को नशा की तरह, नशा के साथ भोगने की पुरुष की प्रवृत्ति समाज में नारी की दीन-हीन और अपमानजनक स्थिति की ओर संकेत करती है । इसी के साथ एक विडम्बना और परिलक्षित होती है जब एक स्त्री दूसरी स्त्री के साथ दुर्व्यवहार करती है । बदमी इस व्यवहार से बहुत दुखी होती है । "औरत का दर्द औरत

---

133. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 84
134. - वही - 85

हो जानती हैं, मगर कैसी दुनिया है तिवारी कि औरतें यह दरद भोग कर भी एक-दूसरे पर हँसती हैं ।"[135] इसके पीछे भी एक सामाजिक मनोवैज्ञानिक कारण है । पुरुष एकाधिकार वाले समाज में स्त्रियों की मनोवृत्ति, सोचने-समझने का ढंग और आशा-आकांक्षाएँ उन्हीं की तरह हो जाती हैं । वह अपने ऊपर हुए अत्याचार का बदला दूसरी स्त्री से लेती हैं, जो उनमें भी कमजोर होती है । दूसरी स्त्रियों की निंदा एवं उपहास कर वे अपनी कुंठा शांत करने का प्रयास करती हैं । यहाँ लेखक का अभिप्राय स्त्री-मनोविज्ञान की इसी प्रवृत्ति की ओर संकेत करना है ।

बदमी कुंजू के गीतों में औरत जाति के दर्द को महसूस करती है । "तुमने जब-जब अपने कंठ से पियवा नसइल, बाँझिन, बिदेसिया आदि के गीत गाए तब-तब लगा कि तुम मेरा ही दरद गा रहे हो ।"[136] कुंजू की करूणाजन्य वाणी, सहानुभूति संवेदनशीलता और उत्कट प्रेम से अभिभूत बदमी अपमान का घूँट पीकर भी जीना चाहती है, क्योंकि कुंजू के रूप में उसे एक सहारा जो मिल गया है, "अब तो तुम्हारे साथ जीने की इच्छा जागी है, मुझे दुनिया तुम्हारे लिए अच्छी लगने लगी है ।"[137] पुलिस कुंजू को जब पीटने लगती है तो बदमी चिल्ला उठती है, "नहीं सिपाही जी, नहीं, इसको मत मारिए, मुझे मारिए ।"[138] बदमी इस सच्चाई से वाकिफ है कि पुरुष हमेशा स्त्री को भोग्या समझता रहा है, अपनी वासना को शांत करने का माध्यम मात्र । "मरद हमेशा से यही अनियाव करता आया है कि

---

135. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 86
136. - वही - 95
137. - वही - 179
138. - वही - 184

जुलम मरद करता है और उसका फल औरत भोगती है । वह कभी भी औरत को अलग से पहचानने की कोशिश नहीं करता ।"[139] पुरूष स्त्री की स्वतंत्र सत्ता, एक जाति के रूप में उसकी पृथक् इयत्ता से सदैव इनकार करता रहा है, स्त्री जाति के लिए इससे ज्यादा पीड़ादायक और क्या हो सकता है । बदमी इस बात को महसूस करती है ।

शारदा उमाकांत पाठक को चाहती है । मन में उठते बवंडर को महसूस करते हुए कहती है, "क्या करूँ मास्टर जी, मुझे लगता है कृष्ण की सैकड़ों विरहिणी गोपियाँ मेरे भीतर उभर कर रो रही हैं । चारों ओर पावस उमड़ा हुआ है, जल थल एक हो गया है, मैं डोंगी नाव की तरह अपने भीतर थकी हारी चिंतित गोपियों को लादे पानी में भटक रही हूँ ।"[140] पाठक को देखकर शारदा के अन्तर्मन में हलचल शुरू हो जाती है, "आपको देखती हूँ मन में एक बदली-सी घिर आती है, ठंडी-ठंडी छाँहें भीतर भर जाती हैं, सूखी हवाएँ खुशबुओं से भीगकर बहने लगती हैं ।"[141] इस पुलकायमान शोभा को देखकर शारदा अचानक डर क्यों जाती है ? इसलिए कि उसे अपने पिता दीनदयाल से डर लग रहा है, कहीं वे पाठक-शारदा के प्रेम के कोमल तंतु को तोड़ न दें, "तभी लगता है कि बिजली कड़कने लगी है, हवाएँ डालियों को तोड़कर गरजने लगी हैं, मेरा नाम ले-लेकर चीखने लगी हैं और मैं भय के मारे आँखें मूँद कर बैठ गई हूँ ।"[142] शारदा के मन में पाठक से बार-बार मिलने की छटपटाहट और पिता दीनदयाल की कुटिलता एवं जड़ता से उत्पन्न भय एक साथ द्वन्द्व पैदा करते हैं ।

---

139. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 215
140. - वही - 207
141. - वही - 207
142. - वही - 207

"जल टूटता हुआ" में एक ओर ऐसी स्त्रियाँ हैं जो प्रेम के लिए समाज की उपेक्षा और अपमान सहने को तैयार हैं, तो दूसरी ओर वासना की आग में जल रही पार्वती है जो इस धधकती आग को शांत करने के लिए एक अछूत लड़के हँसिया को निमंत्रण देती है । रात के अँधेरे में हँसिया के शरीर से लिपट जाती है और कहती है, "जब तक चलेगा, चलेगा ।"[143] पार्वती यह सब कुछ लोगों की नजरें बचाकर करती है । वह बदनामी से डरती है और जब लगता है कि उसके इस कुकृत्य को किसी ने देख लिया है तो चीखने लगती है, "छोड़-छोड़ अभागे, नहीं तो मैं तेरी जान ले लूँगी । कमीने मुझे कुछ ऐसा-वैसा समझा है क्या ?"[144] "बोल आज रात को मिलेगा ।"[145] हँसिया से पार्वती का यह आग्रह गाँव में चलने वाली यौन-उच्छृंखलता का प्रमाण है । यह काम भले ही चोरी-छिपे हो, लेकिन खूब होता है । यहाँ पार्वती को सिर्फ़ एक पुरुष चाहिए जो उसकी वासना को शांत कर दे और किसी से इस बारे में कहे भी न । पार्वती को इसके लिए हँसिया सर्वोत्तम जान पड़ता है । पार्वती के मुकाबले हँसिया ज्यादा संवेदनशीलता, उदारता और सहनशीलता का परिचय देता है । गाँव के लोग उसे मारते हैं तो भी वह पार्वती पर आरोप नहीं लगाता । यहाँ लवंगी के माध्यम से दलित-चेतना की मुखर अभिव्यक्ति हुई है । लवंगी अपने भाई को बेवज़ह पिटते देखकर भड़क उठती है, "क्या हुआ अगर मेरे भाई ने एक बामन की लड़की से भला-बुरा किया ..... जब चमरौटी की तमाम लड़कियों पर ये बाबा लोग हाथ साफ करते हैं तो कोई परलय नहीं आती और कोई चमार बामन की लड़की को छू दे तो परलय आ जाती है ।"[146] इससे ज़ाहिर होता है कि दलितों में विरोध की चेतना का प्रसार हो रहा है और वे

---

143. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 233
144. - वही - 233
145. - वही - 338
146. - वही - 235

अन्याय के खिलाफ मुखर होने लगे हैं । एक अन्य दलित स्त्री दुलारी का कहना है कि, "यदि औरत खुद न दरक जाए तो मरद की क्या हिम्मत है कि वह कुछ कर सके ।"[147] "जल टूटता हुआ" में हँसिया के पास पार्वती ही तो जाती है. इस संदर्भ में दुलारी का कहना बिल्कुल सही जान पड़ता है । वह अछूतों में गंदगी की प्रवृत्ति का विरोध करती है । दलित स्त्रियाँ साहस एवं दृढ़ता के साथ अन्याय का विरोध करती हैं जबकि ऊँची जाति की स्त्रियाँ आम तौर पर चुप रहती हैं । पटनहिया, पुष्पा, कनियाँ कहीं न कहीं पुरूष-मानसिकता का शिकार हुई हैं ।

दोनों उपन्यासों से पता चलता है कि गाँव में यौन-भ्रष्टाचार हर वर्ग में फैला हुआ है । ऊँची जातियों के पुरूष गरीब और नीची कही जाने वाली स्त्रियों से मनमानी करते हैं । दूसरी ओर गाँव की जाति प्रथा स्त्री-पुरूषों के बीच स्वस्थ प्रेम-सम्बन्ध बनने नहीं देती । स्त्री को प्रेम करने का लोकतांत्रिक अधिकार गाँव नहीं देता है ।

---

147. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 179

9. बूढ़े-बूढ़ियाँ

भारतीय सामाजिक संगठन में बुज़ुर्गों का भी अपना महत्व होता है । कभी घर के मुखिया के रूप में, कभी सलाहकार के रूप में वे अपनी भूमिका निभाते रहते हैं । कुछ चुगली और परनिंदा में ही रस लेते हैं और दूसरों को दुखी देखकर सुख का अनुभव करते हैं, जैसे, "अलग-अलग वैतरणी" के हरखू सरदार । वे न तो सामंत हैं न ही ज़मींदार, फिर भी स्वराज से उन्हें बेहद शिकायत है । "ज़मींदारी चली गई तो लोग समझ गए परजा का राज हो गया ।"[148] हरखू सरदार की यह सोच उस जमाने की उपज है जब जैपाल सिंह ज़मींदार के रूप में प्रतिष्ठित थे और हरखू उनकी चाटुकारी में दिन बिताते थे । वे खुद फटेहाल हैं पर सोचने-समझने का ढंग नहीं बदला है । धनी किसान वंशी सिंह गरीब किसान धरमू सिंह की शिकायत करते नहीं अघाते । "जैसी करनी वैसी भरनी । नमक हराम कहीं का । जैपाल सिंह के जमाने में धरमुआ के सभी प्रानी छावनी में डटे रहते थे खाना-पीना सब वहीं होता था । दुख-सुख सबमें बड़े ठाकुर उसके सर पर छाया किए रहे । माँ मरी तो धरमुआ ने कार-परोजन के लिए तीन सौ रूपए कर्ज लिया । अब देने की बारी आई तो साले की नानी मर गई ।"[149] मध्यवर्गीय किसान टीमल सिंह शारीरिक रूप से कमजोर हो गए हैं पर बेटे की पढ़ाई छूट जाने का उन्हें बेहद अफ़सोस है, "मैं यह नहीं चाहता था कि मेरे जीते जी तुम पढ़ाई छोड़ो । पर इस बीमारी ने मुझे एकदम लाचार कर दिया है ।"[150] एक मध्यवर्गीय किसान की विवशता, जो अपने खेत में मजदूर लगाने की सामर्थ्य नहीं रखता है, क्योंकि आर्थिक दृष्टि से कमजोर है ।

---

148. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 83
149. - वही - 83
150. - वही - 164

अछूत धनेसरी हर विपत्ति में साहस से काम लेती है । जब उसके साथ कोई बुरा बर्ताव करता है तो उसके मुँह से गालियों का फौव्वारा फूट पड़ता है, "कौन है रे मुह झौंसा, तेरे सात पुश्त को गंगा के दहाने में डारूँ । बूढ़ी औरत से ठिठोली करता है ? हरामी का पिल्ला कहीं का"[150]---- कहते हुए घुर बिनवा को गाली देती है । धनेसरी अपने आगे ठाकुर-बामन, अमीर-गरीब कुछ नहीं देखती । छबिलवा को सोटा चला कर मार देती है और वह आह-आह करके बैठ जाता है, "आ रे आ, मार के गट्टा तोड़ तो देखूँ । तीन-तीन छौने कुक्कुर से तुड़वाय के रख दिया । हम गरीब आदमी को हल-बैल हैं का ? हमारी तो सब जमा पूँजी उहै है न ? किसी के पेट पर लात मारोगे तो फल पाओगे । बड़े-बड़े शीतला के रंग में दब गए । तू कौन खेत की मूली हो भइया जी. ई घमंड छोड़ दो ।"[151] इतना ही नहीं, धनेसरी दारोगा-सिपाही से भी नहीं डरती । "देखत नाही हो का सिपाही जी- मेरे जैसे तोहूँ आँख के कमजोर हो का ।"[152] यह उसकी निर्भीकता और साहस का ही प्रमाण है । सुगनी और सुरजू के अनैतिक सम्बन्ध का साक्षात प्रमाण गाँव को देना चाहती है । "बुलाओ सारे गाँव को । बिना सबको दिखाए दरवज्जा न खोलो । हम गरीब-गुरबा हैं तो का, एही सेरंडी-पतुरिया होय गए ?"[153] सरूप भगत भी इस तरह की प्रवृत्ति का विरोध करता है । सिरिया के अभद्र व्यवहार से क्षुब्ध होकर कहता है, "आप भी सरकार बहुत कम उमर के हो । करैता गाँव में जन्में, यहीं रहे । आपने भी सरकार अभी आदमी नहीं देखे हैं । भगवान न करे कि देखे-दिखावे का मौका आवे ।"[154] सरूप परिश्रमी, साहसी, गंभीर और विनम्र इन्सान

---

150 अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 164
151. - वही - 170
152. - वही - 450
153. - वही - 403
154. - वही - 181

है लेकिन अन्याय का हर जगह विरोध करता है । उसके विचारों में गतिशीलता है । तभी तो कहता है कि, "अब जमाना नक्सों का है । भोगना भी उन्हें ही है, फैसला भी उन्हें ही करना होगा ।"[155] दलित चरित्रों में सत्य और धनेसरी दोनों साहसी, परिश्रमी और अन्याय के खिलाफ बोलने वाले हैं । पुरानी पीढ़ी का यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण पक्ष है ।

"जल टूटता हुआ" में बनवारी बाबा भूत-प्रेत की कहानियाँ सुनाकर मनोरंजन करते हैं । लोगों से मेल-जोल रखते हैं । घूमने-फिरने में विशेष रुचि है । "घर के ज़रूरी काम धाम छोड़कर मेले-हटिया चले जाते, काम के खेती के मौसम में नातेदारी करते, हुरती खाने के लिए पूरा गाँव छान मारते, दूसरे गाँव जाकर सोनारों, लोहारों के यहाँ बैठकर घंटों बातें करते । गाँव की औरतों के गहने बनवाते, उनके प्राइवेट सामान लाते और रामलीला में अपना सारा काम-धाम छोड़कर हनुमान जी का अभिनय करते ।"[156] कुल मिलाकर एक अच्छे आदमी हैं बनवारी बाबा । इसके अलावा उनको तंत्र-मंत्र की भी जानकारी है । वे साँप का काटा झाड़ते हैं । जान लेने के बाद अवश्य पहुँच जाते हैं चाहे कितनी भी दिक्कत क्यों न सामने आए । ऐसे ही वे अपने दुश्मन दौलत राय के यहाँ जाकर उसे ठीक कर देते हैं । हालाँकि वे इसके लिए रामकुमार की डाँट भी सहते हैं । पर उनका कहना है कि, "किसी की जान को मारना हो तो आदमी मरदानगी से लड़ते-लड़ते मारे. साँपों को आदमी मारने की छूट क्यों दी जाए । साँपों के खिलाफ मेरे मंतर की लड़ाई है ।"[157] इसलिए वे अपने मंत्र का उपयोग

---

155. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 429
156. - वही - 53
157. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 349

करने में शत्रु-मित्र का भेद नहीं मानते । "बच्चा मंतर जान बचाने के लिए होते हैं । वह चाहे किसी की जान हो, जान लेने के लिए नहीं होते ।"[158] यह बनवारी बाबा के व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण मानवीय पक्ष है । अमलेश जी सतीश को ज़मींदारी-सभ्यता के जाल में न फँसने की सलाह देते हैं । "ज़मींदारी की सभ्यता आदमियत को धीरे-धीरे निगलना शुरू करती है, उसे बचाना ।"[158] वे प्रेम के महत्व को स्वीकारते हुए कहते हैं, "प्रेम करने का अधिकार तो संसार में सबको है । प्रेम के लिए कोई बंधन नहीं है । प्रेम के बिना तो संसार ही निस्सार हो जाए ।"[159] वे विजातीय प्रेम के अस्तित्व को भी हृदय से स्वीकार करते हैं । इसी नाते बदमी और कुंजू के प्रेम को महत्व देते हैं । नारी के प्रति उनका दृष्टिकोण बहुत ही उदार है, "नारी तो अमृत है ही, वह चाहे कहाइन हो चाहे ब्राह्मणी । कवियों ने नारी को अपने भीतर की सारी सुन्दरता के साथ गढ़ा है, ब्रह्मा ने तो गढ़ा ही है ।"[160] स्त्री जाति के अस्तित्व और महत्व का इतना प्रबल पक्षधर दोनों उपन्यासों में इनके अलावा दूसरा नहीं मिलता । अमलेश जी शिक्षित, कविहृदय और विचारों से आदर्शवादी हैं ।

इन चरित्रों में सत्य ज्यादा यथार्थवादी लगता है । दूसरों की इज्जत करता है, पर अपने सम्मान की कीमत पर नहीं ।

कुल मिलाकर यही निष्कर्ष निकलता है कि गाँव में बूढ़े लोगों को नवयुवक ज्यादा महत्व नहीं देते । उनकी बातों को गंभीरता से नहीं लेते । कभी-कभी उनके विचारों की खिल्ली उड़ाते हैं और उन्हें बोझ की तरह महसूस करते हैं ।

---

158. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 72
159. - वही - 187
160. - वही - 189

द्वितीय अध्याय

राजनीतिक-आर्थिक बदलाव की प्रवृत्तियाँ और चेतना

1. सामंत-विरोधी चेतना और संघर्ष
2. ग्राम-पंचायत और चुनाव
3. नई सामाजिक-आर्थिक योजनाओं का क्रियान्वयन और उनका प्रभाव
4. राजनीतिक पार्टियाँ और विचारधाराएँ
5. नए वर्ग और वर्गीय प्रवृत्तियाँ
6. ग्राम - राजनीति एवं आर्थिक विकास की संभावनाएँ

1. सामंत-विरोधी चेतना और संघर्ष

"बहुआ गाली मत दीजिए - रमपतिया नौकरी पर गया है तो क्या हो गया ? नौकरी नहीं करेगा तो खाएगा क्या ?"[1] यहाँ "जल टूटता हुआ" में जगपतिया की सामंत-विरोधी चेतना साफ़-साफ़ दिखाई देती है । जगपतिया और रमपतिया दोनों भाई महीप सिंह ज़मींदार के नौकर हैं पर उन्हें इतनी भी मजदूरी नहीं मिलती कि वे परिवार का भरण-पोषण कर सकें । जगपतिया इस शोषण का विरोध करता है । जगपतिया गरीब मजदूरों का प्रतिनिधि है । आज़ादी के बाद मजदूरों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में कोई क्रांतिकारी बदलाव नहीं होता, किंतु इनमें धीरे-धीरे सामूहिकता का विकास होता है । जिसमें सामंती मूल्यों के प्रति विद्रोह का भाव सन्निहित है । जगपतिया महीप सिंह से कहता है -- "खेत तो आपने हमारे बाप दादों को उनकी नौकरी में दिया था, कोई एहसान तो नहीं है । खेत में कुछ होता ही नहीं है । हम दोनों भाई आपके यहाँ खटते हैं, तो खेतों में क्या अपने-आप अन्न पैदा हो जाएगा ।"[2] यानी मजदूरों के पास अपनी ज़मीन नहीं है, दूसरे, श्रम के बदले उन्हें जो खेत मिलता है उसमें खेती के लिए मालिक के यहाँ से समय नहीं मिलता, तीसरे, यदि इन खेतों में वे कुछ पैदा भी करते हैं तो बाढ़ या सूखा की चपेट में आकर फसलें प्रायः नष्ट हो जाती हैं । एक खेतिहर मजदूर की गरीबी के यही सब कारण हैं, "अलग-अलग वैतरणी" में झिनकू वंशी सिंह का काम छोड़ देता है । वह काम के बदले ज़मीन नहीं बन्नी (दैनिक मजदूरी) माँगता है । "खाली पेट

---

1. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 30
2. - वही - 30

बाबू काम नहीं होगा । हम तो कह रहे हैं कि अपना खेत ले लीजिए । हमको रोजीना बन्नी पर रख लीजिए ।"[3] मजदूर भूस्वामियों की चालाकी समझने लगा है । उसे मालूम है भूस्वामी कम उपजाऊ खेत देकर बदले में कितनी मेहनत करवाते हैं । झिनकू का लड़का धुरविन जगजीत सिंह से पिटकर घर आता है तो झिनकू क्रोध से बिलबिला उठता है — "तो तू ससुरै उनके दरवज्जे पर का करने गया था ? हम तो उस साले के हियाँ अब थूकने भी नहीं जाते ।"[4] दलितों एवं मजदूरों के अन्दर आज़ादी के बाद होने वाला यह महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है । अब तो उसे मार खाने का भी डर नहीं है । वह तो सिर्फ़ अपना हक चाहता है । "जल टूटता हुआ" में जगपतिया महीप सिंह को ललकारता है कि, "आ जाएँ महीप सिंह, अगर माँ का दूध पिए हों तो आज वारा-न्यारा हो जाएगा ।"[5] ऐसे मौके पर वह अकेला नहीं है । उसके साथ मजदूरों का एक जत्था है जो मर-मिटने के लिए तैयार है । महीप सिंह छैलबिहारी के साथ गुंडों की एक फौज जगपतिया से मुकाबले के लिए भेजते हैं लेकिन वे सब जगपतिया के आत्मविश्वास और साहस के आगे टिक नहीं पाते । वे तो उसकी ललकार सुनकर ही दुबक जाते हैं --"जाकर अपने बबुआ को भेज । बहुत दिनों से उनका रास्ता देख रहा हूँ, आज उनकी सारी ज़मींदारी शान समझने को तैयार हूँ । अपनी एक-एक आह का बदला लेने को खड़ा हूँ ।"[6] बदले की यह भावना अनायास ही नहीं, शोषण और अत्याचार के कारण पैदा होती है । जगपतिया तब विरोध करता है जब महीप सिंह उसे

---

3. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 174
4. - वही - 183
5. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 251
6. - वही - 252

बेइज्ज़त करते हैं, मारते हैं और उसके खेत पर कब्जा करने के लिए बदमाश भेजते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" में झिनकू के विरोध का तेवर नरम पड़ जाता है । उसके साथ जनशक्ति का वैसा संगठन नहीं होता जैसा जगपतिया के साथ है । सुरजू और सुगनी के नाजायज़ सम्बन्ध के उजागर होने के बाद चमारों में बदले की भावना उत्पन्न होती है । चमार इसे अपनी प्रतिष्ठा का सवाल मान लेते हैं । जाति-पंचायत में नवयुवक रामकिशुन कहता है, "यह बूढ़े, हाँ में हाँ मिलाने वाले चौधुरियों की बटोर नहीं है । यह आग है, लपट है इस बार इसमें ठकुराने की सारी हैकड़ी जलकर राख हो जाएगी"[7] यहाँ अपनी प्रतिष्ठा के प्रति जागरूकता और ऊँची जातियों के अत्याचार के प्रति घृणा और विरोध का भाव प्रबल दिखाई देता है । इसीलिए जाति-पंचायत में यह फैसला लिया जाता है कि, "सुरजू सिंह कल सुबह सुगनी को अपनी पत्नी समझकर खुद आकर चमरौटी से ले जाएँ, नहीं कल शाम को चमार लोग सुगनी को ले जाकर उनके घर बैठा आएँगे ।"[8] दूसरी तरफ जगजीत सिंह जब झिनकू को मारने-पीटने की धमकी देता है तो झिनकू कुछ निडर भाव से जवाब देता है, "मार के जान ले लो, लेकिन हम एक बार नहीं, सौ बार कह रहे हैं हम बिना रोजीना बन्नी के काम नहीं करेंगे । परती खेत लेकर हम का ओम्मा अपनी कबर बनाएँगे ।"[9] इन खेतिहर मजदूरों के विरोध का एक ठोस कारण यह है कि उन्हें जो खेत मिलता है, मजदूरी के बदले, वह ज़मीन ठीक नहीं होती । इस नाते उसमें अच्छी फसल नहीं उगायी जा सकती । इस तथ्य को मजदूर समझने लगा है. साथ ही परिस्थितियाँ भी बदलीं, जिसमें उनके विरोध का स्वर मुखर हो

---

7. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 427
8. - वही - 431
9. - वही - 175

उठा । "अलग-अलग वैतरणी" का ख़ुदाबक्श बुझारथ के कोड़े खाकर तिलमिला जाता है, "मैं कोई जुलाहा-धुनिया नहीं हूँ बाबू साहब, इस बेइज्ज़ती का बदला लेकर रहूँगा ।"[10] यह आज़ादी के बाद गरीबों में आत्मसम्मान की चेतना का विकास है । आजादी के बाद ज्यों ही ज़मींदारी प्रथा खत्म हुई, सामंती मूल्यों का ह्रास और परम्परागत सम्बन्धों में शिथिलता आने लगी, किसान-मज़दूरों और पुराने सामंतों-भूस्वामियों के बीच नए संघर्ष की शुरुआत हुई । "अलग-अलग वैतरणी" में ठाकुरों और चमारों का संघर्ष हो, वंशी सिंह और झिनकू के बीच का तनाव हो अथवा बुझारथ और ख़ुदाबक्श के सम्बन्धों में अचानक पैदा हुई टकराहट हो, चाहे "जल टूटता हुआ" में महीप सिंह और जगपतिया के बीच टक्कर हो, सभी पुराने सामंतों के कम हो रहे असर और आज़ादी के बाद दलित-मजदूर-किसानों में आई स्वातंत्र्य चेतना को अभिव्यक्त करते हैं ।

खेतिहर मजदूरों के सामूहिक विरोध को व्यक्त करते हुए "जल टूटता हुआ" में एक प्रसंग आता है जब, "सारी प्रकृति कूकने लगी थी । खेत भीगकर बीज की प्रतीक्षा कर रहे थे । लोग अपने-अपने हलवाहों के घरों की ओर दौड़े तो मालूम पड़ा कि सभी एक मीटिंग में गए हैं । दूसरे दिन सारे हलवाहों ने हड़ताल कर दी और अपनी माँग डेढ़ी कर दी ।"[11] यहाँ मजदूरों में भूस्वामियों के खिलाफ एकताबद्ध विरोध साफ दिखाई देता है । इसके साथ ही अपनी शर्तों पर मज़दूरी करने का भाव भी परिलक्षित होता है । दोनों उपन्यासों में सामंतवाद के खिलाफ़ दो स्तरों पर संघर्ष चलता है । एक सामूहिक, जिसमें ठाकुरों और चमारों के बीच जबर्दस्त मार-पीट होती है । दूसरे व्यक्तिगत स्तर पर, मसलन -- महीप सिंह के खिलाफ जगपतिया का बुझारथ के खिलाफ ख़ुदाबक्श का और वंशी सिंह के खिलाफ झिनकू का संघर्ष ।

---

10. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 345
11. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 276

अंत में यह कहना प्रासंगिक होगा कि ज़मींदारी प्रथा के खात्मे ने दबे हुए अंतर्विरोधों को खुलकर उजागर किया ।

2. ग्राम-पंचायत व चुनाव

"करैता गाँव की पंचायतें अब मलिकाने के चबूतरे पर नहीं होतीं । अब इन पंचायतों में ठाकुर जैपाल सिंह मुखिया के आसन पर नहीं बैठते । अब गाँव के लोग राय और फैसले के लिए उनका मुँह नहीं ताकते ।"[12] "अलग-अलग वैतरणी" की ये पंक्तियाँ निश्चित रूप से परिवर्तन का संकेत हैं ।पहले गाँव का मुखिया ज़मींदार होता था और गाँव वाले उसका फैसला मानने के लिए बाध्य होते थे । यह कोई कानूनी बाध्यता तो नहीं थी पर ज़मींदार का दबदबा और भय के कारण लोग उसके फैसलों को मानते थे । आज़ादी के बाद ज़मींदार का अस्तित्व खत्म हुआ और इसी के साथ उसकी मुखियागिरी भी समाप्त हो गई । सरकार ने गाँवों में बदलाव और विकास के लिए पंचायती-राज-व्यवस्था की आवश्यकता महसूस की । 28 जुलाई 1946 के "हरिजन" में गाँधी जी ने इसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा था कि, "स्वतंत्रता नीचे से आरंभ होनी चाहिए । इस प्रकार प्रत्येक गाँव एक गणराज्य अथवा पंचायत-राज होगा । उसके पास पूरी सत्ता और ताकत होगी ।"[13] सत्ता के विकेन्द्रीकरण और गाँवों को आत्मनिर्भर बनाने का सपना गाँधी जी ने देखा था । सन् 1959 में ग्राम-पंचायतों की स्थापना कर इस दिशा में कदम बढ़ाया गया लेकिन जातिवाद, गुटबंदी एवं निहित स्वार्थ के कारण पंचायतों की स्थापना का उद्देश्य अधूरा रह गया ।

"अलग-अलग वैतरणी" में पूर्व ज़मींदार जैपाल सिंह को पंचायत-चुनाव में खूब रूचि लेते हुए दिखाया गया है । वे सोचते हैं कि, "यदि वे

---

12. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 59
13. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा-साहित्य और ग्राम-जीवन - विवेकीराय, पृ. 75

इस चुनाव से उदासीन हो जाते हैं तो करैता में उनके परम्परागत कुल-बैरी तुरजू सिंह के सभापति हो जाने की संभावना प्रबल हो उठती है और ऐसी स्थिति में मीरपुर के बबुआन खानदान की प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जाती ।"[14] पर चुनाव में अपनी स्थिति कमजोर देखकर वे पिछड़े वर्ग के नेता सुखदेव राम से समझौता कर लेते हैं । "आइए भीतर दालान में कुछ निछद्दम बातें करनी हैं ।"[15] इस तरह जैपाल सिंह सुखदेव राम से हाथ मिलाकर तुरजू सिंह को हराने का बंदोबस्त कर डालते हैं । वे ऐसे व्यक्ति से समझौता करते हैं जिसने आजादी की लड़ाई में जेल-यात्रा की थी, जो निचले वर्ग का नेता बनकर उभर रहा था और सबसे महत्वपूर्ण यह कि आजादी के बाद दलित-पिछड़ा वर्ग राजनीति में एक नई ताकत के रूप में उभर रहा है । जैपाल सिंह इस परिवर्तन को अच्छी तरह समझ रहे हैं । उनका मकसद है सुखदेव राम को सभापति बनवाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करना । सुखदेव राम के साथ पिछड़े और दलित-समुदाय का समर्थन है । तुरजू सिंह का भी अपना एक संगठन है । "उनकी पार्टी में एक से एक बदमाश और नंगे-लुच्चे भर गए हैं ।"[16] फिर भी जमींदार का विरोध करने वाले उनके साथ हैं । "जल टूटता हुआ" के दीनदयाल के प्रति भी लोगों की धारणा अच्छी नहीं है । "यदि दीनदयाल का पक्ष मजबूत हुआ तो गाँव के लिए अच्छा नहीं होगा और इसका असर अदालत-पंचायत पर भी पड़ेगा ।"[17] इसलिए रामकुमार और सतीश अपने वैचारिक मतभेद के बावजूद दीनदयाल के खिलाफ एक हो जाते हैं । कारण, इन्हें दीनदयाल से उतना ही खतरा है जितना दूसरे गरीब लोगों को । इस चुनाव में कई तरह के हथकंडे अपनाए जाते हैं । दीनदयाल का पिछलग्गू दलसिंगार सतीश, रामकुमार और कुंजू आदि की शिकायत करता फिरता है ।

---

14. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 32
15. - वही - 47
16. - वही - 50
17. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 153

पंचायत-चुनाव में निम्न जातियों की हिस्सेदारी से वह भी चिंतित लगता है । "सुना है दीनदयाल भाई आपने 9 पंचायत में कई चमार, कई तेली, कई अहीर खड़े हो रहे हैं । सतीश और रामकुमार दोनों छोटी जातियों को उकसा रहे हैं । कह रहे हैं, छोटी जातियों को पंचायत में समान अधिकार मिलना चाहिए । हाय मइया लोप हो गया : जो चमार-सियार हमारा-आपका हल जोतते हैं वे पंच बनकर हमारा फैसला करेंगे ।"[18] रामकुमार और सतीश शिक्षित युवक हैं, वे समाज में व्याप्त जड़ता को तोड़ने के पक्ष में हैं और इसके लिए पंचायत-व्यवस्था में दलित और पिछड़े लोगों की हिस्सेदारी को उचित मानते हैं । जबकि दीनदयाल और दलसिंगार जैसे लोग सामाजिक परिवर्तन के खिलाफ हैं । वे जड़ता में ही अपना स्वार्थ साधने की प्रबल संभावना देखते है । गाँव के लोगों में उचित व्यक्ति की तलाश के सन्दर्भ में ऊहापोह की स्थिति है । "दीनदयाल मुलायम आदमी हैं, सतीश कड़ा आदमी है, अमलेश जी निकम्मे कवि रईस हैं, रामकुमार विधर्मी है और दलसिंगार मउगा है ।"[19] अंतत: दीनदयाल के खिलाफ रघुनाथ चुनाव मैदान में उतरते हैं । रामकुमार और सतीश उनका समर्थन करते हैं । कुंजू अपने सुमधुर कंठ से इनका प्रचार करता है --

"कि अइहो लोगवा
चोर बेइमनवाँ बनल बाटे गोसइयाँ
कि अइहो लोगवा
पान खा के हँसे बेइमनवा कसइया ।"[20]

दीनदयाल और उनके दल के लोग इस सच्चाई को सहन नहीं कर पाते । वे कुंजू के खिलाफ साजिश रचते हैं, "कुंजुआ और बदमी कहाइन को

---

18. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 143
19. - वही - 216
20. - वही - 199

एक साथ पकड़वा कर तमाशे का रूख मोड़ना होगा और रघुनाथ के खिलाफ कुछ उड़ाना होगा ।"[21] कुंजू को पकड़वाने के लिए पुलिस बुलाई जाती है और सतीश की फसल कटवाने के लिए गुरूदीन पासी को तैयार किया जाता है । "अलग-अलग वैतरणी" में चुनावी माहौल का ज़िक्र करते हुए शिवप्रसाद सिंह लिखते हैं कि, "गाँव के स्कूल पर उस दिन खूब चहल-पहल थी । ग्राम-सभा का चुनाव था । तीन उम्मीदवार थे । तीनों की तीन दरियाँ बिछी थीं. उत्तर तरफ बाबू सुरजू सिंह की, बीच में जैपाल सिंह की, और एकदम दक्खिन तरफ सुखदेव राम की ।"[22] सुरजू सिंह की दरी पर पान-सिगरेट की व्यवस्था है और चहल-पहल कुछ ज्यादा है । चुनाव में सुरजू सिंह हार जाते हैं, सुखदेव राम की जीत होती है । हरिया कहता है, "चमारों के वोट नहीं फूटे जिन्होंने वादा किया था, उन्होंने पूरा किया । सच तो यह है कि आशा से ज्यादा वोट मिले -- चमढोल से ।"[23] तब कैसे हार गए सुरजू सिंह ? इसमें जैपाल सिंह की खोपड़ी का कमाल है । जैपाल सिंह का सुखदेव राम को समर्थन सुरजू सिंह की हार का कारण बना । सुरजू सिंह इस पेंच को नहीं जानते थे । "उत्तर पट्टी में कुल कितने वोट हैं ? डेढ़ सौ हैं न । ये सभी जैपाल सिंह के ठोस वोट थे । मगर उन्हें मिले कितने ? सिर्फ बीस । बाकी एक सौ तीस कहाँ गए जनाब ? ये गए सुखदेव राम को ।"[24] इस तरह जैपाल अपनी चाल में सफल हो गए और सुखदेव राम पर अपने एहसान का बोझ भी लाद दिया ।

"अलग-अलग वैतरणी" में पंचायत चुनाव के दौरान किसी व्यक्ति के चरित्र पर कीचड़ नहीं उछाला जाता और न ही स्त्री-पुरूष के नाजायज

---

21. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 175
22. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 48
23. - वही - 54
24. - वही - 54

सम्बन्धों को चुनावी मुद्दा बनाया जाता है । "जल टूटता हुआ" में यह सब कुछ होता है । कुंजू, बदमी, रघुनाथ को बदनाम करने की कोशिश की जाती है । जान-माल को नुकसान पहुँचाने का भी प्रयत्न किया जाता है ।

"अलग-अलग वैतरणी" में सुखदेव राम जब अपने समर्थकों के साथ चुनाव-स्थल पर पधारते हैं तो हरिया व्यंग्य करता है, "देख लो पब्लिक आ गई का हो तीरी मास्टर - अरे यार पहले से मालूम होता तो गुलाब जल भी मँगवा लेते ।"[25] रामकिशुन इस व्यंग्य से तिलमिलाकर घृणा से मुँह फेर लेता है । पर वही हरिया जैपाल सिंह की दरी के सामने से गुजरते हुए कहता है कि, "अरे भाई हमारी दरी पर ऐसा सन्नाटा काहे है ? परजा-पौनी साले एकदम से निमक हराम निकल गए क्या ?"[26] तो बुझारथ से बर्दाश्त नहीं होता, "सुअर जोतते हैं हल और पहनते हैं पतलून । अपने सामने किसी को कुछ गिनते ही नहीं ।"[27] हरिया प्रतिवाद करता है, "पतलून पहनने का हुनर भी चाहिए । हम पतलून पहनकर हल जोतते हैं तो किसी दूसरे का क्या ?"[28] बुझारथ सिंह को यह बात तीखी और अपमानजनक लगती है -- "तुम पतलून पहनकर गोबर फेंको । हमसे क्या मतलब । पर तुम बोलबाजी करोगे तो ठोंक दिए जाओगे ।"[29] इस तरह चुनावी माहौल धीरे-धीरे गर्म हो उठता है । एक तरह का तनाव व्याप्त हो जाता है । सुरजू सिंह के समर्थक युवकों में उत्तेजना की एक लहर फैल जाती है । "भीड़ में बैठे उन छोकरों को देखकर लगता था कि बारूद के पलीते में आग लगी है । मगर ऊपर का ढक्कन इतनी जोर से बंद है कि विस्फोटक पदार्थ भीतर ही भीतर मचल रहा है ।"[30]

---

25. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 48
26. - वही - 49
27. - वही - 49
28. - वही - 49
29. - वही - 49
30. - वही - 50

"जल टूटता हुआ" में कुंजू पंचायत-चुनाव के दौरान दीनदयाल की कुटिल नीति का शिकार होने से बाल-बाल बच जाता है । पुलिस उसे व्यभिचार के आरोप में गिरफ्तार कर लेना चाहती है । सतीश इस पर कड़ा विरोध ज़ाहिर करता है, "आप नहीं ले जा सकते इस तरह । हम आकाश-पाताल एक कर देंगे । यह एक फ़रेब है, दीनदयाल के दल का रचा हुआ ।"[31] इसी बीच एक दूसरी घटना की सूचना मिलती है कि कुंजू का खेत काट लिया गया है । सतीश कहता है, "दारोगा साहब, खेत काटने में उस्ताद भाट-पार के अहीर ही नहीं हैं, बल्कि तिवारी-पुर के लोग भी हैं और कुंजू को बदमी के घर भेजना और उसका खेत कटा लेना, ये दोनों ही एक ही षड्यंत्र के दो पहलू हैं ।"[32] गाँव में चुनाव के दौरान इस तरह की अनेक घटनाएँ होती रहती हैं और अब तो इसमें और अधिक बढ़ोत्तरी हो गई है । मामला मारपीट, अपहरण और कत्ल तक पहुँच गया है । गाँव में बढ़ती यह प्रवृत्ति पंचायती-राज को कितना सफल बनाएगी, इसे आसानी से समझा जा सकता है ।

कुल मिलाकर हम देखते हैं कि गाँव के धनी-किसान या पूर्व ज़मींदार पंचायतों पर काबिज होने की पूरी कोशिश करते हैं । साथ ही दलित मज़दूर एवं किसानों के एक नई ताकत के रूप में उभरने के कारण भूस्वामियों के लिए खतरा बन गया है । दूसरी तरफ पंचायत-चुनाव में गलत तरीकों के इस्तेमाल की प्रवृत्ति बढ़ी है । अपहरण और हिंसा की घटनाएँ उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही हैं ।

---

31. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 187
32. - वही - 187

3. नई सामाजिक-आर्थिक योजनाओं का क्रियान्वयन एवं उनका प्रभाव

"सुना रहा सुखदेव बेटा कि नहर आय रही है । कोई कहता था कि सैयदराजे तक खन भी गई । पानी मिल जाता तो शाइत धरती में परान पड़ जाता ।"[33] "अलग-अलग वैतरणी में के इस कथन से यह आभास मिलता है कि पानी के अभाव में खेती नहीं हो पाती है । पानी की व्यवस्था के लिए नहर खोदने का काम शुरू तो हो गया है किंतु उसे पूरा करने की कोई जल्दी नहीं है । किसान पानी की आस लगाए बैठा है । सामुदायिक विकास की भावना को रेखांकित किया गया है । ग्राम-पंचायत की पहली बैठक स्कूल की समस्या को लेकर होती है । "गिरते स्कूल की इमारत को ठीक कराने, सुधरवाने का प्रस्ताव आया । सूरजू सिंह बैठक में उपस्थित थे, उनके सहायक और अनुयायी भी. जैपाल सिंह नहीं थे । लोग स्कूल की इमारत की बुरी हालत, उसे ठीक कराने की जरूरत पर बल दे रहे थे ।"[34] ग्राम-पंचायत की पहली बैठक में स्कूल जैसी महत्व-पूर्ण समस्या पर बातचीत से लगता है कि लोगों में शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ रही है । सभापति के आसन पर गाँव के बहुमत से चुना गया व्यक्ति बैठने लगा तथा सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह कि पंचायत की बैठक में आम आदमी भी अपने विचार रखने लगा । "जल टूटता हुआ" में स्कूल के मकान को बनवाने के बारे में जग्गू हरिजन बहुत महत्त्वपूर्ण विचार रखते हैं, उनका कहना है कि स्कूल सबका है, हम हरिजन लोग अगर रुपया-पैसा नहीं दे सकते हैं तो मिहनत तो दे सकते हैं न । इस जवार में तरह-तरह के हुनर वाले कारीगर हैं, मजूर हैं, उन सबका फ़रज है कि वे लोग स्कूल का मकान बनाने में मदद दें । मैं इस मामले में पिकेटिंग करूँगा ।"[35] "अलग-अलग वैतरणी" में धनी

---

33. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 240
34. - वही - 56
35. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 118

किसान तुरजू सिंह कहते हैं कि, "हर आदमी पर आठ आना या एक रूपया चंदा लगाने से स्कूल की इमारत नहीं बनेगी । गाँव के कुछ रईस लोग जरा-सा ख्याल कर दें तो सबका काम आसान हो जाएगा ।"[36] तुरजू का स्पष्ट संकेत जैपाल सिंह की ओर है । ज़मींदारी टूटने के बाद ज़मींदार की आर्थिक स्थिति खराब होने लगी । तुरजू इस तथ्य से परिचित हैं । अपने तर्क के बहाने वे जैपाल सिंह को पछाड़ना चाहते हैं । यहाँ तुरजू सिंह और जग्गू हरिजन की बातों में बहुत साफ अंतर प्रतीत होता है । जग्गू की बातों में एक मेहनतीमजदूर की ईमानदारी और भविष्य को सँवारने की अभिलाषा प्रकट होती है, जबकि तुरजू सिंह के सुझाव में दुश्मन को पछाड़ने की चाल परिलक्षित होती है ।

"जल टूटता हुआ" में स्कूल के भवन-निर्माण के लिए प्रबन्ध-समिति की बैठक में बातचीत शुरू होती है, जिसमें रामकुमार, सतीश, दीनदयाल, लालमणि और जग्गू हरिजन हिस्सा लेते हैं । इसमें लोगों के निजी स्वार्थ और अहं का टकराव खुलकर सामने आता है । रामकुमार स्कूल के मंत्री लालमणि पर मनमानी करने का आरोप लगाता है, "जब तक इस संस्था के मंत्री महोदय अपनी मनमानी करते रहेंगे, तब तक दूसरा रास्ता नहीं निकल सकता है । जिसे चाहते हैं भर लेते हैं, जिसे चाहते हैं निकाल देते हैं या उसे निकल जाना पड़ता है ।"[37] वह दीनदयाल पर भी कटाक्ष करता है, "पच्चीस रूपए देकर सभापति बन बैठे हैं, समझते हैं कि आपके कर्तव्य की इतिश्री हो गई ।"[38] ऐसा लगता है कि जन-कल्याण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण इन संस्थाओं में पैसे वाले लोग ऊँचे पद प्राप्त कर अपने ढंग से चलाते हैं । लालमणि

---

36. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 56
37. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 115
38. - वही - 116

का कहना है कि, "हर साल बैसाख में हम लोग अनाज वसूलते हैं, उससे कुछ रकम इकट्ठी हो जाती है, कुछ फीस-फास आ जाती है । लेकिन इतना ही धन काफी नहीं है ।"[39] इससे शिक्षण-संस्थाओं के संचालन में आने वाली आर्थिक कठिनाई का भी आभास मिलता है । साथ ही, सरकार की शिक्षा के प्रति लापरवाही और अरुचि भी दिखाई देती है । स्कूल को आगे बढ़ाने के लिए चंदा बटोरने पर बल दिया जाता है । लालमणि का सुझाव है कि, "लंका, रंगून, कलकत्ता, बम्बई, अहमदाबाद में जो लोग हों इस जवार के, उनके पास जाया जाए या कुछ खास-खास लोगों के पास रसीदें भेज दी जाएँ, वे वहाँ से पैसे इकट्ठा करके भेज दें ।"[40] दीनदयाल अपने मुखर आलोचक रामकुमार को प्रधानाचार्य का पद संभालने को कहते हैं, "रामकुमार चाहें तो कस्बे से यहाँ हेडमास्टर बनकर आ जाएँ, हमें हेड-मास्टर की बड़ी आवश्यकता है और कस्बे की अपेक्षा बीस तीस कम भी मिले तो क्या हुआ, यह तो अपनी जमीन है न, अपनी मातृभूमि । अपनी मातृभूमि के लिए थोड़ा बलिदान देना ही पड़ता है ।"[41] दीनदयाल के प्रस्ताव में एक तरह की दुर्भावना छिपी है जो वे रामकुमार को नौकरी छोड़कर आने का आग्रह करते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" में स्कूल के हेड-मास्टर मुंशी जवाहिरलाल विद्यार्थियों को झिड़कते हुए कहते हैं, "क्यों खड़े हो जी इस तरह ? जाकर बैठो अपनी जगहों पर । यहाँ कोई रंडी का नाच हो रहा है क्या ?"[42] नए स्कूल मास्टर शशिकांत का लड़कों से परिचय कराते हैं, "आज से तुम लोगों को यही पढ़ाएँगे । ठीक से पढ़ना ।

---

39. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 116
40. - वही - 116
41. - वही - 117
42. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 129

शैतानी नहीं करना । नहीं सुना कि किसी ने शैतानी की, तो जानते हो ? क्या जानते हो ? हाँ, मैं उसे उनचकर ठीक कर दूँगा ।"[43] शशिकांत स्कूल के नीरस वातावरण में कुछ जीवंतता लाने की सोचता है तो ज़वाहिर लाल उसका उपहास करते हैं, विरोध करते हैं, "आपकी राय है कि लड़कों को कबड्डी खिलाया जाए और टाँग-वाँग टूट जाए ।"[44] इस तरह के रूढ़िवादियों और निर्जीव तत्वों से गाँव के स्कूल भरे हैं । ऐसे जड़ लोगों से किसी परिवर्तन की उम्मीद तो नहीं की जा सकती । बल्कि उल्टे शशिकांत जैसे आधुनिक एवं गतिशील अध्यापक की खिल्ली उड़ायी जाती है । उसके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है । स्कूल के एक दूसरे अध्यापक "पुरूषोत्तम सिंह काफी हट्टे-कट्टे तुहरे बदन के इन्सान थे और वे प्राइमरी के मास्टर कम, फौज के कमांडर अधिक प्रतीत होते हैं ।"[45] पुरूषोत्तम सिंह को पढ़ाने की नहीं, घर के कामों की अधिक चिंता रहती है इसलिए वे स्कूल में बहुत कम समय दे पाते हैं । शशिकांत छात्रों में उत्साह पैदा करने के लिए खेल-कूद के कुछ कार्यक्रम रखने का प्रस्ताव रखता है तो पुरूषोत्तम सिंह असमर्थता ज़ाहिर करते हैं, "जब मैं इसमें कुछ मदद नहीं कर सकता तो बोलने से क्या फायदा ?"[46] इससे ज़ाहिर होता है कि गाँव के स्कूलों में अधिकांश अध्यापक पढ़ाने में रूचि नहीं लेते । वे अपने निजी कामों को ज्यादा महत्व देते हैं । उनमें से कुछ एक अध्यापकों में ही गतिशीलता दिखाई देती है । सामाजिक विकास की इस रीढ़ को ही जब घुन लग गया है तो आगे किसी बुनियादी परिवर्तन की उम्मीद कैसे की जा सकती है ?

---

43. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 131
44. - वही - 134
45. - वही - 130
46. - वही - 134

"जल टूटता हुआ" में सरकारी अस्पताल की दुर्दशा का चित्रण करते हुए सतीश कहता है -- "इस पूरे जवार में ले-देकर कस्बे में एक टुटहू-टूँ सरकारी अस्पताल है जहाँ मामूली दवाएँ मिलती हैं मामूली रोगों के लिए सुना है सरकार जो अच्छी दवाएँ देती है उन्हें डॉक्टर लोग प्राइवेट बनाकर बेचते हैं ।"[47] यानी आज़ादी के बाद ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा-सुविधाओं का समुचित विकास नहीं हो सका । वहाँ न तो योग्य डॉक्टर आए, न ही समुचित चिकित्सासुविधाएँ मुहैया कराई गईं । जो डॉक्टर आए भी वे ग़ैर-ज़िम्मेदार और भ्रष्ट थे । तभी तो सतीश कहता है कि, "देखा नहीं उस डॉक्टर का जो दवाखाने पर देर से आता है, जल्दी चला जाता है और रोगियों के साथ ऐसा बर्ताव करता है मानो रहम कर रहा हो ।"[48] इस तरह ये डॉक्टर अस्पताल में आई दवाइयों को बेचकर पैसा जोड़ते हैं ।

"हमारी रहनुमा सरकार को ही देखिए । वह समझती है कि शहर के लोगों की ही जान, जान है, सारी सुविधाएँ वहीं इकट्ठी की जाती हैं और वह भी पैसे वालों के लिए ।"[49] गाँव के प्रति भेद-भाव की नीति को जनता भी समझती है । नई पीढ़ी में असंतोष ज्यादा दिखाई देता है । गांवों में मूलभूत सुविधाओं की बेहद कमी है । "कोई दुर्घटना होती है, कोई आकस्मिक बीमारी होती है, कोई गंभीर रोग होता है तो कोई कैसे ले जाए ? ये खंदके, ये खाइयाँ, ये नाले, ये नदियाँ, ये रेतियाँ सदियों से मुँह बाए हुए इस जवार को निगल रही हैं । सारे रास्ते इनके पेट में समाए हुए हैं, मीलों तक सड़कें नहीं, सवारियाँ नहीं ।"[50] इन मूलभूत सुविधाओं के अभाव का चित्रण "जल टूटता हुआ" में कुछ ज्यादा ही महत्त्व रखता है । वकीलानी को जब प्रसव-पीड़ा शुरू होती है तो पेंकू तिवारी जग्गू-बहू को बुलाकर लाते हैं

---

47. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 248
48. - वही - 248
49. - वही - 248
50. - वही - 248

लेकिन वह स्थिति की गंभीरता को देखते हुए उन्हें शहर जाने की सलाह देती है । वकीलानी को डोली में बैठाकर ले जाया जाता है और वे रास्ते में ही मर जाती हैं । पूर्वांचल के इस पिछड़े कछार में ऐसी घटनाएँ आम हैं । इससे कछार की विकट ज़िन्दगी, विपन्नता एवं विवशता की सही तस्वीर सामने आ जाती है । "अलग-अलग वैतरणी" में इन समस्याओं को यदि ज्यादा महत्व नहीं दिया गया है तो इसका कारण वहाँ की भौगोलिक स्थिति की भिन्नता है । "यहाँ कछार नहीं है । शिक्षा, स्वास्थ्य और यातायात की सुविधाएँ संतोषजनक स्थिति में हैं, इसीलिए लेखक ने इस समस्या को खास महत्व नहीं दिया है । जबकि "जल टूटता हुआ" में इस प्रश्न को ज्यादा महत्व देना लेखक की विशेषता है । यहाँ बाढ़ के पानी से बचाव के लिए लोग एकजुट हो तत्परता से नाले का मुँह बाँधते हैं पर पानी के दबाव से बाँध टूट जाता है । "उफनती हुई फसलें देखते-देखते डूब गईं जैसे किसी बाप के सामने उसका लड़का मार डाला जाए । लोग आँखों में अकथ दर्द भरे अपने-अपने दरवाजों पर पड़े हुए थे ।"[51] यह बाढ़ उस कछार की गरीबी और बदहाली का सबसे बड़ा कारण है । राप्ती और गोर्रा नदियों के पास बाँध बनाने की योजना को सरकार मंजूरी देती है तो लोगों में खुशी की लहर दौड़ जाती है । बाँध बँधना शुरू होता है तो लोगों में एक तरह की अफरा-तफरी मच जाती है ।

"तमाम मजदूरों की मजूरी की समस्या इस समय कुछ हल हो गई है । बामन लोग भी पैसे की लालच में खाँची-कुदाल लिए पहुँच रहे हैं ।"[52] इससे साफ जाहिर होता है कि इस पूरे कछार अँचल में अधिकांश लोग गरीबी की पीड़ा को झेल रहे थे, दलित भी, सवर्ण भी ।

---

51. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 248

52. - वही - 20

गाँवों में बिखरे हुए ज़मीन के छोटे-छोटे टुकड़ों को इकट्ठा करने तथा नालियों-पग डंडियों की सुविधा देने के लिए सरकार ने चकबंदी शुरू किया । "जल टूटता हुआ" के तिवारी पुर गाँव में चकबंदी शुरू होती है । "भूमेन्द्र लाल इस इलाके के ए. सी. ओ. होकर आए हैं । बड़े मिठ बोलवा और दरबारी वृत्ति के अफ्सर हैं ।"[53] घूसखोरी एवं दलाली का सिलसिला शुरू हो जाता है । दबंग और धनी लोग प्रभाव और पैसे की बदौलत मन चाहे खेत हासिल कर लेते हैं, गरीब को ऊसर-बंजर और खराब खेत मिलता है । धनी किसान दीनदयाल ए. सी. ओ. का दलाल है । एकांत में भूमेन्द्र लाल से कहता है, "सरकार, थोड़ा-बहुत ख्याल कीजिए उस बामन का, नहीं तो मर जाएगा ।"[54] और उसके हाथ में दो सौ रूपया थमा देता है । अपने लिए एक सौ रूपया बचा लेता है । इस तरह गरीब एवं अशिक्षित लोगों को बहका-फुसला कर उनका शोषण किया जाता है । दलालों का एक वर्ग पैदा होता है । दौलत राय ए. सी. ओ. को रिश्वत देते हुए कहता है, "दोहाई है हजूर की. नारा पर वाले खेत की एवज में मुझे डीह के पास दे दिया जाए ।"[55] लेकिन ए. सी. ओ. दौलत के पाँच सौ रूपए फेंक देता है और कहता है, "एक हजार से कानी कौड़ी कम नहीं ।"[56] इससे सरकारी अफसरों में फैली हुई रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार का पता चलता है । भूमेन्द्र लाल की बदली हो जाती है और अनजान राय नया ए. सी. ओ. बन कर आता है । लोगों में चर्चा है कि "अबकी बड़ा कड़ा अफसर आया है, न कचहरी करता है, न किसी से बोलता-बतियाता है, न मुँह लगाता है, न घूस लेता है, एकदम कड़ा, एकदम गुमसुम ।"[57] इस अफसर से दलालों का चिंतित होना स्वाभाविक है.

---

53. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 304
54. - वही - 306
55. - वही - 307
56. - वही - 308
57. - वही - 312

अनजान राय अपना काम सबके सामने करता है जिससे सबको अपने चक के बारे में पता चल सके और लोग अपनी बात खुलकर कह सकें । इसीलिए दीनदयाल को अपने घर से यह कहते हुए भगा देता है कि, "मेरा कोई काम अकेले में नहीं होता । खेतबारी सम्बन्धी सारे काम खुलेआम होंगें ।"[58] इस तरह वह दलाली और रिश्वतखोरी के लिए कोई जगह नहीं छोड़ता । चन्द्रकांत से बातचीत के दौरान ऐसे लोगों के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहता है कि, "ये लोग दलाल हैं । पहले के अफसरों ने इन्हें मुँह लगाकर बिगाड़ दिया है ।"[59] अनजान राय गाँव में फैले इन दलालों और भ्रष्ट अफसरों के निकट सम्बन्ध को बेझिझक स्वीकार करता है । ए. सी. ओ. अनजान अपनी तरफ से अच्छे से अच्छा फैसला करना चाहता है । लेकिन जनता संतुष्ट नहीं होती और विवाद बढ़ते ही जाते हैं, बड़े अफसरों को कोई आमदनी नहीं हो पाती । इसलिए वे भी नाराज हैं । परिणाम-स्वरूप अनजान राय की बदली हो जाती है लेकिन परगना हाकिम को त्यागपत्र देकर सबको स्तब्ध कर देता है, "मैं अपने हाकिमों को खुश नहीं कर पाता, क्योंकि मैं जनता को खुश करने में विश्वास रखता हूँ । तबादले की नोटिस रखिए, मैं त्यागपत्र दे रहा हूँ ।"[60] अनजान का इस्तीफा दलाली, रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार के खिलाफ़ है । उसकी ईमानदारी को दलाल और अफसर दोनों नहीं सह पाते । उसकी कर्मठता इन भ्रष्ट लोगों की आँखों में किरकिरी बनकर चुभती है । अन्ततः अनजान राय भ्रष्ट वातावरण से अलग होकर जनता के साथ खड़ा हो जाता है ।

कुल मिलाकर यही निष्कर्ष निकलता है कि सरकार के पास गाँव के विकास के लिए कोई ठोस योजना नहीं है । यदि कुछ छोटी-मोटी योजनाएँ बनती भी हैं तो उनके क्रियान्वयन में बहुत देरी होती है । गाँवों को मिलने

---

58. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 313
59. - वही - 313
60. - वही - 316

वाली आर्थिक सहायता अधिकारियों, दलालों और गाँव के मुखियाओं के बीच बँट जाती है । ईमानदार अफसरों को परेशान किया जाता है । भ्रष्टाचार और दबंगई ऊपर से नीचे तक फैली हुई है ।

4. राजनीतिक पार्टियाँ और विचारधाराएँ

आजादी के बाद ग्रामांचल पर लिखे गए अधिकांश उपन्यासों में राजनीति के विविध रंग देखने को मिलते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" में राजनीतिक संदर्भ बहुत कम आए हैं । इस उपन्यास में सिरिया सत्य भगत को कम्युनिस्ट कहता है, "तो तू कम्युनिस्ट हो सार । जे बा से एही से बढ़-बढ़ के बतियाते हो ।"[61] मानो "बढ़-बढ़ के बतियाना" कम्युनिस्ट होने की गारंटी हो या गलत बातों, गलत कार्यों का विरोध करने के लिए कम्युनिस्ट होना आवश्यक हो अथवा सिर्फ कम्युनिस्ट ही गलत कार्यों, अन्याय का विरोध करता है, कर सकता है दूसरा नहीं । अनेक प्रश्न उठते हैं और जवाब की उम्मीद करते हैं । सत्य भगत सिर्फ दुलारी के साथ सिरिया की बदतमीजी का विरोध करता है और सिरिया इसे कम्युनिस्ट समझ लेता है । यह सिरिया के कायिक व्यभिचार और मानसिक दरिद्रता का संकेत है ।

उसके सामंती संस्कार सत्य के विरोध को सह नहीं पाते इसीलिए तो वह धमकी देता है, "अबहीं तू सीरी सिंह को नहीं जानते बुढऊ ।"[62] यह सिर्फ अराजकता का प्रतीक है । उपन्यास में कुछेक कांग्रेसियों के चित्र दिखाई पड़ते हैं । सुखदेव राम तो स्वाधीनता आंदोलन के ऐसे सिपाही हैं जो जेल यात्रा भी कर चुके हैं । इनके बारे में गाँव में चर्चा है -- "सुनते हैं भइया ऊ कोई बहुत बड़ा नेता हो गया । तीन साल जेहल काटकर आ रहा है । सुना उसी जेल में महात्मा जी, पंडित जी और बड़े बड़े सुराजी नेता भी बंद थे ।"[63] सुखदेव राम के प्रति लोगों के मन में एक अजीब श्रद्धा का भाव पैदा होता है । उनके स्वागत में एक जलसा होता है जिसमें ज़मींदार जैपाल सिंह

---

61. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 181
62. - वही - 181
63. - वही - 43

भी शामिल होते हैं । वे जनता के मन में सुराजियों के दोस्त की छबि बनाना चाहते हैं । गोगई पंडित लोगों को सम्बोधित करते हैं -- "देश के कारण बड़े-बड़े नेता लोग जेहल काट रहे हैं, सुखदेव राम जी ने छठात अपने नैनों से गान्ही महात्मा को देखा है । अब जोत जगा दीजिए आप लोग भी इस गाँव में कि परदेसी राज भस्म हो जाए अब ई जोत जग के रहेगी, इसमें सुब्हा नहीं ।"[64] गोगई पंडित सुखदेव राम से प्रभावित होकर कांग्रेसी हो जाते हैं और तिरंगा झंडा लेकर गाँव-गाँव प्रचार करते हैं । लोग हँसी उड़ाते हैं तो गोगई कहते हैं, "चिल्लाओ साले मूरखो, तुम क्या जानो सुराज क्या है कभी अपने आँख से देखी हैं देसरत की मूरतें ।"[65]

धीरे-धीरे लोग इस आंदोलन की तरफ आकृष्ट होने लगे । "अलग-अलग वैतरणी" में आज़ादी के बाद कांग्रेस की बदली हुई सूरत पर भी रोशनी डाली गई है । चुनाव लड़ने के लिए सुखदेव राम कांग्रेस से टिकट पाने की कोशिश करते हैं तो नेता लोग उन्हें पहचानने से इन्कार कर देते हैं । यदि किसी ने पहचान भी लिया तो उन्हें टिकट देने लायक नहीं समझा, "यह तो भाई बीहड़ रास्ता है अगम चढ़ाई औघट घाट, धीरे-धीरे बढ़ना होता है । पैर संभाल कर रखिए । लम्बी छलांग लगाएँगे तो नुकसान होगा । नीचे का सहारा तो टूटेगा ही, ऊपर का भी कहीं पकड़ में न आया तो चारों खाने चित्त ।"[66]

कांगेसी नेताओं ने सुखदेव राम को इस तरह का उपदेश दिया. वे बहुत हतोत्साहित हो गए । कांग्रेस में देश प्रेमियों और आजादी के लिए लड़ने वालों की इज्जत कम हो गई । ज़मींदार, सामंत, धनी किसान और

---

64. अलग-अल वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 46
65. - वही - 45
66. - वही - 47

अपराधी तत्त्व कांग्रेस में घुस गए और उसके चरित्र को विकृत कर दिया । कांग्रेस धीरे-धीरे जनता से कट गई । "जल टूटता हुआ" में समाजवादी रामकुमार कहता है कि, " बड़े-बड़े जुल्मी ज़मींदार अब अपने को कहीं न पाकर कांग्रेस में शामिल हो रहे हैं । बहुत ज़ोर-आज़माइश की कांग्रेस से संघर्ष करने की, कानून को तोड़ने की, किंतु हार मानकर कांग्रेस में लौट रहे हैं और कांग्रेस उनको सम्मान दे रही है । जो गरीब बेचारे अनाम रूप से कांग्रेस के साथ मरते-खपते रहे उन्हें कोई पूछता ही नहीं ।"[67] निस्संदेह कांग्रेस में स्वार्थी, व्यावसायिक एवं दबंग वृत्ति के लोगों की घुसपैठ के कारण उसकी चारित्रिक प्रवृत्ति में व्यापक परिवर्तन आया । महीप सिंह जैसे ज़ालिम ज़मींदार कांग्रेस में महत्त्वपूर्ण पद प्राप्त कर लेते हैं । यही महीप सिंह एक गरीब मुसलमान लड़के को जान से मारने के लिए बदमाश भेजता है, जो सुमित्र मास्टर को बताता है कि, "तुम्हें नहीं मालूम मास्टर, यह बाबू महीप सिंह का हुक्म है ।"[68] इस तरह कांग्रेस में साम्प्रदायिक मनोवृत्ति की एक धारा शामिल हो गई, जिसने पार्टी की धर्मनिरपेक्ष छवि को बुरी तरह प्रभावित किया ।

"जल टूटता हुआ" में कांग्रेसी सतीश समाजवादी रामकुमार का विरोध करता है -- "हमारे इलाके में केवल दो ही वर्ग हैं -- एक गरीब का और एक धनी गुंडों का, और दोनों के खिलाफ भीषण प्रकृति का । स्वाधीनता के शुभ अवसर पर हमें चिंतन तो करना ही चाहिए किंतु वर्गवाद के नाम पर समाज के तमाम अंगों को बरगलाना नहीं चाहिए ।"[69] सतीश

---

67. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 9
68. - वही - 14
69. - वही - 10

आदर्शवादी है, कांग्रेसी है और मार्क्सवाद का विरोधी है । पर कांग्रेसी होने के बावजूद महीप सिंह से विरोध रखता है । उसमें भावुकता है और ईमानदारी तथा न्याय के प्रति आग्रह है । रामकुमार समाजवाद से प्रभावित है । स्वतंत्रता दिवस के मौके पर वह गाँव की गरीब जनता के सामने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहता है, "आज भी हरिजनों को ज़मीन नहीं मिली और ज़मींदारी टूटने की बात कबसे सुनी जा रही है, किंतु ज़मीन कहाँ जा रही है ? किसे दी जा रही है ? दस गुना लगान लेकर भूमिधर बनाया जा रहा है -- किसको बनाया जा रहा है ? जिसके पास पहले से ही खेत मौजूद हैं और जो दस गुना लगान दे सकते हैं । जो नहीं दे सकते वे अपने घर की रही-सही सम्पत्ति बेचकर लगान चुका रहे हैं ।"[70] कांग्रेसी नीति की यह सबसे बड़ी विफलता रही है। ज़मींदारी-उन्मूलन से पैसे वालों को ही फ़ायदा हुआ । भूमिहीन एवं खेतिहर मजदूरों को कुछ नहीं मिला ।

"जल टूटता हुआ" में समाजवादी रामकुमार को हास्यास्पद बना दिया गया है । एक तरफ वह समाजवाद की बात करता है तो दूसरी तरफ निहित स्वार्थ और अवसरवाद की राजनीति करता है । कॉलेज के दिनों में तो "कुमार स्टडी सर्किल में मार्क्सवाद सुनने लगा और अपने कच्चे अनुभव में मार्क्सवाद के समाजवादी सिद्धांतों को ठूँसकर उगलने लगा । वह अब विद्रोही नेता हो गया । सारी परम्पराओं, वेषभूषा, रहन-सहन को बदल कर सब कुछ नया ओढ़ लिया । हर चली आती हुई चीज को बदलने की धुन में था ।"[71] लगता है रामकुमार का यकायक मार्क्सवादी हो जाना लेखक को रास नहीं आता । रामकुमार गंभीर और प्रतिबद्ध समाजवादी नहीं बन पाता । उसका चरित्र अधकचरा बन कर रह जाता है । फिर भी वह समाजवाद

---

70. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 9
71. - वही - 48

को अपना आदर्श मानता है । और कांग्रेस की नीतियों और उनके कार्यक्रमों का विरोध करता है । वह आदर्श और भावुकता का राजनीति में कोई स्थान नहीं मानता । "राजनीति में सब कुछ क्षम्य है, जायज है । आप लोग राजनीति और आदर्श को एक करके मत देखिए । इस भावुकता से राजनीति नहीं चलती ।"[72] अपने विचारों की पुष्टि के लिए वह चाणक्य और कृष्ण का दृष्टांत पेश करता है । सतीश गांधी को आदर्श रूप में प्रस्तुत करता है । "हमारे अधिक निकट तो गांधी का उदाहरण है जिन्होंने साधन और साध्य दोनों की पवित्रता पर बल दिया है । माफ करना कुमार मैं आदर्श को राजनीति से अलग करके नहीं देख पाता ।"[73] इस तरह सतीश और रामकुमार के माध्यम से दो विरोधी राजनीतिक विचारधाराओं को प्रस्तुत किया गया है । राष्ट्रीय मुक्ति-आंदोलन में गांधी जी भारतीय राजनीति के शिखर पर थे और उन्होंने अपनी नीतियों व कार्यक्रमों से जनता को काफी प्रभावित किया । लेकिन विडम्बना तो यह है कि आज़ादी के बाद कांग्रेस ने गांधी जी के आदर्शों एवं नीतियों को छोड़ दिया और वह पूरी तरह जातिवादी-अवसरवादी राजनीति के शिकंजे में फँस गई । मार्क्सवादियों और समाजवादियों ने कांग्रेस के विकृत चरित्र का खुलकर विरोध किया, जबकि कुछ लोगों ने कांग्रेस से अपना भावात्मक रिश्ता बनाए रखा । "जल टूटता हुआ" में रामकुमार की अपेक्षा सतीश को ज्यादा महत्त्व दिया गया है । मानो कांग्रेस ही समता एवं न्याय की ठेकेदार हो और मार्क्सवादी या समाजवादी जनता के दुश्मन हों । कांग्रेस के प्रति यह आग्रह कहीं न कहीं लेखक के दृष्टि-कोण को उजागर करता दिखाई देता है । वहीं "अलग-अलग वैतरणी में कांग्रेस में व्याप्त भ्रष्टाचार, जातिवाद एवं साम्प्रदायिक मनोवृत्ति को चित्रित किया गया है ।

---

72. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 195
73. - वही -

5. नए वर्ग और वर्गीय प्रवृत्तियाँ

आजादी के बाद गाँवों के विकास के लिए अनेक योजनाएँ बनीं । पंचायती-राज, चकबंदी, ज़मींदारी-उन्मूलन और पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से गाँव की आर्थिक, सामाजिक स्थिति में बदलाव के प्रयत्न शुरू हुए । ज़मींदारी-उन्मूलन एक क्रांतिकारी कदम था । औद्योगिक विकास के कारण नगरीकरण को प्रोत्साहन मिला । गाँव से गरीब किसान एवं खेतिहर मजदूर काम की तलाश में शहर की ओर उन्मुख हुए । शहरी मध्यवर्ग का अभ्युदय तो अंग्रेजी राज में ही हो चुका था । पर गाँवों में आज़ादी के बाद एक नवधनाढ्य वर्ग अस्तित्व में आया । "जल टूटता हुआ" में दौलत राय का सम्बन्ध इसी वर्ग से है । आज़ादी के पहले दौलत राय फटेहाल था परन्तु सिंगापुर की कमाई ने उसकी कायापलट दी । "देखते-देखते दो महीने में दौलत राय बड़े आदमी बन गए । फटाफट दोनों भाइयों की शादियाँ हो गईं, घर में घड़ियाँ चमक उठीं, साइकिलें आ गईं, पानी का नल गड़ गया और गाँव के प्रतिष्ठित लोगों में गिने जाने लगे ।"[74] इससे स्पष्ट होता है कि सामाजिक प्रतिष्ठा दिलाने में धन का विशेष महत्त्व होता है । दौलत राय की मजबूत आर्थिक स्थिति देखकर गाँव का धनी किसान दीनदयाल भी उसे काफी महत्त्व देने लगता है । इसी तरह कुछ लोगों ने राजनीति में अपनी पैठ बना ली । "काली प्रसाद पाण्डेय इस खित्ते के एम. एल. ए. हैं । पुराने कांग्रेसी कार्यकर्ता हैं । ऐंठ-ऐंठ कर बोलते हैं । पहले होमियोपैथी के डॉक्टर थे । डॉक्टरी नहीं चली तो स्वाधीनता संग्राम में शामिल हो गए । फटेहाल फिरते रहे और अब एम. एल. ए. हैं ।"[75] काली प्रसाद पाण्डेय

---

74. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 242
75. - वही - 292

स्वाधीनता संग्राम से होकर सक्रिय राजनीति में पधारे हैं और उस पर इनका हाल यह है कि, "गोरखपुर में दो-दो कोठियाँ बनवा ली हैं । घर के पास की बहुत बड़ी ज़मीन को (जो एक दूसरे आदमी की थी) कब्जे में कर लिया है । राजनीतिक पीड़ित के नाम पर तराई में चालीस-पचास एकड़ ज़मीन प्राप्त कर ली है ।"[76] ज़मींदार महीप सिंह भी कांग्रेस में शामिल होकर पार्टी में महत्वपूर्ण पद प्राप्त कर लेते हैं । इस तरह व्यावसायिक राजनीतिज्ञों का एक वर्ग बनकर तैयार होता है । जो सत्ता के लिए कोई भी अनैतिक कार्य करने में हिचकिचाता नहीं । गाँवों में दलालों का भी एक वर्ग पैदा हुआ । यह वर्ग थाना, अस्पताल, कचहरी और ब्लाक जैसी जगहों में घुसकर, अफसरों-कर्मचारियों से मिलकर दलाली करने लगा । "जल टूटता हुआ" में दीनदयाल और दौलत राय इसी काम में लग जाते हैं । "हर गाँव से पैसे वाले धूर्त लोग शहर को दौड़ रहे हैं और इंजीनियर को मोटी-मोटी घूस दे-देकर कई-कई गाँव अपने नाम करा रहे हैं । तिवारीपुर से दीनदयाल और दौलत राय ने ठीका लिया है । पाँच-पाँच गावों का ।"[77] चारों तरफ दलाली, रिश्वतखोरी और शोषण का आलम है । स्कूल के शिक्षकों की दशा यह है कि पढ़ाना-लिखाना छोड़कर वे ठेकेदारी करने लगे हैं । "हाई स्कूल के कई मास्टर भी ठेका लिए हुए हैं । ठीके के चक्कर में न तो ये टाइम से स्कूल आ पाते हैं और न शिक्षण में ध्यान दे पा रहे हैं ।"[78] नतीजा यह हुआ कि लड़कों की पढ़ाई चौपट हो गई और गाँव की युवा पीढ़ी को सही दिशा नहीं मिल सकी । पर न अध्यापकों को और न ही सरकार को इसकी कोई चिंता है । अधकचरेपन और गैर-जिम्मेदाराना हरकतों के कारण पूरी शिक्षा-व्यवस्था को गहरा आघात पहुँचा ।

---

76. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 293
77. - वही - 300
78. - वही - 300

परिस्थितियों में बदलाव के साथ शोषण के तरीके तो बदले अवश्य, पर शोषण में कोई कमी आई हो, ऐसा नहीं हुआ । सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक दृष्टि से सम्पन्न लोगों ने गरीबों का शोषण जारी रखा ।नवधनाढ्य वर्ग भी पीछे नहीं रहा । "अलग-अलग वैतरणी" में जमींदार जैपाल सिंह दलाली करते चित्रित किए गए हैं । फूला की हत्या के सिलसिले में देवा को बचाने के लिए ग्राम-सभापति सुखदेव राम से एक हजार में सौदा पटाने के लिए कहते हैं । "मामला संगीन है तो आमदनी भी संगीन होगी, एक हजार से कम पर राजी मत होना ।"[79] जगेसर पुलिस का सिपाही है और गाँव में एक गरीब बायस्कोप वाले को मार-पीट कर उसके पैसे छीन लेता है और धमकी भी देता है -- "समझते हो कि यह लड़कों का खेल है । बंद कर देंगे अँधेरी कोठरी में कि साले तुम्हारा दिमाग ठंडा हो जाएगा ।"[80] जगेसर गाँव के ही मध्यवर्गीय किसान जग्गन मिसिर से अकारण उलझ जाता है और धमकाता है कि, "हमको आँख दिखाने की कोशिश मत करो पंडित । समझे, हमने बड़े-बड़े गुंडों की हेकड़ी निकाल दी है ।"[81] ऐसे लोग निश्चित रूप से अपने पद व प्रतिष्ठा का दुरुपयोग करते हैं । इस प्रवृत्ति का तेजी से फैलाव हुआ है । "अलग-अलग वैतरणी" में जगेसर के पिता देवी चौधुरी खलील मियाँ का रेहन वाला खेत हड़प जाते हैं । पंचायत में जगेसर कहता है, "ई बात सही है कि दो हजार रुपये पर खेत रेहन धरा गया । मगर उसके बाद कई बार मियाँ जी को रुपयों की जरूरत पड़ी । तीन हजार रुपयाऔर दिया । बयना में की बात हुई तो खलीलमियाँ ने कहा कि अपने नाम बंदोबस्त कराके भूमिधरी ही ले लो । बयनामा कराने में हमारी हँसाई होगी । सोचा ठीक है मियाँ जी का नमक खाया है हम लोगों ने ऐसा करो कि इनकी बेइज्जती न हो । सो पंचो, बंदोबस्त कराके अपने नाम हमने भूमिधरी करा ली ।

---

79. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 59
80. - वही - 248
81. - वही - 248

अब काहे का रूपया और काहे का खेत ?"[82] यह कैसी नमक-हलाली है कि जिसका खाया, उसी को धोखा दिया, उल्टे उसी पर इलजाम लगा दिया । ज़मीन की लालच में जगेसर ने पटवारी से मिलकर जालसाजी की और सफल रहा । जब खलील मियाँ इसे फरेब कहते हैं तो जगेसर बेअदबी पर उतर आता है -- "हमको आप जोलहकट्टी मत सिखाइए ।"[83] इस प्रवृत्ति को लक्ष्य करते हुए डा. चन्द्रकांत बांदिवडेकर ने लिखा है कि, "प्राय: बड़ी ज़मींदारी के खत्म होने के बाद ये अधिक मजबूत और उन्मत्त भी होते हैं, और वही अत्याचार, अन्याय और धोखाधड़ी का दमनचक्र जारी रहता है जिस तरह धर्म परिवर्तन करने वाला व्यक्ति अधिक कर्मठ और कठोर होता है, वैसे ही नए उभरते परिवारों के लोग अधिक उन्मत्त होते हैं । तिस पर ये अगर कहीं मामूली-सी सरकारी नौकरी पर होते हैं तो इतने टुच्चेपन से काम लेते हैं कि सारा भुक्कड़पन और संस्कारहीन विद्रूप प्रकट हो जाता है ।"[84] जगेसर इसी संस्कारहीनता का परिचय देता है । जब वह जग्गन मिसिर से अकारण झगड़ पड़ता है या बायस्कोप वाले को मारपीट कर उसका पैसा छीन लेता है अथवा सबसे बढ़कर जब वह खलील मियाँ का खेत जबरन अपने नाम करा लेता है तो उसमें इस वर्ग की विकृत्तियाँ ही परि-लक्षित होती हैं । वंशी सिंह भी पहले जैपाल सिंह के नौकर थे, पर जमींदारी खत्म होने के बाद उनकी स्थिति काफी मजबूत हो गई । पहले मामूली किसान थे, "मामूली जमीन थी उनके पास । साल दोनों जून खाने के लिए भी मुश्किल अँट पाता । देखते ही देखते बंशी काका की बखरी चौखुंटा पक्की हो गई । दरवाजे पर दो खंभियों वाला दालान और कोठा । बैलों की पक्की चरनी, तथा दालान के सामने की सारी फर्श ईंटों से जड़कर उनके वैभव का ऐलान करने लगी ।"[85] जमींदारी उन्मूलन से सर्वाधिक फायदा इसी वर्ग को मिला ।

---

82. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 196
83. - वही - 196
84. उपन्यास स्थिति और गति, - चंद्रकांत बांदिवडेकर, पृ. 183
85. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 141

"जल टूटता हुआ" में दीनदयाल और दौलत जैसे लोग दिन-पर-दिन अमीर होते जा रहे हैं । "अलग-अलग वैतरणी" के जगेसर, बंशी सिंह की आर्थिक स्थिति मजबूत होती जा रही है । इसमें कोई जादूगरी नहीं है । बस, जालसाजी, बेईमानी, अन्याय और शोषण ही इस वृद्धि के प्रमुख कारण हैं । स्वार्थ, कट्टरता, मिथ्याभिमान और क्रूरता इस वर्ग की प्रवृत्तियाँ हैं ।

अलग-अलग वैतरणी" के सुखदेव राम, जो स्वयं पिछड़े समुदाय से आते हैं और जिन्होंने आजादी की लड़ाई में भी हिस्सा लिया था, आज अचानक बदल क्यों गए ? ठाकुरों और चमारों के बीच हुए खूनी संघर्ष के लिए चमारों को ही दोषी ठहराते हैं । " सुरजू सिंह के दरवाजे पर तो साले वही आए थे । सुना कि बारहो गाँवों के चौधुरियों को पान-पत्ता के लिए मिला था, फिर आप तो सरकार हैं, आपको क्यों नहीं मिलेगा ?"[86] यह बात गाँव के मुखिया सुखदेव राम दारोगा से कहते हैं । इसमें उनका लोभ, स्वार्थ और पूर्वाग्रह सब कुछ उभरकर सामने आ जाता है । यही गरीबों के नेता हैं । ये गरीबों की ही जड़ खोदते हैं । जिस समुदाय से ये नेता लोग आते हैं उसकी पीड़ा, उसकी भावना को ही ये नहीं समझते अथवा समझकर भी टाल जाते हैं, अपने निहित स्वार्थ के कारण ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आज़ादी के बाद धनी किसानों, नेताओं या सरकारी अमलों के जो वर्ग उभरे, वे पुराने ज़मींदारों और सामंतों से भी अधिक खतरनाक साबित हुए । खासतौर से गरीब जनता को इन्होंने ज्यादा तबाह किया ।

6. ग्राम-राजनीति एवं आर्थिक विकास की संभावनाएँ

आजादी के बाद पंचायती-राज की शुरुआत हुई । इसके तहत गाँव में पंचायत-चुनाव कराए गए । राजनीति ने गाँव में प्रवेश किया । जिसने गाँव के लोगों पर कई तरह से प्रभाव डाला । गाँव के मुखिया के लिए होड़-सी मच गई । गुटबंदियाँ होने लगीं । आपसी मनमुटाव बढ़ने लगा । मार-पीट, छल-कपट, चोरी-बेईमानी जैसी विकृतियों का तेजी से विकास हुआ । मानवीय मूल्यों में बदलाव आने लगे और पुरानी मान्यताएँ-परम्पराएँ टूटने लगीं । "जल टूटता हुआ" का सतीश इस टूटन को अनुभव कर बेचैन हो उठता है पर दूसरी तरफ सकारात्मक बदलाव संतोष देता है । वह सोचता है कि, "गाँव टूट रहा है, मगर नहीं एक नया गाँव भी बन रहा है वह किसानों-मजूरों का, जगपतिया का खेत नहीं कटा सके महीप सिंह । वह अकेला नहीं था, उसके साथ अनेक हाथ उठ गए थे मरने-मारने को तैयार ।"[87] महीप सिंह जगपतिया की संगठित शक्ति के सामने मन-मानी नहीं कर पाते । जगपतिया वामपंथी विचारधारा से प्रभावित होकर कलकत्ता से गाँव लौटा और महीप सिंह के अत्याचारों का विरोध करना शुरू कर दिया । महीप सिंह और सतीश के बीच सरपंच पद की दावेदारी को लेकर तनाव बढ़ जाता है । दीनदयाल ग्राम-पंचायत के सभापति-पद के लिए खड़े हुए । कुंजू उनके खिलाफ प्रचार करता है । दलसिंगार-दीनदयाल मिलकर कुंजू को व्यभिचार के आरोप में गिरफ्तार करवाना चाहते हैं । इसी चुनाव को लेकर कुंजू की फसल कट गई, रामकुमार का बैल चोरी हो गया और सतीश पर गंड़ासा से हमला किया गया । लोग गुटों में बँट गए

---

87. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 258

हैं और तरह-तरह से चुनावी रणनीति बनाते हैं । गाँव में जातियों के आधार पर भी विभाजन हुआ । गाँव में दलाल पैदा हो गए । पैसा थाना और कचहरियों में जाने लगा है क्योंकि आपसी मामले अब गाँव के स्तर पर नहीं सुलझाए जा सकते । लोगों के बीच-विवाद बढ़े हैं — खेत-खलिहान को लेकर और मुखिया-सरपंच के पद को लेकर ।

"अलग-अलग वैतरणी" में स्कूल मास्टर जवाहिर लाल गाँव की राजनीति में ज्यादा रूचि लेता है । सुरजू सिंह से उसकी दोस्ती है । पढ़ने-पढ़ाने में उसकी कोई रूचि नहीं । जब शशिकांत बच्चों में रूचि लेता है, उनके शारीरिक, मानसिक विकास के लिए प्रयत्न करता है तो जवाहिर लाल उसका मजाक उड़ाता है और मन ही मन कुढ़ता भी है । इतना ही नहीं, शशिकांत को सुरजू-बुझारथ की दुश्मनी में मोहरा बनाना चाहता है । अंततः शशिकांत को बुरी तरह पीटकर, आँखों में धूल झोंक कर पैसा छीन लिया जाता है । इस तरह अध्यापक राजनीति में फँसकर शिक्षा- व्यवस्था को बर्बाद कर रहे हैं । उनकी इस लापरवाहीसेछात्रों की शिक्षा पर बहुत बुरा असर पड़ता है । गाँव में राजनीति के घुसने का यह सबसे घातक पहलू है । "जल टूटता हुआ" का स्कूल इसी तरह के दुश्चक्र में फँसकर बर्बाद हो जाता है । "एक तो यों ही विद्यार्थियों को वातावरण नहीं मिल पाता, दूसरे ये अभागे मूर्ख मास्टर इकट्ठा होकर इन्हें बर्बाद कर रहे हैं और राजनीति का शिकार हो रहा है स्कूल ।"[88] आज़ादी के बाद शिक्षा के क्षेत्र में निरंतर गिरावट आई और यह संभव हुआ राजनीति के प्रवेश से. "अलग-अलग वैतरणी"केस्कूल मास्टर शशिकांत को बेवजह इस कीचड़ में घसीटा जाता है । सुरजू सिंह, शशिकांत को अपने पक्ष में बयान देने के लिए मजबूर

---

88. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 266

करते हैं । "आपने जो कुछ देखा है वही कह दीजिए । हम खुद नहीं चाहेंगे कि आप इस गाँव की पार्टीबंदी में शामिल हों या उलझें ।"[89] लेकिन क्या सच यही है ? अगर शशिकांत सच कहे तो वह बयान सुरजू के खिलाफ जाएगा और सुरजू कभी नहीं चाहेंगे कि शशिकांत का बयान उनके खिलाफ हो । इसीलिए वह शशिकांत पर लगातार दबाव बनाते हैं । पर वह इसे स्वीकार नहीं करता और तब शाम के धुंधलके में शशिकांत को मार-पीट कर रुपए छीन लिए जाते हैं । ये सारी घटनाएँ एक-दूसरे से जुड़ी होती हैं । यही गाँव की टुच्ची राजनीति है । इसमें आर्थिक-विकास की कोई संभावना नजर नहीं आती । धरमू सिंह की कुर्की कराने के लिए अमीन जब गाँव में आता है तो हरिया नए-नए लड़कों को लेकर इसके खिलाफ नारेबाजी करता है । उसका मतलब यह नहीं कि हरिया को धरमू सिंह के प्रति कोई सहानुभूति है या उसे बहुत दुख है, इसलिए विरोध व्यक्त करता है बल्कि सुरजू का खास आदमी होने के कारण विरोध करता है । महज बनावटी विरोध, एक तमाशाई बनकर । जब बुझारथ दुक्खन को पीट देते हैं तो सुरजू इस घटना को इस्तेमाल करने के लिए दुक्खन को उकसाकर जैपाल सिंह के पास भेज देते हैं क्योंकि उनकी नजर में "जैपाल सिंह एक चरवाहे के लिए अपने बेटे से लड़ जाएँ तो भी या बेटे का पक्ष लेकर दुक्खा को खदेड़ दें तो भी, मज़ा ही मज़ा है ।"[90] सुरजू जैपाल और उनके खानदान के खिलाफ कोई मौका हाथ से नहीं जाने देना चाहते । इससे यह भी संकेत मिलता है कि ज़मींदारी उन्मूलन के बाद धनी किसानों और पूर्व ज़मींदारों के बीच टकराहट शुरू हो गई । यह टक्कर धनी किसानों की तरफ से स्वयं को ज़मींदारों के बराबर स्थापित करने के लिए होती थी । गाँव की राजनीति में इस धनी किसान ने ज़मींदारों के वर्चस्व को खत्म करने की पूरी कोशिश की और

---

89. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 366
90. - वही - 161

ज़मींदार अपनी चाल से इसे नाकाम करता है । जैसा कि "अलग-अलग वैतरणी" में सुरजू सिंह की कोशिश है कि जैपाल सिंह मुखिया न बन पाएँ, परन्तु जैपाल अन्दर ही अन्दर सुखदेव राम से समझौता कर सुरजू को सभापति नहीं बनने देते और इस तरह परोक्ष रूप से अपना दबदबा कायम रखते हैं । कहीं-कहीं ज़मींदारों और धनी किसानों के बीच बहुत अच्छे रिश्ते भी बन जाते हैं । जैसे, "जल टूटता हुआ" में महीप सिंह का दीनदयाल और दौलत राय से अच्छे सम्बन्ध हैं । दोनों एक दूसरे की सहायता से गरीबों का खून चूसते हैं । दोनों एक-दूसरे के स्वार्थ का विशेष ख्याल रखते हैं । दीनदयाल सभापति बनना चाहते हैं तो महीप सिंह सरपंच, और दोनों मिलकर सतीश-रामकुमार के गुट को हराना चाहते हैं । इससे बहुत ओछी हरकतें होती हैं गाँव में, चोरी, मारपीट, व्यभिचार जैसी विकृतियाँ जोर पकड़ती हैं । खुलकर समर्थन या विरोध की बजाय अंदर-अंदर समझौते, दुरभिसंधियाँ होती हैं । इस पर अगर कोई कहे कि गाँव के लोग बहुत भोले-भाले हैं, मानने को जी नहीं करता । गाँव की टुच्ची राजनीति से बहुत कम लोग ही बचे हैं और ऐसे लोगों को कोई भी गुट महत्व नहीं देता ।

ग्रामीण-राजनीति के जाल में विकास की सारी संभावनाएँ फँस जाती हैं । गाँव में जो लोग अपने को राजनीति से अलग रखते हैं उन्हें मुखिया भी कोई महत्व नहीं देता और न ही उनका कोई विकास - सम्बन्धी काम ही हो पाता है । विकास-कार्यों के लिए आने वाला धन इसी राजनीति की बलि चढ़ जाता है । गाँव का मुखिया और छोटे-बड़े अफसर पैसा खा जाते हैं और कोई भी इस भ्रष्टाचार का विरोध नहीं कर पाता क्योंकि भ्रष्टाचारी के हाथ-पाँव दूर तक फैले होते हैं ।

कुल मिलाकर निष्कर्ष यही निकलता है कि राजनीति ने गाँवों की सहजता, सामूहिकता, नैतिकता और ईमानदारी को नष्ट किया और भ्रष्टाचार, तनाव एवं संघर्ष को जन्म दिया । इसके बरअक्स ग्राम-पंचायत जैसी संस्थाओं ने भी ग्रामीण विकास में कोई योगदान नहीं किया । बल्कि पद, प्रतिष्ठा एवं पैसे की लालच में हिंसा को बढ़ावा दिया है ।

****

तृतीय अध्याय

सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन और चेतना

1. जाति-प्रथा एवं गुटबंदी
2. साम्प्रदायिकता
3. पारम्परिक मूल्य, विश्वास, प्रथाएँ और संस्कार
4. परम्परा और आधुनिकता की टकराहट : बदलती हुई चेतना और मानवीय सम्बन्ध
5. विकृतियाँ एवं विकास

1. जाति-प्रथा एवं गुटबंदी

भारतीय समाज-व्यवस्था में जाति की महत्त्वपूर्ण भूमिका है । हिन्दू समुदाय में व्यक्ति की जाति का निर्धारण जन्म से ही हो जाता है । सामान्यतया, प्रायः गाँवों में, एक-दूसरे का परिचय प्राप्त करते समय जाति के बारे में जानने की उत्सुकता ज्यादा पाई जाती है । लोग इसी आधार पर व्यवहार व दृष्टिकोण तय करते हैं । आज़ादी के बाद जाति-प्रथा में कुछ शिथिलता आई है किंतु जातिवाद का ज़हर तेजी से फैला है । इसमें राजनीति की अहम् भूमिका रही है । जातिवादी मानसिकता का गाँव से शहर तक तेजी से विकास हुआ है । शिक्षित समुदाय इससे सर्वाधिक प्रभावित है ।

"जल टूटता हुआ" में बलई तिवारी को दौलत राय की पार्टी के लोग मारने-पीटने लगते हैं तो वह अपनी जाति-बिरादरी के लोगों से गुहार करता है, "क्या ताकते हो भाइयों, भुइहार बामनों को अपना नौकर समझता है । ई मउगा दलसिंगार उसके इहाँ मजूरी करके बामनों की नाक कटा रहा है ।"[1] दो जातियों के संघर्ष में प्रायः लोग अपनी-अपनी जाति के साथ खड़े होते हैं । पर दीनदयाल तिवारी बलई का साथ देने नहीं जाते और अपने बेटे को भी नहीं जाने देते, जो दौलत राय की तरफ से मार-पीट करने पर उतारू है । "पगला गए हो इस भुइहार के लिए पट्टीदारी से कोई झगड़ा करेगा ? मार-झगड़ा करने वाले कम तो नहीं हैं, तुम खाली हाथ बस चले जाओ ।"[2] दीनदयाल पट्टीदारी से झगड़ा मोल नहीं लेना चाहते और दौलत के साथ बेटे को खड़ा करके उनकी सहानुभूति भी बटोर लेना चाहते हैं ।

---

1. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 243
2. - वही - 243

गाँव के सारे ब्राह्मण दलित समुदाय के युवक हँसिया को इसलिए मारते-पीटते हैं कि उसने एक ब्राह्मण लड़की पार्वती के साथ जबर्दस्ती की । "बामनों का खून खौल रहा था कि चमार के लड़के की यह हिमाकत कि बामन की लड़की से प्रेम करे, साले को खत्म कर देना चाहिए ।"[3] पर जब ब्राह्मणों के लड़के पार्वती को छेड़ते हैं तो कोई तूफान नहीं खड़ा होता । मानो इन्हें किसी लड़की को छेड़ने का हक प्राप्त हो । निस्संदेह यह जाति-श्रेष्ठता का अहं है । "जहाँ स्वार्थ सधता है, जहाँ खतरा नहीं होता, वहाँ लोग ब्राह्मण होने में कसर नहीं रखते ।"[4] हँसिया गरीब है, निम्न जाति का है इसलिए उसे मारने में कोई खतरा नहीं है । इस तरह वे अपने अहंकार और कुंठा को शांत करते हैं । इसके विपरीत जब कोई ऊँची जाति का लड़का नीची जाति की लड़की से प्रेम करता है, उसका यौन-शोषण करता है तो इन ऊँचे लोगों का अहंकार सिर नहीं उठाता । हँसिया की बहन लवँगी इसी सच्चाई को सामने रखती है तो ब्राह्मण लोग तिलमिला उठते हैं । "जब चमरौटी की तमाम लड़कियों पर ये बाबा लोग हाथ साफ करते हैं तो कोई परलय नहीं आती और कोई चमार बामन की लड़की को छू देता है तो परलय आ जाती है ।"[5] "अलग-अलग वैतरणी में सुरजू सिंह और सुगनी एक ही कोठरी में रंगे हाथ पकड़ लिए जाते हैं। चमारों की पंचायत सुगनी को सुरजू के घर पहुँचाने का फैसला लेती है । इस फैसला को सुनकर गाँव के सारे ठाकुर आपसी रंजिश भूलकर एक हो जाते हैं । हरखू सरदार कहते हैं, "ई कौनो हँसी-मजाक नहीं है कि नान्ह जात की लड़की को किसी ठाकुर के घर घुसेड़ दिया जाए, महाबीर सामी कसम, ऐसे ही मौकों पर जैपाल भाई की याद आती है । आज अगर उ होते तो चाहे लाख दुश्मनी हो,

---

3. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 243
4. - वही - 245
5. - वही - 235

भाई-बिरादरी की इज्जत को नीलामी पर हर्गिज नहीं चढ़ने देते । ई मामला अब सुरजू सिंह का नहीं है । ई पूरे ठकुराने का मामला हो गया ।"[6] चमारों के खिलाफ ठाकुर एक हो जाते हैं । सुरजू के पुश्तैनी दुश्मन बुझारथ भी बन्दूक की नली साफ करने लगते हैं । इससे तो यही ध्वनित होता है कि ठाकुर लोग चमारों की बहू-बेटियों की इज्जत लूटना अपना हक समझते हैं और दूसरे के हक को देना नहीं चाहते बल्कि इस मुद्दे पर गोलबंद हो जाते हैं ।

आज़ादी के बाद निम्न जातियों में भी अपने जातीय सम्मान के प्रति जागरूकता बढ़ी है और वे एकजुट होकर बड़ी जातियों के अत्याचार का विरोध करने लगे हैं । इनमें आपसी सहयोग की भावना प्रबल हुई है । ऊँची जातियों में आपसी मतभेद एवं गुटबंदियाँ तो हैं पर जातीय सम्मान के नाम पर वे एकजुट हो जाते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" में सुगनी के साथ सुरजू सिंह के अनैतिक यौन-सम्बन्ध का चमार विरोध करते हैं । ठाकुरों के मन में निम्न जाति के लिए आदर का भाव नहीं है । इसीलिए शायद सिरिया सत्य भगत का मजाक उड़ाता है । "आए बड़ी इज्जत वाले - चमार और ठाकुर की इज्जत एक हो जाएगी ।"[7] यहाँ मूल प्रश्न आर्थिक असमानता और शोषण का है ।

अलग-अलग वैतरणी" में ठाकुरों और चमारों के बीच संघर्ष होता है जो अत्याचार और उसके विरोध से उपजे द्वन्द का परिणाम है । दलित समुदाय का शिक्षित युवक सुरजभान ऊँची जातियों के अत्याचार की कहानी चमारों को सुनाता है तो उनके बदन में आग लग जाती है । "उसने एक न

---

6. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 437
7. - वही - 181

छोड़ी - बड़ी जात का सारा भंडा फोड़कर रख दिया । ग़रीबों पर उनके जोर जुल्म की एक से एक कहानियाँ उसे याद थीं कि मुरदे भी सुनें तो उनका खून खौल जाए ।"[8] इस उत्तेजना का कारण दलितों में विकसित चेतना है, जो उन्हें जातीय अपमान के खिलाफ संघर्ष करने की प्रेरणा प्रदान करती है । सत्य भगत ऊँची जाति के अत्याचारों का विरोध तो करता ही है, अपनी बिरादरी में व्याप्त अनाचार को दूर करने पर भी जोर देता है ।

जातीय गुटबंदी की समस्या आधुनिक समाज में कोढ़ में खाज की तरह है । "अलग-अलग वैतरणी" के सुखदेव राम गुटबंदी को एक अनिवार्य जरूरत मानते हैं । "आजकल तो पार्टी बंदी और गोलबाजी का ही जमाना है मिसिर जी, रास्ता तो इसी के भीतर से खोजना होगा ।"[9] गाँव में सुखदेव राम ने एक पार्टी बना रखी है जिसमें ज्यादातर निम्न जाति के लोग हैं । सुरजू सिंह की भी अपनी पार्टी है जिसमें ज्यादातर ठाकुर नव-युवक भरे पड़े हैं । स्कूल हेडमास्टर जवाहिरलाल सुरजू सिंह की पार्टी से अपना सम्बन्ध रखता है । वह अपने ही स्कूल के मास्टर शशिकांत के खिलाफ सुरजू सिंह के कान भरता है । सुरजू की पार्टी का सिरिया कहता है कि, "पाण्डे जी, विपिन, देउ, जग्गन मिसिर की पाल्टी में हैं ।"[10] शशिकांत किसी पार्टी में नहीं है । इसका नतीजा उसे भुगतना पड़ता है । वह शाम के वक्त शहर से लौट रहा था "तभी उस आकृति का हाथ हिला था । शशिकांत चीखकर पीछे हटा कि सर पर एक भारी-सी चीज सख्त ईंट की तरह टकरा गई थी । वह घुटने के बल बैठ गया था । वह आदमी उसे ताबड़-तोड़ पीटे

---

8. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 427
9. - वही - 448
10. - वही - 368

जा रहा था ।"[11] इस बेगुनाह की दुर्दशा का कारण गुटबंदी है । गाँव में वह आदमी, जो किसी पार्टी से जुड़ा नहीं होता, सभी गुटों में संदेह की नजर से देखा जाता है और वक्त पड़ने पर उसे कोई नहीं बचाने आता । शशिकांत जैसा ईमानदार एवं कर्मठ अध्यापक अपमानित होकर चला जाता है । यह गुटबंदी कभी निहित स्वार्थ के आधार पर, तो कभी जातीय सम्मान की रक्षा के नाम पर होती है । "जल टूटता हुआ में पार्वती हँसिया पर छेड़छाड़ का आरोप लगाती है तो ब्राह्मणों का खून खौलने लगता है । न्याय और समानता की भाषा बोलने वाला सतीश भी आंदोलित हो उठता है । "वह देख रहा था कि लवंगी की बात में सत्य की शक्ति है, उसके आँसुओं में विद्रोह है, नए ज़माने की आवाज है और सचमुच कब तक यह भेद चलता रहेगा । हँसिया की करतूत उसके संस्कारों को भी धक्के मार रही थी ।"[12] यह जातीय अहंकार की पराकाष्ठा है कि भेदभाव, शोषण और अत्याचार का सदैव विरोध करने वाला सतीश भी अपने ब्राह्मणवादी संस्कारों की गिरफ्त में आ गया ।

पंचायत चुनाव के दौरान गुटबंदी और वीभत्स रूप ले लेती है । "जल टूटता हुआ" में ब्राह्मणों में ही कई गुट हैं । एक दीनदयाल का, जिसके साथ दलसिंगार है, दूसरा - सतीश का, जिसके साथ रामकुमार, कुंजू, रघुनाथ आदि हैं । दीनदयाल के साथ दौलत राय भी हैं । दोनों घोर स्वार्थी हैं, अन्यायी और शोषक हैं । इनके खिलाफ सतीश है जो अन्याय और शोषण का विरोध करता है । रामकुमार सोशलिस्ट है और

---

11. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 371
12. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 236

दीनदयाल से मनमुटाव हो गया है इसलिए सतीश का साथ देता है । कुंजू सीधा-सादा गरीब किसान है और सतीश के व्यवहार से प्रभावित है सो, वह भी सतीश के साथ है । "अलग-अलग वैतरणी" में सुरजू सिंह की एक पार्टी है । "उनकी पार्टी में एक से एक नंगे लुच्चे भर गए हैं ।"[13] सिरिया, छबिलवा, हरिया जैसे लड़के उनकी पार्टी के सदस्य हैं । सुरजू सिंह इनके गलत कामों के लिए शह देते हैं । सुरजू सिंह से लेकर ये सभी लड़के यौन कुंठा के शिकार हैं । औरतों से छेड़छाड़ करना इनका रोज का धंधा है । इसलिए ये सभी एक गुट बनाकर रहते हैं । जवाहिरलाल जैसा गंदा, लालची, व्यभिचारी और चुगुलखोर स्कूल मास्टर भी इसी गुट से जुड़ा है । निचली जातियों के नेता सुखदेव राम हैं । कांग्रेसी हैं । "पूरी जादव पाल्टी, गोंड, कुहार, दुसाध, कोइरी, काछी सब उसको वोट देंगे ।"[14] यह जाति पर आधारित गुटबंदी है । परन्तु इसका एक आधार स्वार्थपरकता भी है । मसलन्, "अलग-अलग वैतरणी" में जैपाल सिंह जब जीवित थे तो हरखू सरदार वहीं दरबार लगाते, उनकी जी-हुजूरी करते, उनके गुण गाते फिरते थे । उनके मरने के बाद हरखू सरदार का स्वार्थ जब वहाँ नहीं सध पाया तो दूसरे आश्रय सुरजू सिंह की ओर लुढ़क गए । "सुरजू सिंह के बइठके पर उनका आना-जाना तभी से शुरू हुआ था, जब उनकी आशा के खिलाफ कनिया तक ने थानेदार की आवभगत करने से इनकार कर दिया था ।"[15] शायद इसीलिए बुझारथ के घायल होने की खबर पाकर, "हरखू सरदार अचानक बहुत खुश हो गए थे ।"[16] ज़मींदार परिवार से उनका नाता टूट चुका था और हरखू विरोधी दल की सहानुभूति बटोरने के प्रयास में लगे रहते थे । इसलिए उनका

---

13. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 35
14. - वही - 36
15. - वही - 416
16. - वही - 416

खुश हो जाना स्वाभाविक है । "जल टूटता हुआ" में धनी किसानों और ज़मींदारों का एक गुट है जिसमें शामिल हैं -- महीप सिंह, दीनदयाल, दौलत राय, दलसिंगार निकम्मा और चुगुलखोर है । वह दिन-रात दीन-दयाल की जी-हुजूरी में लगा रहता है । दूसरा दल है, सतीश, कुंजू, रघु-नाथ, बलई का । यह मध्यवर्गीय एवं गरीब किसानों का गुट है । राम-कुमार भी इसी में शामिल हो जाता है । अकेले रह कर वह किससे लड़ेगा ? यह सोचकर वह सतीश का साथ पकड़ लेता है । दलित एवं खेतिहर मजदूरों का वर्ग जगपतिया को अपना नेता मानता है । इनमें ऊँची जातियों के धनी एवं शोषक वर्ग के प्रति घृणा का भाव दिखाई देता है ।

"जल टूटता हुआ" में ज़मींदार टूटता है । उसे निम्न जातियों की घृणा एवं प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है । "अल-अलग वैतरणी" में दलित चेतना का उग्र विकास देखने को मिलता है । ठाकुरों और चमारों के बीच जमकर मार-पीट होती है, जिसमें एक वृद्ध दलित की हत्या कर दी जाती है । इससे लगता है कि दलितों में आत्म सम्मान के प्रति चेतना और अन्याय तथा शोषण के विरूद्ध उग्र प्रतिरोध की भावना का विकास हुआ है।

आपस में गुटबंदी के कारण ऊँची जातियों की ताकत तो कम हुई पर जोड़-तोड़ और अवसरवाद की नीति ने उनके अस्तित्व को बनाए रखा ।

"अलग-अलग वैतरणी" में जग्गन मिसिर एक मध्यवर्गीय किसान है । वे गरीबों के पक्षधर हैं, पर हिंसा में विश्वास नहीं करते । ठाकुरों-चमारों

का संघर्ष रोकने का प्रयास करते हैं । वे चमारों के फैसले को सत्य भगत की हत्या का कारण बताते हैं । "ठाकुरों ने सोचा कि एक भाई को बेइज्जत किया जा रहा है । बस दोनों ओर से गोलबंदी हुई । दोनों दल भिड़ गए । बीच में मारा गया बेचारा सत्य, जो चमारों के फैसले के बिल्कुल खिलाफ था ।"[17] जग्गन स्वयं इसके विरोध में खड़े हैं । वे चमारों के फैसला को विवेकहीन और अव्यवहारिक मानते हैं । पर कुछ भी हो, दलितों और अन्य निचली जातियों में धनी एवं ऊँची जाति के प्रति घृणा की भावना का विकास हुआ है । दोनों वर्गों में कई बार संघर्ष हुआ है, दलितों में सामूहिक भावना का विकास हुआ है और जातिवादी-अवसरवादी राजनीति का गाँवों में प्रवेश हुआ है, इस ऐतिहासिक सत्य से कैसे इन्कार किया जा सकता है ।

---

17. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 445

का संघर्ष रोकने का प्रयास करते हैं । वे चमारों के फैसले को सत्य भगत की हत्या का कारण बताते हैं । "ठाकुरों ने सोचा कि एक भाई को बेइज्जत किया जा रहा है । बस दोनों ओर से गोलबंदी हुई । दोनों दल भिड़ गए । बीच में मारा गया बेचारा सत्य, जो चमारों के फैसले के बिल्कुल खिलाफ था ।"[17] जग्गन स्वयं इसके विरोध में खड़े हैं । वे चमारों के फैसला को विवेकहीन और अव्यवहारिक मानते हैं । पर कुछ भी हो, दलितों और अन्य निचली जातियों में धनी एवं ऊँची जाति के प्रति घृणा की भावना का विकास हुआ है । दोनों वर्गों में कई बार संघर्ष हुआ है, दलितों में सामूहिक भावना का विकास हुआ है और जातिवादी-अवसरवादी राजनीति का गाँवों में प्रवेश हुआ है, इस ऐतिहासिक सत्य से कैसे इन्कार किया जा सकता है ।

---

17. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 445

2. साम्प्रदायिकता

आज़ादी के बाद हिन्दी में साम्प्रदायिक समस्या को लेकर अनेक उपन्यास लिखे गए । साम्प्रदायिकता को सीधे-सीधे धर्म का राजनीतिक दुरुपयोग समझना चाहिए । साम्प्रदायिक से सबसे ज्यादा प्रभावित है शिक्षित मध्यवर्ग, जो प्रायः शहरों में रहता है । पर गाँव इससे बिल्कुल अछूते नहीं हैं । "जल टूटता हुआ" में पूर्व ज़मींदार महीप सिंह जो आज़ादी के बाद कांग्रेसी बन जाते हैं, आदेश देते हैं कि अलगर को खत्म कर दिया जाए । इस रहस्य का खुलासा करता है एक अपराधी, जो सुग्गन मास्टर से कहता है -- "आजकल और क्या काम है मास्टर, आजकल तो इन साँपों को और साँपों के बच्चों को कुचलकर रख देना है । तुम अपनी खैर मनाओ । यदि तुम उसे मार नहीं सके तो कोई और मारेगा । हम लोग चाहते रहे कि यह पुण्य तुम्हीं लूटो । तुम्हें नहीं मालूम मास्टर, यह बाबू महीप सिंह का हुक्म है ।"[18] इस तरह की कायरतापूर्ण कारवाई के पीछे लोगों को उत्तेजित कर, उनका भावनात्मक शोषण करने का उद्देश्य छिपा होता है । धर्म के प्रति स्वाभाविक लगाव होने के कारण लोगों को भड़काना ज्यादा आसान होता है, राजनीतिज्ञ इस तथ्य को अच्छी तरह जानते हैं और समय-समय पर वे इसका उपयोग करते हैं अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए ।

साम्प्रदायिक चेतना के विकास में अफवाहों का विशेष योगदान होता है । महीप सिंह का भेजा हुआ बदमाश मास्टर सुग्गन से कहता है

---

18. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 14

कि "शेखपुर के सैयद ने इसी प्रकार अपने लड़के के हिन्दू दोस्त को खत्म कर दिया । गोरखपुर से तमाम खबरें आई हैं कि मुसलमानों ने दोस्ती के नाम को बदनाम किया है । अपने घरों में छिपे हुए हिन्दू दोस्तों को पकड़वा दिया है । उनकी आँखों के सामने ही दोस्तों की लाशें तड़पकर बिछ गई ।"[19] यह सूचना तथ्यपरक है, इसका कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिलता । यह अफवाह हो सकती है । दंगों के दौरान अफवाहें ज्यादा विनाशकारी साबित होती हैं । क्योंकि वह घृणा और पूर्वग्रह पर आधारित होती हैं । "जल टूटता हुआ" में कांग्रेसियों के ढोंग और क्रूरता को अवश्य उभारा गया है । इस बारे में डा. कुँवर पाल सिंह की टिप्पणी प्रासंगिक है कि, "कांग्रेसी राजनीति के अन्दर ही साम्प्रदायिकता जातिवाद और भ्रष्टाचार की राजनीति निर्बाध रूप से फलती-फूलती रही है ।"[20] राष्ट्रीय आंदोलन के दिनों से ही कांग्रेस में दक्षिण-पंथियों की एक धारा चली आ रही है । मुस्लिम नेताओं का कहना था कि इनके बयानों या क्रिया-कलापों से उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचती थी । इस दौरान अनेक उत्तेजक खबरों ने आग में घी का काम किया । "आज यह ट्रेन लूट ली गई । आज हिन्दुस्तान-पाकिस्तान की सरहद पर इतने गाँव जला दिए गए । इतनी बहू-बेटियों को बेइज्जत कर पेड़ की डालों पर उल्टा टाँग दिया गया । बापों के - माताओं के सामने इतने पुत्रों को कत्ल कर दिया गया ।"[21] देश-विभाजन के पश्चात् भीषण नरसंहार की घटनाएँ व्यापक पैमाने पर हुई, यह ऐतिहासिक सत्य है । ऐसे समय में ऐसी खबरों ने साम्प्रदायिक समरसता के ताने-बाने को बिल्कुल छिन्न-भिन्न कर दिया । कुछ लोग खबरें लाया करते थे कि गोरखपुर से मुसलमान आए

---

19. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 14
20. दस्तावेज-53, सं. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, पृ. 11
21. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 12

हैं, जो बन्दूकों व तलवारों से सुसज्जित हैं । उधर मुसलमानों में अफवाह उड़ती कि आज हिंदू लोग उनके गाँवों पर हमला करने वाले हैं ।"[22] इन खबरों के सूत्रधार वे कट्टरपंथी ताकतें होती हैं जो हमेशा दो सम्प्रदायों के बीच घृणा-कटुता और शत्रुता बनाए रखने की कोशिश करती हैं, ताकि वे अपनी राजनीति की रोटी सेंक सकें । हिन्दू कट्टरपंथी प्रचार कर रहे थे, "मुस्लिम लोगों का ऐलान है कि एक हिन्दू मारने से मुसलमान को हजार बहिश्तों का फल मिलता है । कुरान शरीफ का भी यही हुक्म है । इसलिए मुसलमान निरीह हिन्दुओं को बेरहमी से कत्ल कर रहे हैं ।"[23] रामदरश मिश्र ने मुसलमानों की कट्टरता और रूढ़िवादिता का ज़िक्र करते हुए लिखा है कि, "अब यह भी धर्म है कि जिस रास्ते से ताजिया जाता है उसी रास्ते जाएगा । लीकों के प्रति इतना मोह । भरी फसल को रौंद कर ही ताजिया ले जाएँगे, फले हुए पेड़ की डाल काटकर ही ताजिया ले जाएँगे, जरा हट नहीं सकते, जरा झुक नहीं सकते ।"[24] ऐसे विचार आमतौर से हिन्दुओं में पाए जाते हैं । मिश्र जी ने मुसलमानों की कट्टरता और बर्बरता का वर्णन करने के साथ हिन्दू कट्टरताका वीभत्स रूप दिखाने के लिए कांग्रेसी महीप सिंह को चित्रित किया है । पर उस समय हिन्दू कट्टरपंथियों का एक मजबूत संगठन अस्तित्व में था, जिसने साम्प्रदायिक कत्लो-गारत में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया था । "अलग-अलग वैतरणी" में साम्प्रदायिकता का विशेष वर्णन नहीं आता है । खलील मियाँ के माध्यम से कुछ संकेत मिलते हैं । खलील मियाँ एक राष्ट्रवादी, देशप्रेमी इन्सान हैं । कहते हैं कि, "एक दिन सुना कि जमनिए के कई मुसलमानों के साथ साला

---

22. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 12
23. - वही - 12
24. - वही - 15

पाकिस्तान चला गया । उसका तसूर ले गया होगा । जो हो मैं उसी का कसूर कहूँगा कि उस साले का खून नहीं रहा पानी हो गया ।"[25] खलील मियाँ यह सब अपने बेटे के बारे में कहते हैं । उनका बेटा बदरूल देश-विभाजन के बाद पाकिस्तान चला जाता है और वहाँ जाकर उन्हें भी बुलाता है, पर खलील मियाँ उसके आग्रह को ठुकरा कर यहीं रहना पसंद करते हैं -- "तुम्हारे पाकिस्तान पर मैं लानत भेजता हूँ । साले तू दोगला है । काफिरों के बीच अपना दर्जनों पुश्त गल गया, आज तक ऊपर खुदा गवाह है बेटे, मैंने कभी हिन्दू और मुसलमान में कोई फर्क नहीं किया ।"[26] ऐसे धर्मनिरपेक्ष और अमन पसंद मुसलमान भी हैं इस देश में । मुसलमानों के प्रति हिन्दुओं के मन में घृणा और संदेह के कारणों की ओर इशारा करते हुए खलील मियाँ कहते हैं कि, "मुसलमान सब बाहर से नहीं आए हैं । लेकिन मुसलमान धर्म तो बाहर से आया ही और जो उसको लेकर आए वे हमलावार तो थे ही । कोई हमलावर किसी का बर्तन छीने, उस पर कब्जा करे, उसकी लड़कियों को जबर्दस्ती छीने, तो क्या वह कौम उसे देवता मानकर उसका पैर चूमेगी ।"[27] यह एक ऐतिहासिक सच्चाई है । दोनों सम्प्रदायों के बीच व्याप्त घृणा, संदेह एवं तनाव को प्रेम और विश्वास से ही कम किया जा सकता है और इसमें दोनों ओर से प्रयास की जरूरत है । पर कट्टरपंथियों और राजनीतिज्ञों ने दोनों सम्प्रदायों के बीच तनाव और घृणा को और अधिक फैलाया, उसका राजनीतिक इस्तेमाल शुरू किया जिसने भीषण साम्प्रदायिक समस्या का रूप ले लिया । "अलग-अलग वैतरणी" में जगेसर सिपाही मुसलमानों के प्रति घृणा व्यक्त करता है, "उस दिन शोभाराम जी बता रहे थे कि जाटों ने मुसलमानिनों को पकड़-पकड़कर

---

25. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 192
26. - वही - 192
27. "-वही - 193

गढ़ मुक्तेश्वर में चकरी पर बैठा-बैठाकर ब्याह कर लिया । काहे नाहीं कोई हिन्दू बोल दिया उहाँ मुसलमानों के पक्ष में । तब तो सब मियाँ लोग चिल्ला रहे थे कि पाकिस्तान लेंगे, पाकिस्तान लेंगे । अब तो सालों ने ले लिया न पाकिस्तान ।"[28] जगेसर की बातों से स्पष्ट है कि हिन्दुओं की तरफ से मुसलमानों के खिलाफ अत्याचार हुआ । उपन्यास में एक सिख सरदार मुसलमानों से इसलिए नफरत करता है कि विभाजन के दौरान उसका परिवार उससे बिछुड गया । खुदाबख्श से नफरत करने लगता है, "वह उसके नाम पर थूक देता था, गोया पंजाब के दंगों के लिए खुदाबख्श ही ज़िम्मेदार है ।"[29] पंजाब के साम्प्रदायिक दंगे आधुनिक भारत की सबसे भीषण त्रासदी थी ।

इस तरह हम कह सकते हैं कि साम्प्रदायिकता का जन्म राष्ट्रीय स्वातंत्र्य आंदोलन के गर्भ से हुआ । धर्म का राजनीतिक इस्तेमाल शुरू हुआ । इस साम्प्रदायिकता का सबसे ज्यादा शिकार महिलाएँ, बच्चे और गरीब तबके के लोग ही होते हैं । यह साम्प्रदायिकता कट्टरपंथियों और राज-नेताओं की मिली-जुली साजिश का परिणाम है ।

---

28. अलग-अलग वैतरणी;- शिवप्रसाद सिंह, पृ. 238
29. - वही - 243

3. पारम्परिक मूल्य, विश्वास, प्रथाएँ और संस्कार

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा-साहित्य में लोक-जीवन से सम्पृक्त अनेक प्रसंगों का चित्रण हुआ है । भूत-प्रेत, जादू-टोना, ओझा-सोखा आदि का चित्रण ग्राम-जीवन पर आधारित उपन्यासों में मिलता है । "अलग-अलग वैतरणी" में करैता के ज़मींदार परिवार द्वारा मंदिर की स्थापना लोगों की धार्मिक आस्था की ओर संकेत करती है । "बाबू जैपाल सिंह के पिता के ज़माने में मंदिर में नया कलश चढ़ा । भगवती की दोनों आँखें सोने की बनीं । आरती-पूजा का सारा सामान नया किया गया क्योंकि उसी साल करैता के ज़मींदार की सौभाग्यवती पत्नी की पवित्र कोख से जैपाल का जन्म हुआ ।"[30] लोग अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए मंदिरों एवं दरगाहों पर पूजा-इबादत करते हैं । ज़मींदारी प्रथा में प्राय: बड़े-बड़े ज़मींदार मंदिरों-बावलियों का निर्माण कराते थे । आज तो उद्योगपति लोग यह काम करने लगे हैं । भारत के कई बड़े शहरों में बिड़ला के बनवाए मंदिर पाए जाते हैं ।

लोक-विश्वासों का मानव-मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है और इन्हें आसानी से नहीं मिटाया जा सकता । "अलग-अलग वैतरणी" में हलपर्वरी के आयोजन का एक प्रसंग आया है । बारिश की उम्मीद लेकर, "गाँव की दो सबसे लम्बी औरतें छाँट कर हल में जोती जाती हैं । यह हल एक घरी तक नथ्ता है । हलवाहा भी औरत और बैल भी औरतें ही । नारी पृथ्वी

---

30. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 10

माता की बेटी है । सीता है । उ हल में जोती जाय । हाय, हाय, ई तकलीफ देखकर पृथ्वी माता की आँखें काहे नाहीं आँसुओं से भर जाएँगी।"[31] लोगों में देवी-देवताओं की दया एवं कृपा पर पूरा विश्वास है । पर इससे ग्रामीणों की लाचारी और बेचैनी को भी समझा जा सकता है । तब गाँवों में बिजली पानी की व्यवस्था न थी । खेती-बारी के लिए बारिश ही एकमात्र सहारा होती थी । ऐसे में अपनी जीविका के प्रति गाँव वालों की बेचैनी स्वाभाविक है और अशिक्षा, गरीबी एवं आधुनिक चेतना के अभाव में इस तरह के विश्वासों का लोगों के दिमाग में पलना भी अस्वाभाविक नहीं है । लेकिन आज़ादी के बाद मूलभूत सुविधाओं के विकास के साथ-साथ ये विश्वास भुलाए जाने लगे हैं । इसी प्रकार विजयदशमी के दिन नीलकंठ देखना शुभ माना जाता है । नीलकंठ शिव का प्रतीक है और शिव ने जगत के कल्याणार्थ समुद्र मंथन से प्राप्त विष का पान कर लिया था । लोगों का यह भी मानना है कि भूआखाँ का जिन्न सुब्बा नट पर सवारी करता है और इसीलिए कुश्ती में कोई उसे पछाड़ नहीं पाता । "लोग कहते थे कि सुब्बा के बदन में भूआखाँ के अंधे कूएँ के जिन्न का वास है । जब वह लड़ता है तो जिन्न की साँसों की गरमी से हवा सनसनाने लगती है । हजारों भूतनियाँ-डाकिनियाँ उसके पैरों की धमक पर थिरकने लगती हैं । सुब्बा नट अखाड़े का दानव था । इसलिए उससे हाथ मिलाने का साहस किसी ने कभी न किया ।"[32] पर दैपाल सिंह ने जब सुब्बा को पछाड़ दिया तो लोगों का विश्वास चकनाचूर हो गया । "जल टूटता हुआ" में सतीश की बीमारी का कारण उस पर जादू का असर माना जाता है । इसे दूर करने के लिए पड़ोही सोखा पचरा गाते हैं और कहते हैं, "हत्त राँड बंगालिन, लड़के को दबोच कर हँस रही है

---

31. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 19

32. - वही - 25

बेशरम कहीं की । मैं अभी तेरा हँसना निकालता हूँ ।"[33] यह धारणा गलत है । लोगों का बंगालिनों के जाल में फँसने के पीछे सच्चाई कुछ और है । गरीबी से त्रस्त होकर गरीब किसान और मजदूर नौकरी की तलाश में बंगाल के विभिन्न शहरों में, खासतौर पर कलकत्ता जाते थे । मिलों-कारखानों में इनसे काम ज्यादा, तनखाह कम दी जाती थी । अकेले गंदी बस्तियों में रहते थे । सालों घर नहीं जाते थे । अनेक मानसिक दबावों के कारण नशे की लत पड़ जाती थी । कभी-कभी ये वेश्यालयों में भी जाते थे और इस तरह इनका जीवन और सीमित कमाई बर्बाद हो जाती थी । शरीर से बीमार और पैसे कंगाल हो जाते थे । गाँव में रहने वाले लोग इस तथ्य को बंगालिनों का जादू-टोना मानते थे । पर अब इस तरह के विश्वासों में बहुत कमी आई है । गाँव में साँप काटने पर मंत्र द्वारा इलाज किया जाता था । बंशी की छोटी-सी बच्ची को साँप काट लेता है तो लोग कहते हैं, "भाई साँप झाड़ने वाले को बुलाओ । अपने गाँव में तो बनवारी बाबा हैं किंतु इनसे जाविल झाड़ने वाला भाट पार का सिवधनिया चमार है । वह चमरिया पूजे हुए है, वह चमरिया उसके मंत्र में पैठकर सारा जहर चूस लेता है ।"[34] लोगों का यह भी मानना है कि मंत्र जानने वाले का नैतिक दायित्व है कि किसी को साँप काटने की बात सुनकर फौरन चला आए । इसमें शत्रु-मित्र का भेद नहीं रखा जाता । लोग तो यह भी मानते हैं कि कभी-कभी भूत-प्रेत भी साँप का रूप धारण कर आदमी को डस लेते हैं । कुछ लोग जातीय इष्ट-देवता की पूजा करते हैं । मसलन "चमार चमरिया पूजता है, ब्राह्मण बरम पूजता है, क्षत्री डीह पूजता है और मुसलमान जिन्न ।"[35] ओझा-सोखा इन्हीं भूत-प्रेतों के बल पर अपना करिश्मा

---

33. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 70
34. - वही - 25
35. - वही - 337

दिखाते हैं । लोगों का ऐसा मानना है कि अकाल मृत्यु पाने वाला चमार चमरिया, ब्राह्मण बरम, क्षत्रीय डीह और मुसलमान जिन्न बन जाता है और ओझा-सोखा इन प्रेतों को सिद्ध कर मंत्र-शक्ति प्राप्त करते हैं । गाँव के पिछड़े एवं अशिक्षित लोग प्रायः इन पर विश्वास करते हैं ।

गाँव में नैतिकता का दबाव ज्यादा होता है । घर वालों के सामने पत्नी से बोलने तक में संकोच करते हैं लोग । "जल टूटता हुआ" में सतीश सोचता है, "उन दिनों को जब पत्नी से मिल पाना कितना कठिन था, दस-पन्द्रह दिन में किसी एक रात पुरुष पत्नी के पास गया, इस ढंग से पाँव दबाकर कि कोई जाग न जाए, कोई आहट न पा जाए, कहीं किवाड़ न भड़क जाए ।"[36] लोग बेशर्म न समझ बैठें, यह डर बना रहता था । संस्कारों और वातावरण का इतना जबर्दस्त आग्रह था । हालांकि अब ये बातें लगभग खत्म हो गई हैं । "अलग-अलग वैतरणी" के जैपाल सिंह मकर संक्रांति के दिन दान-पुण्य करते थें । "गाँव के जितने लोग नदी में नहाकर निकलते, वे उस जगह पर जरूर पहुँचते । ज़मींदार खुद अपने हाथ से लोगों को चिवड़े, मिठाई और तिलौरे बाँटते ।"[37] हिन्दू धर्मशास्त्रों में अन्नदान को विशेष महत्व दिया गया है । ऐसा माना जाता है कि मकर संक्रांति के दिन अन्न दान करने से बहुत पुण्य मिलता है । पुराने लोग इन मान्यताओं का बहुत ख्याल रखते थे और जैपाल सिंह तो ज़मींदार ही थे । पर अब प्रथा समाप्त प्राय है । पहले जैसा उत्साह नहीं है । मुंशी जवाहिरलाल के माध्यम से व्यक्ति की अकर्मण्यता, गैर जिम्मेदारी एवं कुत्सित संस्कारों को दिखाया गया है । अश्लील हरकतें और भद्देमजाक उसके व्यक्तित्व को और अधिक लद्धड़ एवं फूहड़ बना देते हैं । "मुंशी जी

---

36. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 68
37. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 328

खा-पीकर बगल वाली कोठरी में अपनी चारपाई पर अंडस-मंडस करते हैं । उनका रमचेलवा खैनी मलकर उनके सामने पेश करता है । वे एक ही साँस में उसे असीसते हैं, साथ ही फुसुर-फुसुर बात करने वाले किसी छोकरे को सम्बोधित करके उसकी माँ के साथ अपने सम्बन्धों का नया पुराण भी बाँचते हैं ।"[38] ऐसे अध्यापकों के रहते शिक्षा का स्वस्थ वातावरण तो नहीं बन सकता । झब्बू लाल उपाध्याय जातिवादी मानसिकता से इतने ग्रस्त हैं कि मरीजों का आना भी बर्दाश्त नहीं कर पाते । "चमार-सियार, डोम-दुसाध, मियाँ-मुकुरी - सभी दालान में हेल आते हैं । सारा भरभंड करके रख दिया । एक मिनट पूजा-पाठ के लिए भी शांति नहीं मिलती ।"[39] खुद निहायत गंदा रहने वाले हरखू सरदार निचली जाति के बच्चों को देख कर भड़क उठते हैं, "अरे सरवा तेलिया भाग बे निकल । सब नान्ह जात के छोरे साले बरतन-बासन छू-छाकर भरभंड कर देंगे ।"[40] ये लोग अपने श्रेष्ठता बोध के आग्रह से मुक्त नहीं हो पाते । शायद इसीलिए निम्न जाति का तिरस्कार एवं अपमान करने में इन्हें कोई हिचक नहीं होती ।

गाँवों में ऐसी मान्यता है कि कोई आदमी शिवजी की पिंडी हाथ में लेकर यदि झूठ बोलेगा तो उसका अहित अवश्यंभावी है । "अलग-अलग वैतरणी" में पंचायत में खलील मियाँ देवी चौधुरी को हाथ में शिवजी की पिंडी लेकर पोते की कसम खाने को कहते हैं । देवी चौधुरी कसम खा लेते हैं पर उन्हें कुछ नहीं होता । कहने का मतलब यह है कि आजकल लोग स्वार्थ के लिए उन पुरानी मान्यताओं को तोड़ देते हैं । स्वार्थ के रास्ते में धर्म या समाज का भय खड़ा नहीं रह पाता ।

---

38. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 325
39. - वही - 306
40. - वही - 274

"जल टूटता हुआ" के पेंकू तिवारी बुढ़ापे में भागवत सुनकर अपने कुकर्मों से मुक्त हो जाना चाहते हैं और उधर पंडित जी कथा बाँचकर पेंकू तिवारी के ऋण से उऋण हो जाना चाहते हैं । "पेंकू तिवारी की माँ ने दस बरस पहले पाँच रुपया उधार दिया था । वे मर गईं वह रुपया बढ़ते-बढ़ते पच्चीस हो गया । मेरी औकात कहाँ कि मैं रुपये जुटाऊँ मैने उनसे कहा कि बड़ा-बड़ा कुकरम किया है, भागवत सुन लीजिए, मेरा भी उद्धार हो जाएगा और आपका भी ।"[41] पर पेंकू तिवारी के गले कथा उतरती नहीं । उन्हें दूसरे कामों की चिंता लगी रहती है । सो धोती खोलकर रख देते हैं । धोती कथा सुनती है और पुण्य मिलता है पेंकू तिवारी को । कितना हास्यास्पद लगता है यह । पर धीरे-धीरे खत्म हो रहा है यह सब.

गाँव से शहर गए लोगों में ग्रामीण संस्कार इतना प्रबल होता है कि छोटे-छोटे तीज-त्यौहारों पर गाँव की याद उन्हें बहुत सताती है । "जल टूटता हुआ" का सतीश कलकत्ता में रहते हुए गाँव की याद में खोया रहता है । "उसे अपने गाँव की जमीन पुकारती रहती, छोटे-छोटे त्यौहारों से भी उसका इतना सगा परिचय हो गया था कि गाँव नहीं पहुँच पाने पर वे छाती में भर-भर आते । हर छोटे-बड़े त्यौहार के दिन उसे एक विशेष गंध से गमकता अपना गाँव याद आता, माँ के हाथों का विशेष स्वाद लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की खाने की चीजें उसके मुँह में भर आतीं, त्यौहारों के क्रिया कलापों से सम्बन्धित पेड़े-पौधे, खेती-बारी, घर-द्वार मेले हटिए - सभी उसके तन-मन में महक उठते और घर न पहुँच पाने पर मन उदास हो जाता ।"[42] जबकि उसका भाई चन्द्रकांत गाँव के प्रति मोहग्रस्त नहीं है । "अलग-अलग वैतरणी" का विपिन भी गाँव से उबकर शहर चला जाता है । इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण वातावरण में पला-बढ़ा व्यक्ति शहरी

---

41. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 223
42. - वही - 62

जीवन को पूरी तरह पचा नहीं पाता और प्रायः उबकर लौट आता है । पर शिक्षित युवक शहर में ही रहना ज्यादा पसंद करता है । उस पर पुराने मूल्यों, विश्वासों और संस्कारों का उतना ज्यादा प्रभाव नहीं होता । इसलिए वह आसानी से भावुकता का शिकार नहीं हो पाता ।

"जल टूटता हुआ" में जादू-टोना, तंत्र-मंत्र के बारे में ज्यादा वर्णन मिलता है । इसका कारण उस क्षेत्र-विशेष का पिछड़ापन है । वह कछार का इलाका शिक्षा, स्वास्थ्य एवं परिवहन-सुविधा के अभाव में आधुनिक चेतना से कटा है । ऐसी स्थिति में प्राचीन मूल्यों, विश्वासों एवं संस्कारों के प्रति मोह होना स्वाभाविक लगता है । पर "अलग-अलग वैतरणी" में इसके मुकाबले आधुनिक चेतना का ज्यादा समावेश परिलक्षित होता है । क्योंकि यह इलाका कछार की अपेक्षा ज्यादा खुशहाल और आधुनिक चेतना के प्रभाव में है । पर "अलग-अलग वैतरणी" परम्परा, नैतिकता और अन्ध विश्वास से मुक्त नहीं है । तेजी से बदलते समाज में ये विश्वास, प्रथाएँ और संस्कार कहीं ज्यादा तो कहीं कम दिखाई देते ही हैं ।

4. परम्परा और आधुनिकाता की टकराहट : बदलती हुई चेतना और मानवीय सम्बन्ध

"मैं इन बाभनों का पानी भरने के लिए नहीं हूँ, मैं पढ़-लिख रहा हूँ क्या कहारी करने के लिए, चौका-बरतन करने के लिए, डोली ढोने के लिए ।"[43] निश्चय ही आधुनिक चेतना सम्पन्न युवक है यह मुरतिया, जाति से कहार है तो क्या हुआ । वह उन रीतियों, परम्पराओं और पेशेवर कर्म को छोड़ देना चाहता है जिससे उसे कहार बन कर रह जाना पड़ता । गुलामी के प्रतीकों को त्याग देना चाहता है । मुरतिया अपनी बहन बदमी की बेइज्जती होते देखता है जो बिल्कुल अशिक्षित है और अपने पेशे से जुड़ी हुई है । मुरतिया प्रेम विवाह करना चाहता है । "मैं बियाह नहीं करूँगा, मैं तो परेम बियाह करूँगा ।"[44] उसके मन में एक पढ़ी-लिखी सुन्दर पत्नी की इच्छा पल रही है । बिरजू की पत्नी अकेलेपन की यातना से त्रस्त होकर कुंजू को चाहने लगती है बल्कि यह कहें कि वह कुंजू से अपनी यौन आवश्यकता की पूर्ति का आग्रह करती है जिसे कुंजू की नैतिकता स्वीकार नहीं कर पाती, "होश करो बहू, हम कौन हैं, तुम तो बेहोश हो ही गई, मैं भी बेहोश हो गया । हम यह क्या करने जा रहे हैं । हमें नरक में भी जगह नहीं मिलेगी । तुम मेरी भयहु हो, तुम्हें छूना मेरे लिए अपराध है ।"[45] किंतु बिरजू की पत्नी का अल्हड़पन उसकी वासना को संयम नहीं दे पाता । "कुछ नहीं हुआ अभी, अभी तो होना था और यही होना था । तुम मेरे तन-मन में आग लगा कर यों मत भागो तिवारी, छोड़ो भाई-भयहु का यह लफड़ा । मेरे होकर मुझे अपना लो । तिवारी बाँसुरी में दरद है, उसी ने मुझे घायल किया है, मेरे भीतर आग लगी है, उसे बुझाओ तिवारी, लो यह सारा तन तुम्हारा

---

43. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 86
44. - वही - 90
45. - वही - 113

TH-5898

है, इसे निचोड़ कर पी लो तिवारी ।"[46] एक तरफ कुंजू की नैतिकता है दूसरी तरफ बिरजू-बहू की वासना । यहाँ दोनों के द्वन्द्व का मार्मिक चित्रण किया गया है । यही कुंजू अपने प्यार में अद्भुत साहस का परिचय देता है । वह बदमी कहाइन से प्रेम करता है और अंततः सारे विरोध और घृणा के बावजूद उस विजातीय प्रेमिका को अपना लेता है । "एक बाभन एक कहाइन को प्यार करता है, दुनिया को अच्छा नहीं लगेगा, मत लगे ।"[47] पर वह तो उसे प्यार करेगा ही । यह कुंजू का साहस है जो रूढ़ियों के प्रति विद्रोह करता है । "अलग-अलग वैतरणी" में गाँव की प्रौढ़ महिलाएँ बंशी-बहू के साज-शृंगार एवं रहन-सहन को देखकर टीका-टिप्पणी करने से बाज नहीं आतीं । "बेस्सा है इतना सिंगार-पटार तो बेस्सा ही करती है ।"[48] पुराने खयालात की औरतें वंशी-बहू के रहन-सहन को पचा नहीं पातीं । वे उसकी निंदा करती रहती हैं । मालूम होता है कि पुरानी पीढ़ी को नई पीढ़ी की आदतें और रहन-सहन पसन्द नहीं होता और नई पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के आदर्शों एवं दकियानूसी विचारों को यथावत् स्वीकार न कर नएपन की ओर अग्रसर होती है । कभी-कभी एक ही व्यक्ति दोहरे मानदण्ड जीने लगता है । सतीश के साथ यही स्थिति है । वह पुराने आदर्शों के टूटने को समय की जरूरत मानता है । "पुराने आदर्श यदि नहीं रहे तो उनके प्रति मोह व्यक्त करने से तो वापस नहीं आ सकते और बदलते हुए ज़माने को नकारने से तो वह जा नहीं सकते । इसलिए अच्छा तो यही है कि जो स्थिति सामने है उसका सामना किया जाए ।"[49]

---

46. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 113
47. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 114
48. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 156
49. - वही - 203

पर यही सतीश स्त्री-शिक्षा के बारे में पुराने ख्यालों का कायल है । सतीश मानता है कि, "लड़का-लड़का है, लड़की-लड़की है, लड़की का थोड़ा-बहुत पढ़ लेना ही पर्याप्त है ।"[50] सतीश में कहीं पुराने मूल्यों एवं संस्कारों के प्रति मोह है तो कहीं नए जीवन मूल्यों के प्रति आग्रह, वह इन दोनों के द्वन्द्व में निरंतर जूझता रहता है ।

अब गाँव भी औद्योगिक विकास एवं शहरी संस्कृति के प्रभाव से मुक्त नहीं रह गए हैं । मनुष्य की जीवन-शैली में निरंतर बदलाव आया है । अब वह ज्यादा स्वार्थी एवं आत्म-केन्द्रित हो गया है । "जल टूटता हुआ" का रामकुमार सर्वहारा की राजनीति करता है पर उसका व्यवहार उसके सिद्धान्तों के अनुरूप नहीं है । मांस-मदिरा के सेवन एवं निम्न जातियों के साथ खान-पान के कारण गाँव का ब्राह्मण-समुदाय उसे विधर्मी कहता है । उसके विचार पिता से मेल नहीं खाते । दौलत राय को साँप काटने की खबर सुनकर उसके पिता बनवारी बाबा जाने के लिए तुरंत तैयार हो जाते हैं, उनका तर्क है कि, "मंतर जान बचाने के लिए होते हैं, वह चाहे किसी की जान हो, जान लेने के लिए नहीं होते ।"[51] दौलत उनका दुश्मन है फिर भी मंत्र जानने के कारण वहाँ जाना अपना नैतिक कर्तव्य समझते हैं । वे पुरानी पीढ़ी के हैं, उदार हैं । पर नई पीढ़ी का प्रतिनिधि रामकुमार बनवारी बाबा का विरोध करता है । "जान-जान में अंतर होता है । एक जान सबको प्यारी होती है, उसकी रक्षा के लिए सभी लोग अपनी जान कुरबान करते हैं, एक जान ऐसी होती है जिससे सब नफरत करते हैं । ऐसी जान बचाना मंत्र का दुरूपयोग करना है । दौलत की जान ऐसी ही जान है ।"[52] दोनों पीढ़ियों के विचारों में फर्क यह है कि एक पराए दुख को

---

50. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 262
51. - वही - 348
52. - वही - 348

शत्रु-मित्र का भेद मिटाकर अपना समझता है, जबकि दूसरा इस भेद को स्वीकार करता है ।

पुरानी पीढ़ी शादी-विवाह के सम्बन्ध में कुल-मर्यादा, जात-पाँत और धनी-निर्धन का बहुत ख्याल करती थी, अब भी करते हैं । "जल टूटता हुआ के दीनदयाल अपनी ही जाति के उमाकांत पाठक से अपनी बेटी शारदा की शादी के लिए इसलिए तैयार नहीं होते कि पाठक लोग निम्न गोत्र से सम्बन्धित होते हैं । एक दूसरा भी कारण है जिसके सम्बन्ध में वे कहते हैं कि, "उसके गाँव की बेटियाँ हमारे गाँव में आई हैं, हमारे गाँव की बेटी उस गाँव में कैसे जाएगी ।"[53] दीनदयाल में परम्परा के प्रति आसक्ति, श्रेष्ठता का दर्प एवं धनी होने का गर्व परिलक्षित होता है । पर शारदा सिर्फ प्रेम की भाषा जानती है । पाठक दीनदयाल को लक्ष्य करके उसकी विकृतियों को बेनकाब करता है । "यह सही है कि मैं गरीब हूँ, लेकिन मेरी आँखों का पानी नहीं गिरा है, जबकि बहुत से पैसे वालों की गैरत दो-दो पैसे में बिकती रहती है, वे स्वार्थ के लिए कमीने से कमीने आदमी की चापलूसी करते हैं, गरीब से गरीब आदमी की ज़मीन-जायदाद हड़पने में वे नीच से नीच तरीके अपनाते हैं, शरीफ बने रहकर गुंडों से चोरियाँ करवाते हैं, जान मरवाते हैं, खेत लुटवाते-पिटवाते हैं, काम-वासना तृप्त करने के लिए दूसरों का घर उजाड़ देते हैं ।"[54] ये बातें उमाकांत दीनदयाल को लिखे पत्र में कहता है जिसे पढ़कर दीनदयाल तिलमिला कर रह जाते हैं । पाठक में सच कहने का साहस है क्योंकि उसका रास्ता सच्चाई और ईमानदारी का है ।

आजादी के बाद ज़मींदारी उन्मूलन हुआ, जिसका असर ज़मींदार और आसामी के सम्बन्धों पर भी पड़ा । "अलग-अलग वैतरणी" के ज़मींदार

---

53. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 368
54. - वही - 369

जैपाल सिंह इस परिवर्तन को शुरू में स्वीकार नहीं कर पाते । "ऐसी दुनिया में, जहाँ दूसरी हवा चलने लगी हो, जहाँ दूसरी बिरादरी बन गई हो, जहाँ दूसरे रिश्ते जन्म ले रहे हों, बाबू जैपाल सिंह ने कदम न रखने की मन ही मन प्रतिज्ञा कर ली थी ।"[55] पर बाद के दिनों में वे स्वयं को नई परिस्थितियों के अनुरूप बदलने की कोशिश करते हैं । नीच जाति के नेता सुखदेव राम को अपनी चारपाई पर बैठने का आग्रह करते हैं । "आइए, आइए, सुखदेव राम जी । अरे आप वहाँ शीत में काहे खड़े हैं । यहाँ आइए, इधर बैठ जाओ भाई ।"[56] ज़मींदार और निम्न जाति के सम्बन्धों में इस तरह के बदलाव आने लगे । ज़मींदारी खत्म होने के बाद जैपाल सिंह के खानदानी दुश्मन धनी किसान सुरजू सिंह उन्हें ललकारने लगे । "क्या कर लेंगे जैपाल । अब क्या कोई उनके असामी हैं ? दस गुना लगान जमाकर भूमिधर बने हैं । ऊ पुरानी बातें लद गईं कि बिना वजह जब चाहा किसी को पकड़वाया और मुरगा बनाकर लटका दिया । अब तो एक के दो नहीं, चार देने वाले हैं इसी गाँव में ।"[57] ज़मींदारी उन्मूलन के साथ ज़मींदार का रुतबा खत्म हो गया । अंग्रेजों की कृपा से प्राप्त विशेषाधिकार एवं सुविधाएँ भी खत्म हो गईं । ज़मींदार जनता की नजर में आम आदमी बन गया । उधर बड़े एवं मध्य वर्गीय किसानों को विकास का मौका मिल गया । बाद में तो धनी किसानों ने ज़मींदार से टक्कर लेनी शुरू कर दी ।

"अलग-अलग वैतरणी" में झब्बूलाल उपाध्याय बेटा देवनाथ को शहर भेजकर इसलिए नहीं पढ़ाना चाहते कि वह शायद आवारा बन जाए ।

---

55. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 24
56. - वही - 47
57. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 41

एक बार बनारस में उससे मिलकर गाँव आते हैं तो पत्नी से कहते हैं, "हो गया साला आवारा । गया काम से । मैं पहले ही जानता था कि महादशा में जन्मा है । कुलकलंक होगा । वही बात सामने आई ।"[58] झब्बूलाल देवनाथ को विशुद्ध पोंगापंथी बनाना चाहते थे । पर वह बन गया डॉक्टर । शहर में रहते हुए आधुनिक विचारों का उस पर प्रभाव पड़ा, जिसे झब्बूलाल पसंद नहीं करते थे । देवनाथ इन पुरानी पीढ़ी वालों की रूढ़िवादिता के बारे में कहता है कि, "ये लोग हमें इसलिए नहीं पढ़ाते कि लड़का पढ़लिख कर अपने पैरों पर खड़ा होजाएगा । अपनी ज़िन्दगी आप जीने की उसमें शक्ति आ जाएगी, नहीं, वे पढ़ाते इसलिए हैं कि पढ़े लड़कों को भँजाने से ज्यादा पैसा मिलता है ।"[59] पुरानी पीढ़ी को नई पीढ़ी से इसलिए शिकायत रहती है, कि नई पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के मूर्खतापूर्ण शासन को ढोने से इन्कार कर देती है । झब्बूलाल को पैसे की चिंता है तो देवनाथ को पेशे के प्रति नैतिक जिम्मेदारी निभाने की. दोनों के बीच वैचारिक द्वन्द्व का यही कारण है । इसी तरह मुंशी जवाहिरलाल और शशिकांत के बीच चल रहा संघर्ष रूढ़िवादिता और प्रगतिशीलता के द्वन्द्व को उपस्थित करता है । शशिकांत छात्रों की बौद्धिक एवं शारीरिक शिक्षा पर समान बल देता है तो जवाहिर लाल कहते हैं कि, "आपकी राय है कि लड़कों को कबड्डी खिलाया जाए और टाँग-वाँग टूट जाए ।"[60] एक शारीरिक शिक्षा में बच्चों का विकास देखता है, दूसरा विनाश । जवाहिरलाल सामंती मनोवृत्ति का व्यक्ति है जो छात्रों से अपनी सेवा करवाता है और इसे उनके बौद्धिक विकास एवं प्रगति का एकमात्र कारण

---

58. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 467
59. - वही - 468
60. - वही - 134

मानता है । शशिकांत अपना काम स्वयं कर लेता है । इस पर जवाहिर लाल व्यंग्य करता है, "अब तो नए जमाने के कपिल-कणाद खुद बर्तन मलते हैं बाबू साहब, लड़कों की सेवा लेना पाप समझते हैं । ऐसे में भी लड़के खुद मदाई रह जाएँ तो उनके भाग का ही दोष है ।"[61] मानो कपिल-कणाद की सार्थकता इसी में थी कि वे शिष्यों से भरपूर सेवा लेते थे । दरअसल जवाहिरलाल बौद्धिक दिवालियापन और मानसिक व्यभिचार का बुरी तरह शिकार है । वह यथार्थ से मुँह चुराने वाला आदमी है । सरकार ऐसे अध्यापकों के जिम्मे छात्रों के भविष्य को सौंपकर चुप हो जाती है । उसकी चुप्पी छात्रों के भविष्य को अंधकारमय बना देती है । आज गाँवों में शिक्षा की यही स्थिति है ।

ज़मींदारी व्यवस्था में चमारों के चौधुरी ज़मींदार के सामने जाने से वैसे ही घबराते थे जैसे कसाई के सामने बकरा । "अलग-अलग वैतरणी" में बचऊराम चौधुरी जैपाल सिंह के सामने ठाकुरों के अत्याचार की शिकायत करने की हिम्मत ही नहीं जुटा पाते । तब हाथ मलते हुए माफी मागने लगते हैं, "जो कसूर करे उसकी साँसत तो होगी ही । पर मालिक तो वह है सरकार कि साँसत करे और दया भी । चोट करे तो मरहम भी लगाए । पर जाने गलती की । अब सरकार से अर्दास है, उसे माफ किया जाए ।"[62] पर युवा पीढ़ी के दलित इस समर्पण और समझौता-परस्ती से हटकर संघर्ष का रास्ता अख्तियार करते हैं । युवा रामकिशुन कहता है -- "यह बूढ़े हाँ में हाँ मिलाने वाले चापलूस चौधुरियों की बटोर नहीं है । यह आग है, लपट है, इस बार इसमें ठकुराने की सारी हैकड़ी जल कर राख हो जाएगी ।"[63]

---

61. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 355
62. - वही - 423
63. - वही - 427

आज़ादी के बाद दलितों में सामंती व्यवस्था के खिलाफ घोर असंतोष की चेतना का उदय होता है । इसी सिलसिले में दलितों ने पुश्तैनी पेशा भी छोड़ना शुरू कर दिया । बीसू धोबी का लड़का सुरजितवा शहर में लाण्ड्री खोलने का इच्छुक है, पर बीसू को बेटे की इच्छा नहीं भाती । "हमसे कहने लगा कि तुम्हीं साफ करो । हमसे नहीं हुइ है ई सब । इसी गाँव में बीसों पुश्त गल गया अपना अब ई नरक हुइगा । अरे मादरचो, नमक हराम - दाने-दाने को लाले पड़ जाएँगे । जो जन्मभूमि को तोहमत लगाएगा वोका मुँह में अच्छा नसीब नहीं होगा । अब हम कैसे पुरखा-पुरनियों का चलन बंद कर देवें तेरे खातिर ।"[64] बीसू पर परम्परा की जकड़ मजबूत है इसलिए अपने पेशे से प्रेम करता है । सुरजितवा पर बदली हुई सामाजिक चेतना का प्रभाव है इसलिए वह पुश्तैनी पेशे से मुक्त होकर, नए माहौल में सम्मानित धंधा करना चाहता है । विपिन पर तो संस्कारों का इतना भारी दबाव है कि पुष्पा से बेइंतहा प्यार करते हुए भी शादी नहीं कर पाता, मर्यादा की सीमा नहीं तोड़ पाता । जबकि "जल टूटता हुआ" का कुंजू कुल-मर्यादा एवं जाति से ऊपर उठकर बद्मी को अपना लेता है । इससे लगता है कि सामंती वर्ग में परम्परा एवं मर्यादा जैसी नैतिकताओं की जकड़ ज्यादा मजबूत होती है । जातीय श्रेष्ठता का भाव एवं अहंकार प्रबल होता है जबकि गरीबों में जाति या मर्यादा का अनुशासन कुछ ढीला होता है और ये इन बंधनों को ज्यादा आसानी से तोड़ देते हैं ।

"अलग-अलग वैतरणी" में परम्परा और आधुनिकता का संघर्ष दिखाते हुए आधुनिक विचारों को ज्यादा महत्त्व दिया गया है । इसमें

---

64. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 472

नई पीढ़ी को रूढ़ियों से लड़ते एवं विकास प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हुए चित्रित किया गया है । दलित चेतना के उभार को भी महत्व मिला है । उपन्यास में दलितों को सामंती व्यवस्था से निरंतर संघर्ष करते हुए दिखाया गया है । जबकि "जल टूटता हुआ" के दलित अपनी सारी आधुनिक चेतना और संगठनात्मक शक्ति के बावजूद संघर्ष के इस मुकाम पर नहीं पहुँच पाते ।

नई पीढ़ी भी प्रायः पुराने मूल्यों और संस्कारों के प्रभाव से मुक्त नहीं हो पाती । यानी परम्परा के प्रति आग्रह का भाव पूरे उपन्यास पर छाया रहता है ।

5. विकृतियाँ एवं विकास

"एक पखवारे के भीतर ही ग्राम-पंचायत की मीटिंग बुलाई गई । गिरते स्कूल की इमारत को ठीक कराने, सुधरवाने का प्रस्ताव आया ।"[65] ग्राम-पंचायतों के गठन के बाद ग्रामीण जीवन से सम्बन्धित समस्याओं पर पंचायतों में विचार-विमर्श होने लगा । किसी नए निर्माण के लिए पंचायतों के पास धन की कमी थी । पंचायतें धन की कमी के कारण विकास कार्यों को गति प्रदान करने में सफल नहीं हो सकीं । पंचायतों की स्थापना के साथ ही पुराना सामंती ढाँचा ढह गया । "अलग-अलग वैतरणी" में "करैता गाँव की पंचायतें जब मलिकाने के चबूतरे पर नहीं होती । अब इन पंचायतों में ठाकुर जैपाल सिंह मुखिया के आसन पर नहीं बैठते । अब गाँव के लोग राय और फैसले के लिए उनका मुँह नहीं ताकते ।"[66] इस तरह एकाधिकार की समाप्ति, लोकतांत्रिक प्रक्रिया की शुरूआत और सामूहिक भावना का विकास हुआ । पर इन पंचायतों के उदय के साथ ही राजनीतिक दखलंदाजी शुरू हो गई, जिसका पंचायत व्यवस्था पर बहुत प्रतिकूल असर पड़ा । "अलग-अलग वैतरणी" में जैपाल सिंह और सुखदेव राम रिश्वतखोरी और दलाली को बढ़ावा देते हैं । "मामला संगीन है तो आमदनी भी संगीन होगी । एक हजार से कम पर राजी मत होना ।"[67] आजादी के बाद भी भूस्वामियों का पंचायतों और उसके प्रमुखों पर प्रकारांतर से प्रभाव बना रहा । ये लोग आपस में मिलकर पंचायतों से मिलने वाली सुविधाओं का लाभ उठाने लगे ।

---

65. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 56
66. - वही - 59
67. - वही - 59

मास्टर शशिकांत स्कूली जीवन की जड़ता को खत्म करना चाहता है । "लड़कों में आवश्यक उत्साह पैदा करने के लिए पढ़ाई-लिखाई के अलावा भी कुछ कार्यक्रम होने चाहिए ।"[68] पर उसके सहयोगी अध्यापक उसकी पहल का मज़ाक उड़ाते हैं । शशिकांत, देवनाथ से कहता है, "मैं तो किसी तरफ का नहीं रहा । सुबह गया था मिडिल स्कूल पर तनखा लाने । बस से उतरकर आ रहा था कि कुछ लोगों ने मिलकर मुझे बुरी तरह पीटा । आँख में बालू डाल दी और सारे रुपए छीन ले गए ।"[69] ग्रामीण समाज में परिवर्तन और विकास की नई संभावनाएँ तो बनती हैं पर गुटबंदी एवं तुच्छ राजनीति के चलते सारी उम्मीदें धूमिल पड़ जाती हैं । शशिकांत रूढ़ियों एवं जड़ता से लड़ना चाहता है पर हार जाता है । प्रगतिशीलता के विरुद्ध रूढ़िवादी अपनी साजिश में कामयाब हो जाते हैं ।

जो कभी शिक्षितों का मजाक उड़ाते थे, वे ही अपने बच्चों को स्कूल में दाखिल कराकर गर्व का अनुभव करते हैं । "कल्पू का नाम लिखाने जीतन और सुखराम दोनों गए थे । अंग्रेजी शिक्षा के बारे में दोनों भाइयों के मजाक आज भी लोगों को याद हैं । घृणा से करीब-करीब विकृत मुँह बनाकर वे पढ़वैया लोगों की खिल्ली उड़ाया करते । मगर कल्पू का नाम लिखाकर दोनों भाई लौटे तो जैसे दुनिया ही बदल गई ।"[70] आज़ादी के बाद गाँव के लोगों में भी शिक्षा के प्रति रुझान पैदा हुई । स्त्री-शिक्षा के प्रति भी लोगों की धारणा बदली । "जल टूटता हुआ" में दीनदयाल अपनी लड़की शारदा को आगे पढ़ाने के लिए तैयार हो जाते हैं । स्त्रियों को वोट

---

68. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 133
69. - वही - 133
70. - वही - 372

डालने का अधिकार मिला । पंचायत चुनाव में वे उत्साहपूर्वक मताधिकार का प्रयोग करती हैं । "औरतें भी काफी संख्या में वोट डालने आई हैं, आज पहली बार इतनी औरतें बाहर निकली हैं सामाजिक काम के लिए ।"[71] इससे स्त्रियों की सामाजिक हिस्सेदारी को मान्यता मिली । नारी-चेतना का विस्तार होने लगा । पर दहेज की बढ़ती प्रवृत्ति ने महिलाओं और समाज के संवेदनशील तत्वों को झकझोर कर रख दिया । "जल टूटता हुआ" में इस सामाजिक विकृति को रेखांकित करते हुए उपन्यासकार लिखता है कि, "लड़का बी. ए. में पढ़ता है । हालाँकि तीन साल से फेल हो रहा है और कुछ खास बेवँत भी नहीं है लेकिन करकरा स्कूल है इसलिए लोग चार हजार दहेज माँग रहे हैं ।"[72] ऐसी उम्मीद थी कि शिक्षा के प्रसार से सामाजिक-विकृतियाँ कम होंगी, पर यह रोग तो बढ़ता ही गया । "जल टूटता हुआ" में सतीश यही चिंता व्यक्त करता है, "जो लड़का जितना ही पढ़ा-लिखा मिलता है, उसका भाव आज उतना ही तेज है । लगता है आज के समाज में लोगों की शिक्षा और प्रतिष्ठा केवल दहेज लेने तक सीमित है ।"[73]

दहेज का सम्बन्ध समाज में श्रेष्ठता - प्रदर्शन से भी है और पैसे की लालच तो है ही । दलितों की स्थिति यह है कि, "जग्गू हरिजन आज भी गोइठा हैं, पत्तल ढोते हैं, गोबरहे की रोटी खाते हैं और जिनकी औरत आज भी मुरदार हँसिया लिए औरतों को बच्चा पैदा कराती घूमती है, जिसकी नई-नई बहू आज भी मजूरी करने पर ही मजबूर होती है और मालिकों के गाँव में जिनकी अस्मत आज भी उसी तरह खतरे में होती है ।"[74]

---

71. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 144
72. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 212
73. - वही - 22
74. - वही - 222

समाज में अमीरी-गरीबी के बीच भयंकर खाई है । खेतिहर मजदूर और भूस्वामी का अस्तित्व विद्यमान है । दलितों में गरीबी और अशिक्षा का प्रतिशत बहुत ज्यादा है । मजदूरों का शोषण और गरीब महिलाओं का यौन-शोषण अब भी होता है ।

सरकारी संस्थानों में भ्रष्टाचार और अनैतिकता का साम्राज्य है । "सुना है, सरकार जो अच्छी दवाएँ देती है उन्हें डॉक्टर लोग प्राइवेट बनाकर बेच देते हैं ।"[75] सबसे दुखद पहलू यह है कि इस लोकतांत्रिक व्यवस्था में भ्रष्टाचार के खिलाफ कोई कारवाई नहीं होती और जब राजनेता ही भ्रष्ट हों तो इसमें सुधार की कोई संभावना ही नहीं होती । योग्य एवं ईमानदार अफसरों को परेशान किया जाता है । नेता और बड़े-बड़े अधिकारी ऐसे ईमानदार अफसरों के पीछे पड़ जाते हैं । पुलिस स्टेशन रिश्वत और दलाली के अड्डे बन गए हैं । "जल टूटता हुआ" में डिप्टी कलेक्टर घूसखोर थानेदार को फटकारता है, "थानेदारी करते हो कायर कहीं के । यह जनता का युग है तुम जनता के नौकर हो महीप सिंह के समान पिद्दी और टूटे हुए ज़मींदारों के नहीं ।"[76] पर ईमानदार अफसरों के ऊपर तबादलों की तलवार हमेशा लटकती रहती है । दूसरे, ऐसे अफसर बहुत ही कम मिलते हैं, जिन्हें जनता की भलाई की चिंता हो ।

महीप सिंह दबंगई से पंचायत के फैसले का अपमान करते हैं और सरपंच सतीश पर कातिलाना हमला करवा देते हैं । "फैसले के बाद एक दिन सतीश रात के झुटपुटे में जब गाँव के बाहर वाले बगीचे से गुजर रहा था तो किसी ने पेड़ की आड़ से छिपकर गड़ांसे से वार किया ।"[77] पंचायत का

---

75. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 248
76. - वही - 341
77. - वही - 372

फैसला महीप सिंह के खिलाफ था । पंचायत का सरपंच सतीश था । इसलिए महीप सिंह ने बदले की भावना से उस पर हमला करवा दिया । यह प्रवृत्ति गाँवों में बुरी तरह फैल गई है । पंचायतों को लेकर आपसी दुश्मनी बढ़ी है और खून-खराबा एवं हत्याएँ करने में कोई हिचक नहीं रह गई है । स्वार्थ के लिए किसी भी स्तर पर लोग उतर सकते हैं, आज ऐसी स्थिति पैदा हो गई है ।

शिक्षित युवा गाँव में रहना नहीं चाहता । "अलग-अलग वैतरणी" का विपिन गाँव के बारे में कहता है कि, "यह गाँव तो अब रह रहा ही नहीं, जिधर देखता हूँ अजीब कुहराम है । सभी परेशान हैं, सभी दुखी ।"[78] गाँवों में अराजकता की-सी स्थिति पैदा हो गई है । पारस्परिक सौहार्द्र का वातावरण खत्म होता जा रहा है । "बस दुच्ची वारदातें रह गई हैं । चोरी, चमारी, आतनाई । खेत कट जाते हैं रातों-रात, मवेशी खूँटे पर से हाँक दिए जाते हैं दिन दहाड़े, पर कोई रपट नहीं, कोई पंचायत नहीं ।"[79] पंचायतें तो गुटबंदी की शिकार हो गई हैं । उन पर काबिज होकर लाभ उठाने की प्रवृत्ति ने दुश्मनी और हिंसा को जन्म दिया है । दलितों के चौधरी और नेता भ्रष्टाचार के शिकार हैं । अपने ही समुदाय का शोषण करते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" में चमारों के नेता चौधरी लच्छीराम पंचायत में जाने की फीस माँगते हैं । "जब ऐसी ही बात है तो चलूँगा । पर हमारी फीस तो आप जानते हैं न ?"[80] ऐसे घूसखोर चौधरियों से किसी जाति का कोई कल्याण नहीं हो सकता ।

---

78. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, 191
79. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 245
80. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 426

विपिन की नौकरी का समाचार देवनाथ बहुत उत्साहित होकर सुनाता है । "बात यह है चाचा कि विपिन बाबू प्रोफेसर हो गए ।"[81] इससे प्रतीत होता है कि गाँव के युवकों में भी शिक्षा के प्रति जागरूकता बढ़ी और उन्होंने विकास के अवसरों का लाभ उठाना शुरू कर दिया । इसी प्रकार "जल टूटता हुआ" में चन्द्रकांत के कलक्टर बन जाने की खबर पाकर लोग चकित रह जाते हैं । "कितने लोगों ने अविश्वास से कहा झूठ है, कितने लोग विस्मय से सतीश के घर की ओर आए कि देखें कलक्टर कैसा होता है ।"[82] उस पिछड़े हुए कछार में लोगों का विस्मय बहुत ही स्वाभाविक है । पर इस पिछड़ेपन से निकल कर युवकों का शैक्षिक विकास होता है, लेखक इस तथ्य की ओर संकेत करना चाहता है । पर यह तो मानना ही पड़ेगा कि "अलग-अलग वैतरणी" के करैता गाँव की अपेक्षा "जल टूटता हुआ" का तिवारीपुर गाँव ज्यादा पिछड़ा है । शायद इसीलिए विपिन के प्रोफेसर बनने पर किसी को विस्मय नहीं होता, जबकि चन्द्रकांत के कलक्टर बनने की खबर पाकर लोग तरह-तरह से आश्चर्य व्यक्त करते हैं ।

---

81. अलग-अलग वैतरणी - शिवप्रसाद सिंह, पृ. 480

82. जल टूटता हुआ - रामदरश मिश्र, पृ. 382

चौथा अध्याय

"पूर्वांचल की सामान्य दशा"

उत्तर प्रदेश का पूर्वी हिस्सा, जिसे आमतौर पर पूर्वांचल कहा जाता है, पश्चिमी उत्तरप्रदेश की अपेक्षा आर्थिक एवं औद्योगिक दृष्टि से ज्यादा पिछड़ा है । यहाँ की आम जनता गरीब है । जनसंख्या का घनत्व बहुत अधिक है । शहरीकरण की गति धीमी है और औद्योगिक विकास तो हुआ ही नहीं है । अधिक जनसंख्या के कारण जमीन के टुकड़े भी छोटे हैं । सिंचाई की समुचित व्यवस्था न होने के कारण पर्याप्त अन्न का उत्पादन भी नहीं हो पाता । इस पिछड़ेपन के लिए केन्द्र एवं राज्य सरकारें दोनों ही जिम्मेदार हैं ।

पूर्वांचल के ग्रामीण समाज में बहुत सारी जातियाँ रहती हैं किंतु इनमें दलितों की स्थिति काफी कमजोर है । सामाजिक दृष्टि से ये वर्ण-व्यवस्था के सबसे निचले पायदान पर रखे गए हैं । इनके पास जमीनें नहीं हैं जिन पर ये खेती कर सकें । मजदूरी इनकी आजीविका का मुख्य साधन है । आज़ादी के पहले ये बँधुवा मजदूर की तरह खेतों में काम करते थे । जबर्दस्ती इनसे बेगार करवाया जाता था । आज़ादी के बाद इस स्थिति में परिवर्तन आया । अब वे मजदूरी करने या न करने के लिए स्वतंत्र हो गए । शिवप्रसाद सिंह के उपन्यास "अलग-अलग वैतरणी" में दलित मजदूर झिनकू बंशी सिंह के यहाँ काम करने से इसलिए इनकार कर देता है कि वहाँ उसे बहुत कम मजदूरी पर अधिक से अधिक काम लिया जाता है और काम में तनिक ढिलाई बरतने पर अपमानित किया जाता है । इसी प्रकार रामदरश मिश्र के उपन्यास "जल टूटता हुआ" में जगपतिया ज़मींदार महीप सिंह के खिलाफ़त बगावत कर देता है । इससे स्पष्ट होता है कि आज़ादी के बाद खेतिहर मजदूरों ने बेगार करना बंद कर दिया और भूस्वामियों के जुल्म के खिलाफ गोलबंद होने लगे ।

आज़ादी के बाद दलितों में अत्यंत छोटा किंतु मलाईदार वर्ग तैयार होने लगा । पंचायत चुनावों के माध्यम से ग्राम स्तर पर भी इस वर्ग की

शुरूआत हो चुकी थी । कहने के लिए ये दलितों के नेता थे किंतु ये उन्हीं का शोषण करने लगे । "अलग अलग वैतरणी" में दलित नेता सुखदेव राम को ज़मींदार जैपाल सिंह के साथ मिलकर रिश्वत लेने की योजना बनाते हुए दिखाया गया है । इसी उपन्यास में चमारों के चौधुरी पंचायत में घूस लेकर आते दिखाए गए हैं । यह सम्पन्न दलित वर्ग अपने ही वर्ग के गरीब-मजदूरों के हितों की अनदेखी करने लगा और स्वयं धन एवं प्रतिष्ठा की अंधी दौड़ में फँस कर रह गया ।

पिछड़े वर्ग में कुछेक जातियों का आर्थिक एवं राजनीतिक दृष्टि से विकास हुआ । उनमें अहीर, कुर्मी और कोइरी प्रमुख हैं । इनमें अहीर राजनैतिक आर्थिक दृष्टि से आज़ादी के बाद ज्यादा मजबूत हुए । ज़मींदारी उन्मूलन के बाद इन्होंने ज़मीने बटोरनी शुरू कर दी. "अलग अलग वैतरणी" में देवी चौधुरी ने किस तरह गलत ढंग से खलील मियाँ की जमीन पर कब्जा कर लिया, इसे बहुत ही स्पष्ट ढंग से व्यक्त किया गया है । पिछड़े वर्ग में कुर्मी और कोइरी जैसी खेतिहर जातियों की स्थिति संतोषजनक कही जा सकती है परन्तु इस वर्ग की अन्य जातियों की आर्थिक-राजनीतिक स्थिति अत्यंत कमजोर है ।

गाँवों में ऊँची जातियों का एक प्रभावशाली तबका, जिसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, भूमिहार, कायस्थ एवं बनिया जाति के लोग शामिल हैं, राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से समृद्ध है । पहले यह धारणा थी कि ब्राह्मण अपनी आजीविका पोथियों से, क्षत्रिय तलवार से और कायस्थ कलम से अर्जित करता था, परन्तु अब ऐसा नहीं है । आधुनिकीकरण एवं पश्चिमीकरण के प्रभाव से इस धारणा में कोई दम नहीं रह गया है । यह उच्चवर्ग आजादी के पहले और बाद में भी उच्च सरकारी पदों, प्रशासन एवं राजनीति में छा

गया । "अलग अलग वैतरणी" और "जल टूटता हुआ" में बड़े सरकारी अफसर के रूप में ऊँची जाति के लोग ही दिखाई देते हैं । राजनीति में कालीप्रसाद पाण्डेय और महीप सिंह जैसे लोग छा जाते हैं ।

मुसलमानों में धार्मिक स्तर पर जाति प्रथा को स्वीकार नहीं किया गया है किंतु राजनीतिक एवं आर्थिक दृष्टि से इनमें भी भेदभाव पाया जाता है । शेख, सैयद, पठान, जुलाहा, दर्जी, तेली, नई आदि अनेक जातियाँ मुसलमानों में पाई जाती हैं किंतु खान-पान या उपासना के स्तर पर इनमें भेदभाव नहीं होता । वैसे शेख, सैयद और इस वर्ग की प्रभुत्व - शाली जातियाँ मानी जाती हैं । "अलग अलग वैतरणी" के खलील मियाँ पठान हैं जिनके पास काफी जमीन थी किंतु बाद में दैवी चौधुरी ने तिकड़म करके बीसों बीघे जमीन हड़प लिया ।

इस अध्ययन से एक और तथ्य उभरकर सामने आता है कि उच्च, मध्यम या निम्न वर्ग में जिन जातियों की संख्या अपेक्षाकृत ज्यादा है और जो राजनीतिक, आर्थिक एवं शैक्षिक दृष्टि से सम्पन्न हैं उनमें जातिवादी भावना ज्यादा पाई जाती है एवं इनमें राजनीतिक चेतना के विकास के कारण एकजुटता अधिक दिखाई देती है जबकि कम संख्या वाली अशिक्षित जातियों में जातिवाद का उतना प्रभाव नहीं देखा जाता और इनमें एकजुटता भी कम पाई जाती है । इस तरह आजादी के बाद जातियों का राजनीति के प्रभाव से ध्रुवीकरण हुआ और एक नई वर्ग चेतना ने जन्म लिया जिसका आधार सत्ता एवं आर्थिक प्रभुता के लिए संघर्ष करना है ।

संसदीय लोकतंत्र में पारम्परिक नेतृत्व का अस्तित्व खत्म हुआ । विभिन्न राजनीतिक दलों, खासतौर से कांग्रेस में पुराने ज़मींदार और सामंती तत्वों का प्रवेश हुआ, जिन्होंने सरकारी मशीनरी का अपने हित में उपयोग करना शुरू कर दिया और लोकतंत्र की मूल भावना को क्षति पहुँचायी । आजादी के पहले गाँवों में सत्ता का एकमात्र केन्द्र ज़मींदार हुआ करता था किंतु आज़ादी के बाद ज़मींदारी व्यवस्था खत्म होने के साथ ही इन ज़मींदारों का अस्तित्व संकट में पड़ गया । अब ये सत्ता के केन्द्र नहीं रहे वरन् कांग्रेस आदि पार्टियों के माध्यम से खुद सत्ता प्रतिष्ठानों में घुसने लगे । गाँवों में धनी किसानों का एक वर्ग उभरा जिसने, एक तरह से पुराने ज़मींदारों की जगह ले ली ।"अलग अलग वैतरणी" में जैपाल सिंह की ज़मींदारी टूटने के बाद सुरजू सिंह की हैसियत अचानक बढ़ गई । अब वे जैपाल सिंह को बार-बार टक्कर देने लगे । ज़मींदारी-उन्मूलन से भूस्वामियों की आर्थिक स्थिति में बहुत गिरावट आने लगी. इस स्थिति का धनी किसानों ने भरपूर फायदा उठाया । कुछ पुराने ज़मींदारों ने पंचायत-चुनाव में अपना भाग्य आजमाने की कोशिश की किंतु उन्हें सफलता कम ही मिली । "जल टूटता हुआ" में ज़मींदार महीप सिंह के उम्मीदवार को हार का सामना करना पड़ता है और "अलग अलग वैतरणी" में जैपाल सिंह अपनी नाजुक स्थिति को भाँप कर दलित नेता सुखदेव राम का समर्थन कर प्रतिष्ठा बचाने का प्रयास करते हैं । धनी किसान सुरजू सिंह के साथ भी निचली जाति के बहुत से लोग हैं । इस तरह पंचायत चुनावों में ऊँची जाति के लोगों ने निचली जातियों को ज्यादा से ज्यादा अपनी तरफ मिलाकर रखने की कोशिश की, ताकि उनके वोट प्राप्त किए जा सकें ।

ज़मींदारी-उन्मूलन से गाँव की गरीब जनता, मसलन - खेतिहर मजदूरों, दलितों एवं गरीब किसानों को राहत की साँस मयस्सर हुई ।

भूस्वामियों द्वारा इन पर जो तरह-तरह के अत्याचार किए जाते थे, उनमें कमी आई । इन गरीबों में अपने अस्तित्व के प्रति चेतना जागृत हुई । अपने अधिकारों को प्राप्त करने की ललक दिखाई देने लगी । इस नई चेतना के प्रादुर्भाव के कारण इस वर्ग ने ऊँची जातियों के अत्याचारों के खिलाफ संघर्ष की शुरूआत की । "अलग अलग वैतरणी" और "जल टूटता हुआ" इन दोनों ही उपन्यासों में दलितों एवं ठाकुरों के बीच संघर्ष की कई घटनाओं का वर्णन मिलता है । ज़मींदारी उन्मूलन के फलस्वरूप ज़मींदारों की बहुत सारी जमीनें छीन ली गईं । यह काम सरकारी कानून के तहत हुआ । जमीन पर उनके जोतदारों को मालिकाना हक मिला । लेकिन जिनके पास जमीन बिल्कुल नहीं थी, उन्हें तो कोई फायदा नहीं हुआ । बेगार, नज़राना और लगान की मनमानी वसूली जैसी कई दूषित परम्पराएँ समाप्त हो गईं । इन सब कारणों से क्षत्रियों की आर्थिक स्थिति पर यकायक चोट हुई, जिससे बहुत से ज़मींदार कमजोर होने लगे । "अलग अलग वैतरणी" में ज़मींदार जैपाल सिंह की स्थिति में निरंतर ह्रास के लक्षण दिखाई देते हैं । उनकी मृत्यु के पश्चात् स्थिति इतनी नाजुक हो जाती है कि पुलिस द्वारा गिरफ्तार किए गए बुझारथ सिंह को छुड़ाने के लिए रिश्वत के पैसे उपलब्ध नहीं होते । उधर "जल टूटता हुआ" में पैसे के अभाव में महीप सिंह (ज़मींदार) महाजन का कर्ज नहीं चुका पाते । इसी उपन्यास के दीनदयाल तिवारी (धनी किसान) की आर्थिक स्थिति निरंतर मजबूत होती जाती है । वैसे भी, आज़ादी के बाद आर्थिक, राजनैतिक, प्रशासनिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में एक तरफ क्षत्रियों की हालत कमजोर होती गई और ब्राह्मणों की स्थिति में निरंतर सुधार होने लगा । समाज में दलित एवं पिछड़े समुदाय में भी शिक्षा के प्रति ललक पैदा हुई किंतु आर्थिक कमजोरी के कारण उनका ठीक से विकास नहीं हो सका । बहुत से प्रतिभाशाली छात्रों ने बीच में ही पढ़ाई छोड़ दी । "अलग अलग वैतरणी" में सुरजभान नाम

का एक शिक्षित युवक है, जो दलित वर्ग से सम्बन्ध रखता है । और ऊँची जातियों के प्रति उसके मन में काफी क्षोभ एवं घृणा की भावना व्याप्त है । दलित स्त्रियों के प्रति ऊँची जातियों के दुर्व्यवहार के खिलाफ दलितों को संगठित होकर संघर्ष करने की जबर्दस्त वकालत करता है । वैसे तो संस्कृतीकरण की प्रक्रिया निरंतर चलती ही रहती है जिसके कारण निम्न वर्ग अपने उच्च वर्ग की जीवन-शैली और रीति-रिवाज अपनाने की कोशिश करता है । प्रो. एम. एन. श्रीनिवास लिखते हैं कि, "संस्कृतीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कोई नीच हिन्दू जाति या कोई जनजाति अथवा अन्य समूह, किसी उच्च और प्रायः द्विज जाति की दिशा में अपने रीति-रिवाज, कर्म काण्ड, विचारधारा और जीवन पद्धति को बदलता है । आमतौर पर ऐसे परिवर्तनों के बाद वह जाति, परम्परा से स्थानीय समाज द्वारा सोपान में जो स्थान मिला हुआ है, उससे ऊँचे स्थान का दावा करने लगती है ।"[1] मसलन् चारण पेशे से जुड़ी भट्ट जाति ने इस शताब्दी के शुरू में ब्राह्मण होने का दावा पेश किया था और बाद में उन्हें ब्राह्मण कोटि में मान्यता मिल गई । ऐसे ही बहुत सारी मध्यवर्गीय जातियाँ उच्च जाति होने का दावा पेश करती हैं किंतु समाज द्वारा उन्हें स्वीकृति नहीं मिल सकी है । यह बात इस सिलसिले में कही जा रही है कि पिछड़ी या दलित जातियों में जो सम्पन्न तबका उभरा है उसकी रीति-नीति उच्च वर्ग की ओर उन्मुख है । वह अपने ही समुदाय के गरीब वर्ग से स्वयं को श्रेष्ठ समझता है और उच्च वर्ग द्वारा मान्यता प्राप्त करने के लिए लालायित रहता है । "अलग अलग वैतरणी" में देवी चौधुरी का परिवार अपनी हैसियत को बढ़ा-चढ़ा कर पेश करता है । क्योंकि उसके पास काफी जमीन है और पैसा भी । देवी चौधुरी के माध्यम से लेखक ने

---

1. आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन - एम. एन. श्रीनिवासन, पृ. 21

स्पष्ट संकेत कर दिया है कि आजादी के बाद अहीरों की आर्थिक स्थिति में तेजी से बदलाव आना शुरू हो गया था । जबकि शिल्पी जातियों की स्थिति को विन्ध्येसरी लोहार के माध्यम से अत्यंत बदतर दिखाया गया है, जो खाने-खाने के लिए मोहताज दिखाई देता है ।

सन् 1948 में उत्तर प्रदेश पंचायत-राज कानून बनाया गया जिसमें सत्ता के विकेन्द्रीकरण की बात कही गई थी और ग्राम-पंचायतों को सत्ता की सबसे छोटी इकाई के रूप में स्वीकार किया गया था । इसके पहले सन् 1920 में अंग्रेजों ने ग्राम-पंचायतों के गठन की व्यवस्था की थी । किंतु इसमें ग्राम-पंचायत के सभापति और सदस्य मनोनीत होते थे । ये ग्राम-पंचायतें ज़मींदारों के प्रभाव से मुक्त नहीं थीं । आज़ादी के बाद जो नई पंचायत-राज व्यवस्था लागू हुई, उसमें गाँव के प्रत्येक वर्ग को हिस्सेदारी का मौका मिला । शुरू में, इन पंचायतों पर ज्यादातर पूर्व ज़मींदारों एवं धनी किसानों का ही दबदबा था जैसा कि शिवप्रसाद सिंह ने "अलग अलग वैतरणी" में दिखाया कि निम्न जाति का ग्राम सभापति सुखदेव राम किस तरह पूर्व ज़मींदार जैपाल सिंह के दबाव में काम करने को मजबूर होता है । इस नई राजनीतिक व्यवस्था का प्राथमिक उद्देश्य जनता की सहमति के आधार पर शक्ति-संरचना को लोकतांत्रिक स्वरूप प्रदान करना था । सैद्धांतिक रूप में इस व्यवस्था के अंतर्गत नेताओं का चुनाव उनकी वैयक्तिक योग्यता एवं कार्य-क्षमता के आधार पर होने की परिकल्पना की गई थी । किंतु ऐसा संभव नहीं हो सका । जाति, वर्ण, सम्प्रदाय की मानसिकता प्रबल हो गई । पंचायतों में सभी महत्त्वपूर्ण पदों पर ऊँची जाति के लोग आसीन हुए । प्रो. योगेन्द्र सिंह ने अपने एक लेख में जो आंकड़ा प्रस्तुत किया है उसके अनुसार ग्राम-पंचायतों में ऊँची जातियों ने 52.6% पदों पर कब्जा कर लिया जबकि इनकी आबादी सिर्फ 20.6% थी इसी प्रकार 25.4%

आबादी वाली मध्यवर्गीय जातियों को 15.7% स्थान तथा निम्न जातियों को, जिनकी आबादी 33% थी, 22.4% स्थान प्राप्त हुए ।[2] अपने इसी लेख में वे आगे कहते हैं कि 53.3% ग्राम-पंचायतों पर पूर्व ज़मींदारों या धनी किसानों का, 40.4% ग्राम पंचायतों पर मध्यवर्गीय किसानों और गरीब किसान एवं खेतिहर मजदूर वर्ग को सिर्फ 6.3% स्थान मिला ।[3] इस प्रवृत्ति से यह साफ जाहिर होता है कि आज़ादी के बाद, पंचायत-व्यवस्था लागू होने के बावजूद गाँवों की शक्ति-संरचना पर ऊँची जाति का वर्चस्व कायम रहा ।

---

§प्रसिद्ध समाजशास्त्री प्रो. योगेन्द्र सिंह ने साठ के दशक में पूर्वांचल के 8 गाँवों की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति एवं बदलते हुए सामाजिक-आर्थिक सम्बन्धों का एक सर्वेक्षण किया था. ये गाँव थे -- चौखड़ा §बस्ती§, महादेवा §गोरखपुर§, दुमाही §देवरिया§, नियंताबाद §बनारस§, इटौजा §लखनऊ और बेल्हा §गोंडा§ इनमें से पहले चार गाँवों में ज़मींदारी व्यवस्था थी तथा परवर्ती दो गाँवों में तालुकदारी व्यवस्था । उपर्युक्त आंकड़े उनके इसी अध्ययन पर आधारित हैं । प्रो. सिंह का लेख ए.आर. देसाई की पुस्तक में संगृहीत है ।§

2- Rural Sociology in India- A.R. Desai, Page- 720

3- Rural Sociology in India- A.R. Desai, Page- 720

इस तरह गाँवों में सर्वाधिक आबादी होने के बावजूद निम्न जातियों को इतना कम स्थान क्यों मिला ? इस बारे में प्रो. योगेन्द्र सिंह कहते हैं कि पूर्वांचल के गाँवों में ऊँची जातियों के शक्तिशाली होने का प्रमुख कारण आर्थिक है । ऊँची जातियों के पास जमीन ज्यादा है इसलिए आर्थिक रूप से उनकी स्थिति मजबूत है और यही आर्थिक सुदृढ़ता राजनीति में उनके प्रभुत्व-वर्चस्व का प्रमुख आधार है । हालांकि, कानूनी रूप से ज़मींदारी-उन्मूलन द्वारा ऊँची जातियों की प्रभुता खत्म कर दी गई, किंतु व्यावहारिक रूप में आज भी उनके वर्चस्व से इनकार नहीं किया जा सकता ।[4] इस प्रकार आजादी के बाद भी पुराने ज़मींदारों एवं काश्तकारों के बीच भारी अंतर बना रहा । पूर्वांचल के विभिन्न गाँवों का अध्ययन करने के बाद प्रो. योगेन्द्र सिंह ने अपने लेख में पुराने ज़मींदारों एवं काश्तकारों के बीच जमीन सम्बन्धी भारी अंतर को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ग्राम इटौजा में यह अंतराल 5.00 और 3 एकड़, बेल्हा में 5.00 और 1.1 एकड़, चौखड़ा में 25.6 और 1.8 एकड़, महादेवा में 5.00 और .03, दुमाही में 14.0 और 2.5 एकड़ तथा नियंताबाद में 17.00 और 3.50 एकड़ का है । इस तरह भूस्वामी और खेतिहर वर्ग के बीच विषमता की यह खाई कम से कम पाँच गुनी और ज्यादा से ज्यादा तिरसठ गुना पाई गई । जाति के आधार पर ऊँची जातियों के पास गाँव की कुल जमीन का 54.9% है जबकि गाँव की आबादी में उनका समावेश 26% पाया गया ।[5]

4- Rural Sociology in India- A.R. Desai, Page- 721

5- Rural Sociology in India- A.R. Desai, Page- 721

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उच्च वर्ग का गाँव के आर्थिक जगत पर किस तरह और कितना वर्चस्व बना हुआ है । यह भी देखने में आया कि निम्न जातियों एवं वर्ग समूहों में संगठित होकर ताकत हासिल करने की प्रतियोगिता बढ़ी है । यह प्रवृत्ति खासतौर से वर्ग-समूहों की अपेक्षा जातियों के पक्ष में ज्यादा सच है । "अलग अलग वैतरणी" और "जल टूटता हुआ" में भूस्वामियों के विरूद्ध दलितों के विद्रोह और संघर्ष को इस सन्दर्भ में उद्धृत किया जा सकता है ।

शिक्षा, रोजगार और ग्रामीण विकास के मामले में सरकार की निष्क्रियता ने गाँव के कमजोर वर्गों के उत्थान में बड़ी बाधा खड़ी कर दी । निम्न वर्ग के छात्र धनाभाव, स्वस्थ वातावरण एवं उचित निर्देशन के अभाव में शिक्षा से वंचित रह जाते हैं, आजादी मिलने के समय दलितों या कमजोर वर्गों में शिक्षा का लगभग पूरी तरह अभाव था । सत्तर के दशक में लिखे गए शिवप्रसाद सिंह के उपन्यास "अलग अलग वैतरणी" में अधिकांश शिक्षित चरित्र ऊँची जातियों के हैं । दलित वर्ग का सिर्फ सूरजभान शिक्षित होने का आभास-भर देता है । उसके चरित्र को ज्यादा उभारा नहीं गया है । इससे जाहिर होता है कि शिक्षा के प्रति दलितों एवं कमजोर वर्गों में जागरूकता आजादी मिलने के एक दशक बाद आती है ।

भूस्वामियों एवं छोटे किसानों के पारस्परिक सम्बन्धों में तनाव आने लगा और एक दूसरे के प्रति कटुता एवं घृणा की भावना प्रबल होने लगी । "अलग अलग वैतरणी" में बुझारथ और धरमू सिंह के बीच तनाव और कटुतापूर्ण सम्बन्धों को उद्धृत किया जा सकता है । इस संदर्भ में "जल टूटता हुआ" में भी महीप सिंह एवं दीनदयाल तिवारी के प्रति बिरजू और बलई तथा जगपतिया की घृणा को दर्ज किया जा सकता है । गाँव के गरीब किसान एवं मजदूर वर्ग में अपनी इज्जत-आबरू को लेकर एक तरह की चेतना का विकास

हुआ और यही कारण है कि इस चेतना को ठोकर मारने वाले उच्च वर्ग से इनका कभी-कभी टकराव भी शुरू हो गया । यह निम्न वर्ग चुपचाप निरीह बनकर अपनी बेइज्जती कराने के लिए तैयार नहीं है.

ग्राम-पंचायतों की निरर्थकता ने गाँवों में पनप रही गुटबंदी और ओछी राजनीति की ओर संकेत किया है। पारस्परिक सहयोग का भाव तो रहा नहीं । पंचायतों की लोकतांत्रिक प्रणाली का हनन होने लगा और वे ग्राम-प्रधानों की निजी सम्पत्ति के रूप में काम करने लगीं । सरकारी अनुदानों की बी. डी. ओ., सचिव एवं ग्राम प्रधान के बीच बंदर-बाँट शुरू हो गई । इस प्रकार भ्रष्टाचार को ग्रामीण स्तर पर रोप दिया गया ।

कुछ विद्वान् ग्राम-पंचायतों की असफलता के पीछे आर्थिक संसाधनों की कमी को एक महत्वपूर्ण कारण मानते हैं । यह सच भी है किंतु क्या आर्थिक स्वायत्तता मात्र से ही पंचायतों की कार्य प्रणाली में गुणात्मक सुधार हो जाएगा अथवा उनमें फैले भ्रष्टाचार का अंत हो सकेगा ? देखने में तो यह आता है कि सरकार द्वारा जो भी आर्थिक अनुदान ग्राम-पंचायतों को दिया जाता है उसका अधिकांश ग्राम-प्रधान और अधिकारी मिल कर खा जाते हैं । कुछ समाजशास्त्री पंचायतों को प्राप्त अधिकारों के क्रियान्वयन में अड़चनों का जिक्र करते हैं । प्रो. योगेन्द्र सिंह का विचार है कि, "ग्रामीणों को पंचायतों द्वारा कुछ कानूनी अधिकार तो अवश्य प्राप्त हुए किंतु साधनों के अभाव में उन्हें लागू नहीं किया जा सका ।"[6] यहां साधनों के अभाव से तात्पर्य है पंचायतों के पास प्रशासनिक अधिकारों की कमी, जिसके

---

6. Rural Sociology in India- A.R. Desai, Page- 578

कारण वह अपने फैसले अथवा कार्यक्रमों को ठीक ढंग से लागू नहीं कर पाती । किंतु इन सबके अतिरिक्त सबसे बड़ा कारण जनतांत्रिक भावना का अभाव है ।। जो ग्राम-पंचायतों को निरर्थक सिद्ध कर देता है । ग्राम प्रधान पंचायतों के सीमित अधिकारों एवं संसाधनों का जनता के व्यापक हित में उपयोग न कर स्वयं अथवा अपने गुट के लोगों के लिए करता है । उपन्यासकार शिवप्रसाद सिंह के दिमाग में कहीं न कहीं यह बात रही है जो गाँव को नारकीय स्तर पर पहुँचाने में सहायक सिद्ध हुई है । गाँवों में इतनी गुटबंदियों के चलते यदि पंचायतों को ज्यादा प्रशासनिक और वित्तीय अधिकार दिए गए तो उनके दुरूपयोग को कोई नहीं रोक सकता । यह कदम विकास की जगह विनाश को ही आमंत्रित करेगा ।

आज़ादी के बाद से ही ग्राम-प्रधानों का मुख्य पेशा थाने और तहसील पर दलाली करना, ग्राम-समाज की जमीन और पेड़ों को बेच देना बन गया था । आज तो यह प्रवृत्ति और ज्यादा बढ़ गई है । विभिन्न गुटों की लड़ाई में वह एक गुट की तरफ से पैरवी करते हुए भी पाया गया है । इन विकृतियों के परिप्रेक्ष्य में पंचायतों की निष्पक्ष एवं स्वस्थ भूमिका की उम्मीद करना बेमानी है । ज़मींदारी खत्म होने के बाद गाँवों में ज़मींदार सत्ता का केन्द्र नहीं रहा । पंचायत-व्यवस्था लागू होने से मध्यम या निम्न वर्ग के लोग भी सत्ता में भागीदारी पाने लगे । इस तरह परम्परागत शक्तियों का ह्रास और नई सामाजिक शक्तियों का उत्थान शुरू हुआ । इस नई प्रवृत्ति की शुरूआत होने के कारण निम्न वर्ग के सुखदेव राम (अलग अलग वैतरणी) गाँव के प्रधान बन पाते हैं । समाज के निम्न, मध्य वर्ग में सत्ता पाने की चेतना जागृत होने के फलस्वरूप ऊँची जातियों के साथ इनके सम्बन्धों में तनाव आने लगा । संक्रमण की इस स्थिति में कहीं-कहीं संघर्ष की स्थितियाँ भी पैदा हुई जैसाकि "जल टूटता हुआ" में भूस्वामी महीप सिंह और निम्न वर्ग के जगपतिया के बीच तनाव और संघर्ष की स्थिति पैदा हो जाती है । स्थिति की गंभीरता को

देख कर महीप सिंह को अपना कदम पीछे मोड़ना पड़ता है । इसी तरह "अलग अलग वैतरणी" में ठाकुरों और चमारों के बीच हिंसक संघर्ष और इस संघर्ष में भगत की हत्या को मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है । ये घटनाएँ निश्चित तौर पर निम्न वर्ग में उत्पन्न होने वाली चेतना की ओर इशारा करती हैं । यह चेतना उनमें प्रतिष्ठा एवं अधिकारों के प्रति एक सजग एवं सतर्क दृष्टि का विकास करती है और आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है । आज़ादी के बाद यह बदलाव शुरू हो गया था ।

उत्तर प्रदेश में प्रांतीय सरकार ने 1951 में ज़मींदारी उन्मूलन कानून बनाकर ज़मींदारी व्यवस्था को समाप्त कर दिया । इससे किसानों को कुछ राहत मिली और जोत पर उनको स्वामित्व का अधिकार प्राप्त हुआ । इधर ज़मींदारों ने इस सिलसिले में चतुराई से काम लिया और ज़मींदारी उन्मूलन के पहले ही किसानों से बहुत सारी जमीने छीन लीं । उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री चौधरी चरण सिंह ने लिखा है कि, "उत्तर प्रदेश को छोड़कर सारे देश में शिकमी काश्तकारों उन खेतिहारों को, जो सचमुच खेती करते थे लेकिन ज़मींदारों व पटवारियों के लालच की वजह से खसरा-खतौनी में गैर कानूनी काबिज दर्ज थे, बिना पूछताछ के दखल कर दिया गया । उत्तर प्रदेश में उनको स्थायी अधिकार दिए गए ।"[3] भारत के अन्य राज्यों में ऐसा नहीं हुआ । भूमि-सुधार कानूनों को उचित ढंग से लागू नहीं किया गया । उत्तर प्रदेश में ज़मींदारी उन्मूलन होने के कारण कोई विद्रोह या आन्दोलन नहीं हुआ जबकि बिहार, बंगाल या आंध्रप्रदेश जैसे राज्यों में नक्सलबाड़ी आंदोलन की शुरूआत हुई । इससे यह तो कहा ही जा सकता है कि सरकार में यदि इच्छा-शक्ति हो तो भूमि-सुधार किए जा सकते हैं । भूमि सुधारों की दिशा में उत्तरप्रदेश

---

3. भारत की अर्थनीति - चरण सिंह, पृ. 22

सरकार की तरफ से एक पैमाना बनाया गया, जिसके तहत पाँच व्यक्तियों वाले परिवार के लिए प्रथम श्रेणी की जमीन की सीमा 40 एकड़ एवं आठ व्यक्तियों वाले परिवार के लिए 64 एकड़ तय की गई । यह व्यवस्था ज़मींदारों के सिलसिले में बनाई गई । भूमिहीनों के लिए किसी न्यूनतम सीमा का निर्धारण नहीं किया गया कि उनके लिए भी जमीन का एक निश्चित टुकड़ा मिल सके और यही सरकार की सबसे बड़ी कमजोरी थी, जिसने भूमि-सुधार कार्यक्रम को कोई न्यायसंगत एवं मुकम्मल स्वरूप प्रदान नहीं किया । ज़मींदारी उन्मूलन से उन काश्तकारों को फायदा मिला, जो लगान देकर खेती करते थे । भूमिहीन, दलित, मजदूरों की स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया । इनके पास पहले भी नहीं जमीन थी । सरकारी कानून के तहत ये काश्तकार नहीं थे कि इन्हें मालिकाना हक मिले । बल्कि देखा जाए तो दलित-मजदूरों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति के मुकाबले इनकी राजनीतिक चेतना का ज्यादा विकास हुआ । भूमिहीन ज्यादातर निम्नवर्ग के लोग हैं तो उच्चवर्ग के पास ज्यादा जमीन है । इस तरह दोनों के बीच गहरी खाई है । आज़ादी के बाद गांवों में जिस मध्य-वर्ग का उद्भव हुआ वह पूर्व काश्तकार हैं जिन्हें जमीन पर स्वामित्व का अधिकार मिल गया । उधर "जमीन जोतने वालों की है" जैसे नारों ने भूस्वामियों के बीच एक घबराहट का वातावरण उत्पन्न कर दिया था जिसके फलस्वरूप अधिकांश ज़मींदारों ने जमीन बेचना शुरू कर दिया या परिवार के सदस्यों के नाम कर दिया अथवा बड़े पैमाने पर जमीन बेनामी करार दिया । जबकि सरकार की ओर से भूमिहीनों के हितों को सुरक्षित रखने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया । ज़मींदारी-उन्मूलन अपने आप में पर्याप्त नहीं था । जब तक दूसरे उपायों से ज़मींदार के एकाधिकार को तोड़ा नहीं जाता । जमीन पहले सामंती प्रवृत्ति वाले ज़मींदार के हाथ

में थी, अब पूँजीवादी मानसिकता वाले भूस्वामियों एवं धनी किसानों के हाथों में स्थानांतरित हो गई है । ज़मींदारी उन्मूलन के बाद जमीन का बहुत कम हिस्सा ज़मींदारों के पंजे से छुड़ाया जा सका । अधिकांश जमीन पर तो उन्होंने विभिन्न तरीकों से अपना कब्जा बनाए रखा । इस बीच धनी किसानों का एक मजबूत वर्ग उभरकर सामने आया । पहले ज़मींदारों के सामने यह अपनी महत्वाकांक्षाएँ पूरी नहीं कर पाता था, परन्तु ज़मींदारी खत्म होने के बाद यह वर्ग गाँवों में महत्वपूर्ण स्थान बनाने में सफल हुआ । "अलग अलग वैतरणी" में पूर्व ज़मींदार जैपाल सिंह के खिलाफ एक धनी किसान सुरजू सिंह का चित्र खींचा गया है । सुरजू सिंह को जैपाल सिंह के समक्ष एक चुनौती के रूप में प्रस्तुत किया गया है । दरअसल यह चुनौती ज़मींदार के विरूद्ध धनी किसान की है जो आज़ादी के बाद मजबूती से उभरा । इसके बरअक्स बहुत से पूर्व ज़मींदारों की आर्थिक स्थिति में गिरावट आने लगी जैसा कि "अलग अलग वैतरणी" और "जल टूटता हुआ" के ज़मींदारों जैपाल सिंह एवं महीप सिंह के प्रसंग में दिखाया गया है । इसका कारण यह था कि उन ज़मींदारों की सामंती प्रभुता को बनाए रखने वाले साधनों का ज़मींदारी-उन्मूलन के साथ अंत हो गया इधर ज़मींदारों और किसानों के बीच रिश्तों में भी बदलाव आने लगा और धनी किसानों का तेजी से विकास शुरू हो गया । इनमें खानदान की प्रतिष्ठा के नाम पर स्वयं को बर्बाद कर देने वाला पागलपन नहीं था बल्कि समय की नब्ज को पहचान कर अपना स्वार्थ सिद्ध कर लेने की चालाकी भरी हुई थी । जैसे "जल टूटता हुआ" में दीनदयाल को धनी किसान के रूप में चित्रित किया गया है । जो निहायत धूर्त व गिरे हुए चरित्र का आदमी है । दूसरों की जमीन हड़पना, परायी स्त्रियों के साथ यौन-सम्बन्ध रखना तथा दलाली जैसे काम उसके लिए आम बात है । "अलग अलग वैतरणी" के धनी किसान सूरजू सिंह भी दलित स्त्री से नाजायज सम्बन्ध रखते हैं और रंगे हाथ पकड़ लिए जाते हैं । इससे यह संकेत मिलता है कि धनी किसानों का यह नया

वर्ग, जिसने आजादी के बाद अपनी स्थिति काफी मजबूत कर ली, अपनी सोच एवं चरित्र में पुराने ज़मींदारों का बहुत प्रभाव ग्रहण कर लिया. दलितों एवं गरीब किसानों के बारे में इनके विचार बहुत अच्छे नहीं देखे जाते ।

पूर्वी उत्तर प्रदेश में ज़मींदारों एवं भूमिहीनों के बीच धनी एवं मध्यवर्गीय किसानों का एक बड़ा वर्ग है । ऐसा इस प्रदेश में भूमिसुधार कार्यक्रमों की कमोबेश कामयाबी के कारण ही संभव हो सका ।

ग्रामीण समाज में सबसे कमजोर स्थिति दलितों की है, अधिकांश मजदूर इसी वर्ग से आते हैं । गरीबी और सामंती अत्याचारों के कारण इन दलितों का पलायन शहरों की ओर बहुत पहले हो गया । तब गति धीमी थी । ज़मींदारों के चंगुल से बहुत कम लोग बाहर जा पाते थे । किंतु आज़ादी के बाद ज़मींदारों के चंगुल से छुटकारा मिलते ही दलित मजदूरों का तेजी से पलायन शुरू हुआ । वे रोजी-रोटी की तलाश में औद्योगिक शहरों की तरफ आकृष्ट हुए । कृषि क्षेत्र में पर्याप्त मजदूरी न मिलने और ऊँची जातियों द्वारा जोर-दबंदस्ती से परेशान होकर मजदूरों ने शहर की ओर रुख किया । गाँव से शहर तक की यात्रा तय करने वाला यह मजदूर वर्ग शहर की आपाधापी में खो गया-सा लगता है । औद्योगीकरण से सामाजिक गतिशीलता तो बढ़ी, किंतु सामाजिक विषमता में कोई मौलिक बदलाव नहीं आया । सामंती या पूँजीवादी, इन दोनों ही व्यवस्थाओं में गरीबों का शोषण होता है, उनके साथ अन्याय किया जाता है और उनकी इज्जत-आबरू का मजाक उड़ाया जाता है, इस सत्य से इनकार नहीं किया जा सकता ।

ज़मींदारी-उन्मूलन के साथ ही भूस्वामियों का सदियों से कृषि-व्यवस्था पर चला आ रहा वर्चस्व समाप्त हो गया । इसकी जगह धनी

एवं मध्यवर्गीय किसानों को ज्यादा फायदा मिलना शुरू हुआ । क्योंकि ये स्वयं कृषि कार्यों में लग गए और नए-नए साधनों का उपयोग करने लगे, इस प्रकार परम्परागत ज़मींदार जो प्रायः राजपूत, भूमिहार या ब्राह्मण हुआ करते थे, आर्थिक प्रतिस्पर्धा में मध्यवर्गीय जातियों — कुर्मी, कोइरी, अहीर से पिछड़ने लगे । ऐसी स्थिति में सामंती परिवारों की शक्ति में लगातार गिरावट आने लगी । गांवों में जाति-संरचना, व्यावसायिक-संरचना एवं आर्थिक-संरचना में निरंतर परिवर्तन हो रहा है । अंग्रेजी राज के दौरान भी सामाजिक गतिशीलता, जीवन-पद्धति एवं आर्थिक स्थिति में परिवर्तन हुए किंतु इनकी गति धीमी एवं पहुँच बहुत कम थी । किंतु आज़ादी के बाद इन परिवर्तनों की भूमिका और प्रयोजन ने क्रांतिकारी मोड़ ले लिया । ऊँची जातियाँ पहले निचली जातियों की सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता को नियंत्रित करती थीं, परन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् उनका नियंत्रण ढीला पड़ने के कारण निम्न जातियों में गतिशीलता बढ़ गयी । समाज के इस निचले वर्ग में शिक्षा, राजनीति एवं प्रशासन की ओर उन्मुख होने की लालसा बढ़ी । उनकी जीवन-शैली और खान-पान में बदलाव आया और ऊँची जातियों के साथ प्रतिस्पर्धा की भावना बढ़ी ।

गाँवों में जाति-पंचायतों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है । ये पंचायतें किसान एवं सेवक जातियों के सामाजिक जीवन में जबर्दस्त भूमिका अदा करती रही हैं । इनमें विवाह, तलाक, अवैध यौन-सम्बन्धों तथा सम्पत्ति के वितरण से सम्बन्धित मामलों का निपटारा होता रहा है । "अलग अलग वैतरणी" में सुगनी के साथ सुरजू सिंह के नाजायज सम्बन्ध को लेकर पंचायत बुलाये जाने का वर्णन मिलता है जिसमें कई चौधुरी शामिल होते हैं और इस मसले पर विचार करते हैं.पराधीन भारत में इन जाति-पंचायतों का वर्चस्व निर्विवाद था । आज़ादी के बाद ज्यों-ज्यों सामाजिक

गतिशीलता बढ़ती गई, इन पंचायतों की भूमिका एवं महत्त्व कम होने लगा । ये जाति पंचायतें प्रायः निम्न जातियों में पाई जाती थीं, ऊँची जातियों में नहीं । जाति-सम्बन्धी कट्टरता के बावजूद ब्राह्मण आदि ऊँची जातियों में आपसी समझदारी ज्यादा थी, इसलिए वे अपनी कमियों को सार्वजनिक नहीं करना चाहते थे ।

आधुनिकता के बावजूद सामाजिक स्तरीकरण व्यवस्था का पुराना ढाँचा अभी बरकरार है । ऊँच-नीच, छुआछूत जैसी धारणा खत्म नहीं हुई है । ऊँची जातियों का सामाजिक-शक्ति स्वरूप पर आधिपत्य विद्यमान है, पर घुसपैठ जारी है । निम्न एवं मध्यवर्गीय जातियाँ संगठित होकर इनका मुकाबला करने के लिए तैयार हो गई हैं । इस तरह सामाजिक-व्यवस्था में लगातार कुछ-न-कुछ बदलाव आ रहा है । ज़मींदारी-उन्मूलन के बाद ज़मींदारों और किसानों एवं ज़मींदारों एवं मजदूरों के सम्बन्धों में भारी बदलाव दिखाई देता है । लगभग अधिकांश जातियाँ राजनीतिक-सामाजिक-आर्थिक वर्चस्व की लड़ाई में अपना पारम्परिक व्यवसाय छोड़ती जा रही हैं । ऊँची जातियों में तो यह काफी पहले शुरू हो गया था, परन्तु अब निचली जातियों में भी यह प्रवृत्ति तेजी से परिलक्षित होने लगी है ।

अंग्रेजों ने अपने शासन-काल में भारत में एक राजनीतिक, प्रशासनिक एवं विधायी प्रणाली को आकार दिया, जिसके गर्भ से आधुनिक राजनीतिक विचारधारा की शुरूआत हुई. आज़ादी के पहले कांग्रेस एक आंदोलन थी, किंतु सत्ता की बागडोर संभालते ही शुद्ध राजनीतिक पार्टी का चरित्र ग्रहण कर लेती है । इसका मुक्ति-आंदोलन वाला तेवर खत्म हो गया । तब इसका कट्टर विरोध करने वाली सामंती शक्तियाँ इसमें समाहित होने लगीं । इस प्रकार शोषण और अत्याचार के देसी युग की शुरूआत हुई । सामंतों ने

उत्तर प्रदेश कांग्रेस पार्टी की बनावट को अव्यवस्थित किया जिससे सरकारी विभागों की कार्य क्षमता एवं स्थानीय प्रशासन की कार्य प्रणाली को भारी क्षति पहुँची । इन शक्तियों ने पुलिस एवं प्रशासन को सबसे ज्यादा प्रभावित किया तथा भ्रष्ट बना डाला । उत्तर प्रदेश कांग्रेस के राज्य एवं जिला स्तरीय नेतृत्व में ब्राह्मणों का वर्चस्व स्थापित हुआ और धीरे-धीरे यह धारणा बनने लगी कि कांग्रेस ब्राह्मणों की पार्टी है । आज़ादी के बाद गोविन्द बल्लभ पंत के नेतृत्व में प्रदेश में कांग्रेस की सरकार बनी, जिसमें चरण सिंह को राजस्वमंत्री बनाया गया । बाद में चरण सिंह ने ही ज़मींदारी उन्मूलन कानून के प्रमुख वास्तुकार की भूमिका निभाई । उन्होंने मध्यवर्गीय किसानों के हितों पर विशेष ध्यान दिया । यही कारण है कि अहीर, कुर्मी, कोइरी जैसी प्रमुख मध्यवर्गीय कृषक जातियों को शुरू में ही अपनी स्थिति में सुधार लाने का मौका मिला । चरण सिंह ने शहर की अपेक्षा पश्चिमी क्षेत्र के किसानों को ज्यादा महत्व दिया । पश्चिमी उत्तर प्रदेश की कृषि व्यवस्था को मूलभूत सुविधाएँ प्रदान कर उसे उन्नत बनाने का श्रेय चरण सिंह को है । चरण सिंह की इस भेदभाव की प्रवृत्ति के कारण पूर्वी एवं पश्चिमी हिस्से में भारी अंतर दिखाई देता है । इस प्रवृत्ति के कारण पूर्वी उत्तर प्रदेश की कृषि एवं औद्योगिक विकास पर बुरा असर पड़ा और यह अंचल पश्चिम की अपेक्षा ज्यादा पिछड़ गया ।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि (पूर्वी उत्तर प्रदेश) पूर्वांचल प्रदेश के अन्य भागों की तुलना में ज्यादा पिछड़ा है । यहाँ औद्योगिक एवं कृषि क्षेत्र में विकास की संभावनाएँ तो हैं किंतु मूलभूत सुविधाओं का अभाव है । इससे इस क्षेत्र का आर्थिक विकास भी बाधित हुआ है । केन्द्र एवं राज्य सरकारों ने पूर्वांचल में कृषि एवं उद्योगों के विकास पर ध्यान नहीं दिया । सरकार के उपेक्षित दृष्टिकोण के कारण इस क्षेत्र का विकास संभव नहीं हो स

गाँवों में ऊँच-नीच का भेद-भाव अभी बरकरार है । पंचायतों में ऊँची जातियों का वर्चस्व है । प्राय: उच्च जातियाँ अपने फायदे के लिए निचली जातियों में फूट पैदाकर देती हैं और उन्हें एक दूसरे का दुश्मन बना देती हैं । शिक्षा का स्तर कोई ऊँचा नहीं है, दलितों में आर्थिक कारणों से अशिक्षा का स्तर बहुत ज्यादा है । हालांकि आज़ादी के बाद धीरे-धीरे उनमें शिक्षा के प्रति आकर्षण बढ़ा है किंतु अपनी दयनीय हालत के कारण वे बच्चों को उच्च शिक्षा नहीं दिला पाते । वैसे दलितों में एक छोटा-सा अभिजात किस्म का वर्ग उभरा है जो राजनीति एवं प्रशासन में अपनी जगह बनाने में कामयाब हुआ है । यह उच्च शिक्षा प्राप्त दलित वर्ग अपने ही समुदाय के बड़े हिस्से के हितों की अनदेखी करता रहा है ।

पूर्वांचल के ग्राम-समाज का समाजशास्त्रीय विवेचन करने के बाद हम पाते हैं कि रामदरश मिश्र एवं शिवप्रसाद सिंह ने अपने उपन्यासों -- "जल टूटता हुआ" और "अलग अलग वैतरणी" में जिन समस्याओं का जिक्र किया है वह वस्तुस्थिति के काफी करीब है, अर्थात उपन्यासकारों एवं समाज-शास्त्रियों द्वारा किए गए विश्लेषण में कोई विरोधाभास नहीं दिखाई देता ।

****

मूल्यांकन

"अलग-अलग वैतरणी" और "जल टूटता हुआ" स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास की महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं । ये उपन्यास पूर्वांचल (पूर्वी उत्तर प्रदेश) के ग्राम-जीवन पर आधारित हैं । इनमें आज़ादी के बाद ग्रामीण जीवन में आए विभिन्न परिवर्तनों को रेखांकित किया गया है । पर गाँव के बारे में दोनों उपन्यासों का दृष्टिकोण भिन्न है । शिवप्रसाद सिंह के अनुसार गाँव पढ़े-लिखे, समझदार एवं संवेदनशील लोगों के रहने लायक नहीं रह गए हैं । गाँवों का समुचित विकास न होने के अलावा उनमें कई तरह की विकृतियाँ आ गई हैं, जो पहले नहीं थीं । क्षुद्र राजनीति एवं गुटबंदी के कारण शिक्षित व्यक्ति का गाँव में रहना दूभर हो गया है । "अलग-अलग वैतरणी" का गाँव सड़ाँध से भर चुका है । शायद इसीलिए शहरों में पढ़े-लिखे युवक ग्राम-सुधार की भावना से प्रेरित होकर गाँव वापस आते हैं, पर कुछ ही दिनों में घुटन और कुंठा से पीड़ित होकर शहर चले जाते हैं । "जल टूटता हुआ" में गाँव के प्रति एक तरह का मोह दिखाई पड़ता है । युवा पीढ़ी अर्थोपार्जन के लिए शहर जाती है पर शहर की गंदी बस्तियों, तंगहाली, बीमारी और अजनबीपन से आक्रांत होकर गाँव लौट आती है । उसे गाँव में ही मानसिक शांति मिलती है । गाँव की मिट्टी, सगे-सम्बन्धी, व्रत-त्यौहार इन युवकों को शहर से खींच लाते हैं । जबकि "अलग-अलग वैतरणी" के शिक्षित युवक कस्बों और शहरों में मानसिक शांति की तलाश करते हैं । यहाँ शहर इन युवकों को अपनी ओर आकर्षित करता है । इस तरह, इन उपन्यासों के माध्यम से शिवप्रसाद सिंह एवं रामदरश मिश्र के अलग-अलग दृष्टिकोण का परिचय मिलता है ।

ज़मींदारों के सन्दर्भ में दोनों उपन्यासकारों के दृष्टिकोण में अंतर दिखाई देता है । "अलग-अलग वैतरणी" के ज़मींदार जैपाल सिंह स्वयं को

आज़ादी के बाद की परिस्थितियों के अनुरूप बदल लेते हैं । वह पुरानी अकड़ की जगह चतुराई भरी विनम्रता से काम लेने लगते हैं । जबकि "जल टूटता हुआ" के ज़मींदार महीप सिंह की पुरानी अकड़ बरकरार है । उसके व्यवहार में लोच नहीं आती, इसी कारण उसे बार-बार निचली जातियों से चुनौती मिलती रहती है । महीप सिंह के सामंती आचरण में कहीं कोई परिवर्तन नहीं दिखाई देता । ज़मींदार के बारे में दोनों लेखकों के विचारों में यही अंतर है । वैसे देखा जाए तो आज़ादी के बाद के परिवर्तन को शिवप्रसाद सिंह ज्यादा बारीकी से समझते हैं और यथार्थ वर्णन करते हैं । जबकि रामदरश मिश्र कहीं-कहीं ज्यादा भावुक हो जाते हैं । रामदरश मिश्र गाँव को जिस हसरत भरी नज़र से देखते हैं वैसी भावुकता शिवप्रसाद सिंह के यहाँ नहीं मिलती । रामदरश मिश्र गाँवों के विकास में सरकारी अफसरों की भूमिका को ज्यादा महत्व देते हैं । इस लिहाज से "जल टूटता हुआ" में उन्होंने एक आई. ए. एस. अफसर चंद्रकांत के चरित्र को बड़ी संजीदगी से गढ़ा है और चन्द्रकांत को पुराने साथियों से बहुत आत्मीयता के साथ मिलते-जुलते दिखाया है । चन्द्रकांत पर उसके बड़े भाई सतीश को गर्व होता है कि वह गाँव के लिए चन्द्रकांत ही रहेगा, कलक्टर नहीं । पर शिवप्रसाद सिंह इस भावुकता के चक्कर में नहीं पड़ते । सरकारी अफसरों द्वारा गाँव का सुधार होने में उनकी आस्था नहीं है ।

"अलग-अलग वैतरणी" में शिवप्रसाद सिंह धनी किसान को ज़मींदार के मुख्य प्रतिद्वन्द्वी के रूप में दिखाते हैं । धनी किसान और दूसरे वर्गों -- गरीब किसान, मजदूर अथवा दलितों के बीच टकराव की किसी विशेष स्थिति को रेखांकित नहीं किया गया है । बल्कि इनके यहाँ धनी किसान गाँव के अन्य वर्गों के साथ मिलकर रहना चाहता है ताकि वह अपने प्रतिद्वन्द्वी ज़मींदार को शिकस्त दे सके । रामदरश मिश्र के "जल टूटता हुआ" में ज़मींदार और धनी किसान का एक मोर्चा है, जो गरीब किसानों, मजदूरों

एवं दलितों का शोषण करता है । यहाँ धनी किसान और ज़मींदार के बीच तनाव नहीं, सामंजस्य है । दोनों गरीबों के खिलाफ हैं । पर वास्तविकता यह है कि आज़ादी के बाद ज़मींदारों की स्थिति में निरंतर गिरावट आने लगी और धनी किसान और मजबूती से उभरने लगे । बाद में उन्होंने एक तरह से ज़मींदारों की जगह ले ली । ऐसी स्थिति में ज़मींदारों और धनी किसानों के बीच टकराव पैदा होना कोई अस्वाभाविक नहीं है ।

"जल टूटता हुआ" का गाँव ठेठ कछार है, पिछड़ा हुआ और आधुनिक सुविधाओं से बिल्कुल वंचित । प्रत्येक वर्ष बाढ़ की विभीषिका से त्रस्त हो जाता है । "अलग-अलग वैतरणी" का गाँव इतना पिछड़ा नहीं है । इनका गाँव कस्बे से लगा हुआ है । स्कूल, सड़क आदि न्यूनतम सुविधाएँ प्राप्त हैं । "जल टूटता हुआ" में अशिक्षा, रूढ़िवादिता, परम्परा के प्रति मोह, जादू-टोना और ओझा-सोखा का चित्रण हुआ है जो उस क्षेत्र के पिछड़ेपन का सबूत है । "अलग-अलग वैतरणी" का इलाका इससे ज्यादा विकसित और आधुनिक है । दोनों उपन्यासों में स्थानीय विविधता के रंग दिखाई देते हैं ।

आज़ादी के बाद युवाओं में ग्राम-सुधार की प्रबल इच्छा दिखाई पड़ी । पर जब ये शिक्षित युवक गाँव में रहकर कुछ नया करना चाहते हैं, जड़ता को तोड़ना चाहते हैं, तो रूढ़िवादी-परम्परावादी जड़ समाज उनकी हँसी उड़ाता है । अंततः ये युवक गाँव की घुटन और विकृतियों का शिकार होकर शहर चले जाते हैं । "अलग-अलग वैतरणी" के शिक्षित युवकों के साथ ऐसा ही घटित होता है । पर "जल टूटता हुआ" में युवक गाँव में रहकर यहाँ की विकृतियों से लड़ता है ।

गरीब किसानों एवं मजदूरों की स्थिति तो सचमुच दयनीय है । पर दलितों में नई सामाजिक-राजनीतिक चेतना का उदय हुआ, जिसे दोनों उपन्यासकारों ने चित्रित किया है । आज़ादी के बाद दलित वर्ग भूस्वामी वर्ग का अत्याचार सहने को तैयार नहीं होता और यहीं दोनों के बीच टकराव की स्थिति पैदा होती है । भूस्वामी के खिलाफ दलित अपने को संगठित करते हैं । "अलग अलग वैतरणी" और "जल टूटता हुआ" दोनों ही उपन्यासों में ब्राह्मणवादी-सामंतवादी प्रवृत्ति के खिलाफ दलितों का संघर्ष दिखाया गया है । यह एक महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन का संकेत है ।

ज़मींदारों ने अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए प्रायः निचली जातियों से मेल-जोल की नीति अपनाई । "अलग-अलग वैतरणी" में ज़मींदार जैपाल सिंह निचली जाति के नेता सुखदेव राम से समझौता करते हैं । इसके दो कारण दिखाई देते हैं । पहला तो यह कि जैपाल सिंह अपने पुश्तैनी दुश्मन सुरजू सिंह को मुखिया के रूप में नहीं देखना चाहते और यह समझौता सुरजू की हार का कारण बन जाता है । दूसरा सुखदेव राम को अपना समर्थन देकर जैपाल सिंह हमेशा के लिए उन पर एहसान का बोझ लाद देते हैं, जिसका उपयोग वे भविष्य में करते हैं । "जल टूटता हुआ" का ज़मींदार हार जाता है, जिसका एक प्रमुख कारण निम्न जातियों से उसका कटुतापूर्ण सम्बन्ध है । जनता की नजरों में भूस्वामी वर्ग की प्रतिष्ठा काफी घट गई थी । इसलिए जनता से समझौता करने के अलावा इनके पास कोई दूसरा रास्ता नहीं था । थौंस का ज़माना बीत गया था । आज़ादी के बाद जो दलित नेता उभरकर सामने आए वे भी भ्रष्ट हो गए । "अलग-अलग वैतरणी" में ये दलित नेता पंचायतों में शामिल होने के लिए रिश्वत लेते हैं । अपनी ही जाति के गरीबों का शोषण करते हैं । थाने की दलाली करते हैं । इन उपन्यासों में अवैध सम्बन्धों का भी चित्रण मिलता है । प्रायः छोटी जाति की स्त्रियों के साथ ऊँची जाति के मर्दों का यौन सम्बन्ध उजागर हुआ है । इससे गाँवों में चल रहे अनैतिक

क्रिया-व्यापारों का संकेत मिलता है । इसके मूल में प्राय: गरीबी को माना जाता है । क्योंकि ऊँची जाति के पुरूष तरह-तरह के लालच देकर छोटी जाति की स्त्रियों को बहलाते-फुसलाते हैं और ये स्त्रियाँ भी लोभवश शौक पूरा करने के लिए इन मर्दों की वासना का साधन बनती हैं । पर दलित अब इसे अपनी प्रतिष्ठा का सवाल मानने लगे हैं । इसी प्रश्न को लेकर "अलग-अलग वैतरणी" में ठाकुरों और चमारों के बीच मार-पीट हो जाती है ।

राजनीति और प्रशासन में व्याप्त घोर भ्रष्टाचार के कारण गाँवों का समुचित विकास नहीं हो सका । स्थानीय स्तर पर भी ग्राम प्रधान से लेकर बी. डी. ओ., पटवारी, दरोगा, चकबंदी अधिकारी सभी भ्रष्टाचार में शामिल हैं । इस भ्रष्टाचार का चित्रण दोनों ही उपन्यासों में मिलता है । ग्रामीण जीवन में आ रही गिरावट का एक कारण शिक्षित युवाओं का गाँव से पलायन है । "अलग-अलग वैतरणी" में देवनाथ और विपिन जैसे सुशिक्षित एवं ऊर्जावान युवक गाँव के विकृत वातावरण से त्रस्त होकर शहर चले जाते हैं । "जल टूटता हुआ" में सतीश जैसा ईमानदार एवं आदर्शवादी व्यक्ति ग्राम-सुधार के लिए प्रयत्न तो करता है पर दलबंदी, जातिवाद और पंचायत चुनाव के दौरान होने वाली दुरभिसंधियों के कारण जो वातावरण बनता है, उसमें किसी भी प्रगतिशील, ऊर्जावान एवं ईमानदार आदमी का रहना बहुत दुष्कर हो गया है ।

आजादी के बाद दलितों-मजदूरों ने बड़ी संख्या में शहर की ओर रूख किया । गाँव में काम के अवसर कम होने के कारण उनके सामने अस्तित्व का संकट प्रमुख था । शहरों में जाकर वे कल-कारखानों में मजदूरी करने लगे । अब तो इसमें और तेजी आई है । गाँव में रहने वाले खेतिहर मजदूर अब

स्वतंत्र हैं । किसी का उन पर दबाव नहीं है । पर गरीब किसान की स्थिति दयनीय है । वे न तो पूरी तरह किसान हैं, न ही मजदूर बन पाते हैं । उस थोड़ी-सी खेती से बंधकर गरीबी का बोझ ढो रहे हैं ।

बूढ़ों की स्थिति भी चिंतनीय है । संयुक्त परिवार का टूटना इन लोगों के लिए ज्यादाकष्टदायी सिद्ध हो रहा है । युवा पीढ़ी शहरों की ओर भाग रही है और ये बेचारे गाँव में अकेले रह जाते हैं । नई पीढ़ी से उनका वैचारिक टकराव जगजाहिर है । नई पीढ़ी आमतौर पर बूढ़ों को अहमियत नहीं देती ।

उपन्यासकारों ने साम्प्रदायिक समस्या पर कुछ कम ही ध्यान दिया है । "अलग-अलग वैतरणी" के खलील मियाँ का देवी चौधुरी द्वारा जमीन हड़प लिया जाना ग्रामीण जीवन की समरसता का एक दुखद पहलू है । जमीन से बेदखल कर दिए जाने के बाद खलील मियाँ का विश्वास डगमगाने लगता है और वे ससुराल चले जाते हैं । "जल टूटता हुआ" में एक मुस्लिम लड़के की कांग्रेसी नेता द्वारा हत्या कराये जाने का चित्रण मिलता है, जिससे कांग्रेसी राजनीति के घिनौने साम्प्रदायिक स्वरूप का रहस्य उजागर हो जाता है ।

उपर्युक्त दोनों उपन्यासों के तुलनात्मक अध्ययन से आजादी के बाद ग्रामीण-जीवन में आए महत्वपूर्ण परिवर्तनों की झलक मिलती है । गाँव के बारे में शिवप्रसाद सिंह की दृष्टि में ज्यादा गहराई और यथार्थ है । उनमें एक बेवाकीपन है जबकि रामदरश मिश्र गाँव के प्रति भावुक प्रतीत होते हैं । और ग्रामीण विकास के प्रति जरूरत से ज्यादा आशावान दिखाई देते हैं ।

****

अनुक्रमणिका

1. आधार ग्रंथ

1. शिवप्रसाद सिंह — अलग-अलग वैतरणी
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
प्र. सं. 1967

2. रामदरश मिश्र — जल टूटता हुआ
नेशनल पब्लिशिंग हाउस
नई दिल्ली, प्र. सं. 1969

(2) सहायक ग्रंथ (हिन्दी)

1. विवेकी राय — हिन्दी उपन्यास : उत्तरशती की उपलब्धियाँ
राजीव प्रकाशन, इलाहाबाद
प्र. सं. 1983

2. विवेकी राय — स्वातंत्र्योत्तर कथा साहित्य और ग्राम-जीवन
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
प्र. सं. 1974

3. विवेकी राय — आधुनिक उपन्यास : विविध आयाम
अनिल प्रकाशन, इलाहाबाद
प्र. सं. 1990

4. चन्द्रकांत बांदिवडेकर — उपन्यास : स्थिति एवं गति
पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली
प्र. सं. 1977

5. चन्द्रकांत बांदिवडेकर — आधुनिक हिन्दी उपन्यास : सृजन और आलोचना
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
प्र. सं. 1985

6. भीष्म साहनी — आधुनिक हिन्दी उपन्यास
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
प्र. सं. 1980

7. शिवप्रसाद सिंह — आधुनिक परिवेश और नव लेखन
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

8. रैल्फ फॉक्स — उपन्यास और लोक जीवन
पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस,
नई दिल्ली, प्र. सं. 1957

9. एम. एन. श्रीनिवास — आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
छठा सं. 1991

10. चरण सिंह — भारत की अर्थनीति
अखिल भारतीय किसान सम्मेलन,
नई दिल्ली, प्र. सं. 1979

11. विवेकी राय — समकालीन हिन्दी उपन्यास
राजीव प्रकाशन, इलाहाबाद
प्र. सं. 1987

अंग्रेजी-ग्रंथ

1. A.R.Desai — Rural Sociology in India
Popular Prakasham, Bombay, 1969

2. P.C.Joshi — Land Reforms in India : Trends & Perspectives
Allied Publication, New Delhi, 1982

3. K.Ishwaran — Change and Continuity in India's Villages
Columbia University Press, 1970

4. Paul R.Brass — Caste, Faction and Party in Indian Politics
Chanakya Publication, Delhi
Ist Edi., 1984

पत्रिकाएँ

1. सारिका — फरवरी 1979
2. पूर्वग्रह — जनवरी-फरवरी 1978
3. आलोचना — अक्तूबर-दिसम्बर 1974
4. साक्षात्कार — सितम्बर-नवम्बर 1978
5. धर्मयुग — अगस्त 1969
6. दस्तावेज — अक्टूबर-दिसम्बर 1991